पिंगल-प्रकाश

(सशोधित एव परिवर्द्धित सस्करण)

लेखक—

पं० रघुवरदयालु मिश्र, 'विशारद'

प्रकाशक—

रत्नाश्रम, आगरा।

म वार } १६३३ { मू० ७॥)

विषय-सूची

आत्म-निवेदन

श्री वीणापाणि भगवती भारती के पद-कमलों में यथा शक्ति अपनी श्रद्धांजलि चढ़ाना प्रत्येक भक्त का कर्त्तव्य है। अपने आप उस श्रद्धांजलि का परिचय देना एक प्रकार से नितान्त अनावश्यक है। पर परिचय देने की जब एक रूढ़ि सी चल पड़ी है तब उस पथ का पथिक बनना आवश्यक हो जाता है। इसी रूढ़ि का पालन करने के नाते मैं भी यहाँ प्रस्तुत पोथी के सम्बन्ध में थोड़े शब्दों में आत्म-निवेदन कर देता हूँ।

जब कि छन्दशास्त्र पर आज हिन्दी में अनेक पोथियाँ मौजूद हैं फिर नई पोथी की आवश्यकता क्यों हुई? यह प्रश्न उठना स्वाभाविक है। बात यह है कि मुझे छुटपन से ही पद्य भाग से प्रेम है। जब कुछ समझ आई तब, दोहा चौपाइयों जैसे सीधेसादे छन्दों में तुकबन्दियाँ गढ़ने लगा। धीरे धीरे साहस बढ़ता गया और सवैया, कवित्तों पर भी हाथ माँजने लगा। छन्द ठीक है या नहीं? शब्दों का प्रयोग ठीक हुआ है या नहीं? इन बातों से कोई सरोकार न था।

आगे चलकर प्रथमा और मध्यमा की सम्मेलन-परीक्षाएँ दीं। उत्तीर्ण भी हुआ। पर छन्दशास्त्र में प्रवेश न पा सका। कारण कि इस विषय के सीखने के उपयुक्त साधन नहीं मिल सके। जब 'साहित्य-रत्न' की तैयारी में लगा तब आवश्यकता हुई कि छन्दशास्त्र को भलीभाँति अध्ययन किया जाय। परीक्षा में 'भानु जी' का छन्द प्रभाकर था—जो आज भी है, उस का स्वाध्याय करने लगा। उस की परिभाषाएँ पद्य बद्ध होने से प्रत्यय प्रकरण कहीं तो

समझ में आ जाता और कहीं न आता, अत योग्य गुरु की तलाश में लगा। इधर 'तुलसी-साहित्य' का भी अध्ययन करना था। इस विषय मे विज्ञान और साहित्य के प्रसिद्ध विद्वान बाबू रामदास जी गौड का नाम सुन रखा था।

सौभाग्य से कानपुर के 'अखिल-भारतवर्षीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन' में सम्मिलित होने का अवसर मिला। वहाँ स्वर्गीय लाला भगवान दीन जी 'दीन' द्वारा श्री गौड जी से परिचय हुआ। मैंने उन से अपनी बात कही। शकर जी की कृपा से स्वीकृति मिल गई। सम्मेलन समाप्त होने पर मैं घर गया। थोड़े दिन में इटावे से काशी जा पहुँचा। कई महीने तक श्री गौड़ जी का ही अतिथि रहा। आगे चलकर उन्होंने म्युनिसिपल स्कूल में साहित्य का शिक्षक नियुक्त करा दिया। इस तरह निश्चिन्त होकर साहित्य का अध्ययन करने लगा।

आपने प्राचीन और आधुनिक पिंगल की अनेक पुस्तकों से मुझे छन्दशास्त्र पढाया। उस की बारीकियाँ समझाईं। प्रत्यय प्रकरण, जिसे लोग टाल दिया करते थे—भलीभाँति हृदयगम करा दिया। उस समय पिंगलसम्बन्धी अनेक बातें मैं ने नोट कर लीं। पढ चुकने के बाद इच्छा हुई कि मैं भी पिंगल पर एक पोथी लिखूँ जिस में नोट की हुई बातें आ जावें। और प्रत्यय-प्रकरण खूब खोल कर लिखूँ। इधर साहित्य पढाने में नये नये छन्द मिलने लगे जिन के लक्षण मिलने में कठिनाई होने लगी। साथ ही रहस्यवाद के प्रगाढ पंडित श्र० श्री प० लक्ष्मणनारायण जी 'गर्दे' के सत्सग से छायावाद की चरचा भी सामने आई। बस नामी छायावादी—रहस्यवादी—

रचनाओं में रुचि हुइ। उन के छन्दो के रहस्य का पता लगाया। इधर उर्दू, बँगला, मराठी आदि के छन्दों को भी हिन्दी में देखा तो दृढ़तम धारणा हो गई कि अब पिंगल पर जरूर एक पोथी लिखनी चाहिए। बस चुपचाप इस काम में लग गया। कुछ दिनों में प्रत्यय-प्रकरण तैयार हो गया।

सयोग से उन्हीं दिनों एक बार मेरे वयोवृद्ध भाइ अध्यापक **रामरत्न** जी काशी पधारे। 'पिंगल पर पोथी' लिखने की मैं ने उन से चरचा की अपने नोट दिखलाये, प्रत्यय प्रकरण उन्होंने बहुत पसद किया और कहा कि 'यह गद्य का युग है पद्य का नहीं।' इसलिए छन्दो की परिभाषाएँ तो सीधीसादी परिमार्जित गद्य में लिखो और उदाहरण अर्वाचीन और प्राचीन सुकवियों की ललित-रचनाओं से दो। पर साथ ही ध्यान रखो कि उदाहरण घोरशृगारी न हों। वे ऐसे हों कि जिन्हें माता, पिता और गुरुजन अपनी बहू-बेटियों तक को निस्सकोच पढ़ा सकें। आप की अमूल्य सम्मति से मेरा उत्साह और बढ गया और तनमन से इस काम म लग गया। बस प्रस्तुत पोथी की यह आरभिक आत्म कहानी है।

प्रस्तुत पोथी की रूप रेखा तैयार होने पर उसे श्री **गौड़** जी को दिखाया। उन्हों ने इस शैली को पसद किया और आज्ञा दी कि इस पोथी में आजतक के प्राय सभी छन्द आ जाने चाहिएँ। उन की आज्ञा शिरोधार्य कर मने परिवधित छन्द-वश-वृक्ष बनाया, जिसे उन्होंने स्वीकारकिया। बस उसी के आधार पर मैंने छन्दों का वर्गीकरण किया। जब पोथी तैयार हो गई तब मैंने श्री **गौड़** जी के सामने रख दी। उन्हों ने उसे ध्यान से सुना और पढ़ा भी, अनेक

स्थलों पर उपयुक्त संशोधन किये और टिप्पणियाँ भी दीं। उस के बाद प्रस्तुत पोथी महाकवि हरिऔध जी के सामने ले गया। उन्होंने भी सारी पोथी सुनी और अनेक स्थलों पर अपनी अमूल्य सम्मति और छन्द भी दिये। पीछे मे साहित्य के मर्मज्ञविद्वान और प्रसिद्ध समालोचक पं० रामचन्द्र जी शुक्ल के सामने पोथी रखी। पुस्तक देख कर आपने अपनी अमूल्य सम्मति और नये छन्द भी दिये। इन तीनों आचार्यों ने एक स्वर मे इस शैली को पसंद किया। फिर क्या था मेरा उत्साह और बढ़ गया। जब पोथी एक तरह से तैयार हो गई तब शिक्षा शैली के मर्मज्ञ अध्यापक रामरत्न जी को पोथी सौंप दी। उन्होंने आद्योपान्त पोथी पढ़ी। पोथी की भाषा का जहाँ तहाँ संशोधन किया, और उसे और भी परिवर्द्धित करने का आदेश दिया। उन की आज्ञा शिरोधार्य कर के मैंने पुस्तक को यह रूप दिया।

छन्दशास्त्र जैसे नीरस और कठिन विषय को सरस और सरल बनाने का मैं ने यथाशक्ति प्रयत्न किया है। उपर्युक्त वर्णित सभी बातों का इस में समावेश किया है। उदाहरण जहाँ तक हो सके है सरस और भावपूर्ण ही रखे है। घोरशृंगार नहीं आने दिया है। वीर, वात्सल्य करुणा और शान्त रस के अधिक उदाहरण है। प्रकृति-वर्णन पर भी अनेक पद हैं।

बँगला, मराठी अँग्रेजी आदि के प्रभाव से हिन्दी मे जो नये छन्द व्यवहृत होने लगे हैं उन सब के सोदाहरण लक्षण दिये है। उर्दू और मुक्तकाव्य पर अलग से भी चरचा की गई है। प्रसिद्ध छायावादी कवि प्राय जिन छन्दों का अत्यधिक प्रयोग करते है प्राय वे सब छन्द इसमें आ गये हैं।

प्रस्तारों की उपयोगिता और उनके जानने की परिपाटी सरल और सुबोध गद्य में विस्तार के साथ समझाने का प्रयत्न किया है। किन किन मुख्य छंदों में किस किस रस की रचना अधिक भावपूर्ण बन सकती है इस पर भी संक्षेप में विचार कर लिया गया है।

छन्दों को नया रूप देने में हमें स्वर्गीय महाकवि नाथूरामशंकरजी शर्मा की रचनाओं से विशेष प्रकाश मिला है। श्रद्धेय प० हरिशंकरजी शर्मा ने मुझ पर बड़ा अनुग्रह दिखलाया। स्वर्गीय महाकवि के 'अनुराग रत्न' की फाइल कापी उन्होंने मुझे देखने को दी। पुनर्मुद्रण न होने से यह ग्रंथरत्न बाजार में मिल नहीं रहा है।

जिन दिनों पिंगल प्रकाश आगरे में छप रही थी। उन दिनों एक दिन प्रोफेसर श्री बा० हरिहरनाथजी टंडन के दर्शन हुए। आपने पहले उल्लास को देखकर मुझे विशेष उत्साहित किया और अमूल्य परामर्श दिये। उपर्युक्त सहायता और सम्मतियों के फल स्वरूप यह पोथी लेकर मैं हिन्दी-जगत् के सामने आ सका हूँ एतदर्थ मैं आपका भी परम कृतज्ञ हूँ।

आचार्य त्रय गौडजी, हरिऔधजी, शुक्लजी तथा श्रद्धेय अध्यापकजी का मैं उसी भाव से कृतज्ञ हूँ जिस भाव से अपने गुरुजनों के प्रति छोटों को होना चाहिए। यदि आप लोग मुझे सहारा न देते तो मैं हिन्दी संसार के सामने शायद इस रूप में न आ पाता।

जिन आचार्यों के रीति-ग्रन्थों से इस पोथी के निर्माण में सहायता मिली है तथा जिन आचार्यों, महाकवि और सुकवियों की सुललित रचनाओं से इस पोथी में उदाहरण दिये गये हैं उन सब का मैं हृदय से

तथापि यदि इसको अच्छी तरह हर बातको समझ लेना और सब तरहके विचारोंको सुभीतेसे अच्छेसे अच्छे रूपमें बोल या लिखकर प्रकट करना इष्टहो तो हमें अपनी मातृभाषाकी भी शिक्षा और व्याकरण जाननेकी आवश्यकता पडेगी। अभ्याससे इसी तरह हम पद्यरचनाको भी पढ और समझ सकते हैं, जैसा कि रामचरित-मानस जैसे उत्तम कोटिके महाकाव्यको भी लोग प्राय समझ ही लेते हैं, मानसके अक्षरविज्ञान और शब्दविज्ञानको विधिवत् जान लेनेकी आवश्यकता नहीं पडती। फिर भी सभी तरहके अच्छे और शुद्ध पद्योंको भली-भाँति पढ और समझ सकनेके लिये कुछ थोडेसे छन्द.शास्त्रका ज्ञान तो परमावश्यक है। सुतरा, जो स्वय पद्यरचना करना चाहे उसके लिये तो इस विज्ञानका विधिवत् जानना अनिवार्य्य है। इसीलिये काव्यसाहित्यके रीतिग्रन्थोंमें शब्दशक्ति, भाव-भेद, रसभेद, अलकार आदि के साथही साथ छन्द शास्त्रकी शिक्षा भी अनिवार्य्य समझी जाती है।

यह तो सच है कि कविताका प्रथम आविर्भाव आदिकवि-के चोट खाये हुए हृदयसे हुआ है और आज भी हृदयहीन कभी कवि नहीं बन सकता। किन्तु हृदयसे निकलकर वाग्यत्रमें प्रवेश करके कविता जिस साँचेमें ढल जाती है, उसका उत्तरोत्तर विकास होता आया है और उसके रूपरग को सँवारने में आज लोकानुभव और रीतिज्ञान दोनों बडे सहायक हुए हैं। छन्द शास्त्र भी इसी बनावसँवार का साधन है।

परन्तु यह साँचा भी प्रदेशोंकी विविधतासे विविध हो गया है। हृदय की भाषा तो एक ही है, परन्तु साँचोंके भेदसे उसके प्रकट होनेके रूप विविध है।

देशकाल भेदसे उच्चारणमे भेद पड जाता है और इस उच्चारण भेदसे भी शब्दोंकी गति और अर्थमें अन्तर पड जाता है। जब इस अन्तरके कारण वेदोंमे ही शाखाए और प्रतिशाखाए बन गयी हैं तो लौकिक भाषाओंके लिये कहना ही क्या है। इसीलिये धीरेधीरे भारतकी प्रादेशिक भाषाओंमे भी उच्चारणके प्रभेद पड गये हैं। जहाँ मराठीमें संस्कृतके उपयुक्त वर्णिक और मात्रिक छन्दोंकी अधिक चाल है, वहाँ बँगलामे इनका समावेश ही असभव है। बँगलामें मात्राओंकी गणना चल नहीं सकती, क्योंकि वहाँ शब्दोंकी गति संस्कृतसे इतनी भिन्न हो गयी है कि जहाँ हिन्दीमें लघुको गुरु और गुरुको लघु उच्चारण करना अपवादस्वरूप है वहाँ बँगलामे यही नियम बन गया है। इसीलिये बँगलामे गणो या मात्राओंकी गणनाकी प्रथा उड गयी और वर्णों की गणनामात्र रह गयी है। ब्रजमडल में आज भी शब्दके अन्तिम अक्षरका स्वर पूरा पूरा कहा जाता है, ह्रस्वका लोप नहीं कर देते और उसके बदले हलन्त नहीं बोलते। उसीके उत्तर मेरठप्रदेशमें अन्तिम ह्रस्वका लोप तो नहीं करते परन्तु अन्तिम दीर्घोंको ह्रस्व कर दिया करते हैं। और अधिक उत्तर तथा पूरबके देशो में अन्तिम ह्रस्वका लोप करके उसके

स्थानमें हलन्त बोलते हैं। पहाड़ी कवियोंने तो इस प्रकारके लोकव्यवहारमें बरते जानेवाले शुद्ध उच्चारणके ही आधारपर हलन्तोंका प्रयोग करके संस्कृतके गणछन्दोंमे काव्य लिख डाले हैं। उर्दू के शेरोंमें ऐसी ही कठिनाइयाँ पड़तीं परन्तु फारसी अरबीके छन्दोके व्यवहारके साथही साथ उन्होंने उसके वजनोंसे काम लिया जिनमें मात्राओं और वर्णोंका पूरा समावेश हो जाता है। वजन ठीक वही चीज हैं, जो हमारे यहाँ गण हैं। "यगण" और "फऊलिन्" "रगण" और "फायलुन" एक ही हैं। हमारे छन्द शास्त्रमें अधिक वैज्ञानिक रीतिसे मात्राओंके पाँच और वर्णोंके आठ गण स्थिर करके कुल तेरह गणों या "वजनों"से काम लिया है। उर्दू वालोंने वजनोंमें वर्ण और मात्राका कोई भेद नहीं किया क्योंकि जिस वर्णमालाके हुरूफे तहज्जीके, आधारपर उनकी सारी कायनात है वह विदेशी और अवैज्ञानिक है, क्रमहीन और नियमहीन है उसमें वर्णिक और मात्रिक भेद अत्यन्त कठिन हैं। अंग्रेजी और बँगला दोनोंमें उच्चारणकी एक विशिष्ट गति है जिसे जोर देना कहते हैं, परन्तु जिसे "उदात्त" कहना ही अधिक वैज्ञानिक है। साधारण बोलचालमें भी उदात्त, अनुदात्त और स्वरित तीनों उच्चारणोंसे हम काम लेते रहते हैं परन्तु भाषाके व्याकरणों में किसीने इस विषयपर न तो ध्यान दिया है न अंग्रेजी कोषोंकी तरह "सिले[illegible]" [illegible]क्सेंट दि[illegible] हमे जरूरत पड़ी, क्योंकि [illegible]

और लिपि हमारी वर्त्तनीको सुसगत और सुबोध बनाती है "सिलेबिल"के व्यर्थ विभागका काम ही क्या है ? और जब सभी स्वरित हैं तो उदात्त अनुदात्तके चिह्नभेदमें प्रयोजन ही क्या है ? अंग्रेजीमें जैसे "फिलासफर" को "फिलऽसोफ़् फ़र" कहना अशुद्ध समझा जायगा उसी तरह बँगलामें "कलिकत्ता" कहकर हिन्दीकी तरह "कत्ता"पर जोर देना अशुद्ध माना जायगा। शुद्ध उच्चारण बगलामें "कोलिकाता' होगा जिसमें "कोली"पर ही अधिक जोर दिया जायगा। इस बातको कोषमें चिह्न देकर व्यक्त करनेकी आवश्यकता नहीं है। अन्य प्रदेशवाला भी सुनकर अभ्यास करके शुद्ध उच्चारण सीख लेगा।

पद्यरचनामें इस तरह छन्दोंके निर्म्माणके नियम सभी भाषाओंके एकसे नहीं हो सकते। उच्चारणकी परिपाटीके अनुसार पद्यके रूप भी प्रत्यक भाषाके लिये विशिष्ट होंगे। परन्तु वैज्ञानिक नियम तो ऐसे होने चाहियें जो ससारकी भाषामात्रपर प्रयुक्त हो सके। तभी तो हम छन्द शास्त्रको विज्ञान कह सकेंगे।

इस तरहके वैज्ञानिक नियमका आविष्कार जिस ऋषिने किया उनका नाम पिंगल था। यह नाग जातिके थे। इनके और नाम भी इसी बातकी सूचना देते हैं। कहते हैं कि गरुडजीने इन्हें खानेके लिये पकड़ा था। उनसे शास्त्रार्थ हुआ। पिंगलने प्रस्तारकी रीतियाँ गरुडजीको बतलायी। प्रस्तारके रूप अनन्त हैं। इन रूपोंके नियम बतलाये। फिर इसी शिक्षाके प्रसादसे

गरुडजीसे अभय पाकर पाताल चले गये। अंतिम छन्द जो इन्होंने कहा उसका नाम "भुजग-प्रयात" था। छद शास्त्रको इन्हींके नाम से "पैंगल" कहने लगे।

लोग प्रत्ययोंको बेकार समझते हैं, परन्तु प्रत्ययोंका समझना पद्यरचना वा पद्यके शाब्दिक ढाँचेको खडे करनेके वास्तविक तत्त्वको समझना है। जिसने एकबार इसके गणितको और तत्त्व को समझ लिया उसके लिये मनुष्य की वाणी-मात्रमें, फिर चाहे वह ससारके किसी कोनेकी क्यों न हो, पद्यार्थ अक्षरयोजनाका क्रम सरल हो गया। वह अंग्रेजीकी या युरोपीय किसी भाषाकी "प्रासोडी" और अरबी फारसी, आदिका "उरूज" बिना पढे इन भाषाओंके पद्यके लिये नियम निश्चय कर सकता है, पैंगलप्रत्ययोंके काँटेपर उन्हें तोलकर उनका ठीक मूल्य लगा सकता है। बिलकुल नये ढगके पद्य गढ सकता है। उनके नामकरण कर सकता है।

यह सच है कि नये ढगके पद्य वह भी गढ़ सकता है जिसको स्वरतालकी परख है, जो गा सकता है और जिसकी जिह्वा और कान छन्दरसका आस्वादन करना जानते हैं। जिस कविको पद्यरचनामें मात्रा या वर्णके गिननेकी आवश्यकता न पडे, छदकी गति और यतिके स्थानमें जिससे कभी चूक न हो, वह नये ढगके पद्य भी गढ ले सकेगा। परन्तु उसे पैंगलज्ञानके अभावमें यह न पता होगा जो पद्य गढा गया है वह एकदम अनूठा है अथवा पूर्वके आचार्य्योंने वैसा पद्य कभी लिखा है

और उस जातिका या वृत्तका नामकरण कर रखा है। अत रीतिका पूरा अनुशीलन किये विना वह भी नये ढगके छदके निम्मीणका अधिकारी नहीं है। उसे किसी जाननेवालेसे पूछना अर्थात् सीखना, पडेगा।

निदान अच्छे साहित्यिक होनेके लिये पैंगलशास्त्रका अध्ययन आवश्यक है और अच्छे कविके लिये तो अनिवार्य्य ही है। परतु यह खेदके साथ कहना पडता है कि छद शास्त्रका अध्ययन बहुत कम लोग करते हैं। अनेक अच्छी पद्यरचना करलेनेवाले भी इस विषयमें कोरे देखेगये हैं। कविसम्मेलनोंमे जो अपनी रचना सुनानेको लाते हैं उनमेंसे बहुत कम ऐसे होते हैं जिन्होंने विधिपूर्वक छद शास्त्र पढा है या जो किसी अच्छे आचार्य्यसे सशोधन कराके लाते हों। फल यह होता है कि हर अहम्मन्य कवि अपनी सडीगली जैसी ही हो सभी रचना सुनानेको उत्सुक होता है और ऊबे हुए सुननेवालोंको असगठित कविसम्मेलन में आनेका दड भोगना पड़ता है। आधुनिक रीतिग्रथोंतकमें गतिविहीन मनहरण देखनेमें आये हैं, और सम्मेलनोंमें तो इक्तीस अक्षरोंकी गिनतीका भी ध्यान रखना अनावश्यक समझा जाता है, गति और यतिकी तो बात ही न्यारी है।

यह शिकायत भी एक हद तक ठीक है कि "पिंगल बहुत कठिन है।" और वह कठिनाई पद्यमें परिभाषा होने से बढ जाती है। पैंगलशास्त्रकी प्रकृत कठिनाई प्रत्ययोंमें है। परि

भाषाकी कठिनाई तो गद्य से दूर हो जाती है । मेरे मित्र प० रघुवरदयालुजी ने इन दोनों कठिनाइयों का बडा अच्छा परिहार किया है । परिभाषाएं तो स्पष्ट गद्यमें दी ही गयी हैं। और प्रत्ययका प्रसग एक तो औरोंकी तरह आरंभमें नहीं छेडा है, अन्तमें दिया है, दूसरे उसे स्पष्ट और सरल गद्यमें विस्तारसे समझाया है। अबतक ऐसा सरल विवरण किसी पिंगलग्रन्थ में नहीं दिया गया है । साथ ही प्रस्तुत ग्रन्थमें आजतकके व्यवहृत सभी तरहके पद्योंका समावेश हुआ है और उसके उदाहरण भी आधुनिक कवियोंसे ही दिये हैं । अबतक इन विशेषताओंके साथ कोई पिंगलग्रंथ मेरे देखनेमें नहीं आया है। पिंगल-प्रकाशसे एक बडे अभावकी पूर्त्ति होती है । आशा है इससे छन्द शास्त्रके पढनेवाले पूरा लाभ उठावेंगे और लेखकके कठिन परिश्रमको सार्थक करेंगे ।

बड़ीपियरी, बनारस शहर।
विजया १०, १९९० } रामदास गौड़

ॐ

बनारस

२२-६-३३

मैं ने प० रघुनरदयाल मिश्र की बनाई पिंगल प्रकाश, नामक पुस्तक देखी । यह पुस्तक नये ढग से लिखी गई है, और लगभग उन सब छन्दों का वर्णन भी इस में कर दिया गया है, जो अन्य भाषाओं से आजकल हिन्दीमसार म गृहीत हैं । यह एक बहुत बडी विशेषता इस ग्रन्थ की है। यह पुस्तक सामयिक है, और सामयिकता पर दृष्टि रखकर ही इस की रचना की गई है, अतएव इस की उपयोगिता बढ गई है । ग्रन्थकार ने इस के निर्माण में बड़ा परिश्रम किया है, यह बात पुस्तक देखने से स्पष्ट हो जाती है । मेरा विचार है कि यह ग्रन्थ इस योग्य है, कि पिंगल पठन का प्रत्येक अनुरागी इस का आदर करे, और थोडे समय में इस से बहुत कुछ सीख ले । मैं ऐसी पुस्तक लिखने के लिये प० जी को धन्यवाद देता हूँ, और आशा करता हूँ, कि हिन्दीससार इस का उचित आदर करने में कदापि संकोच न करेगा । इस पुस्तक की रचना में ग्रन्थकार ने मुझ से भी समय समय पर उचित सम्मति ली है ।

—अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध'

बनारस
२४-६-३३

प० रघुवरदयालु मिश्र ने छन्द.शास्त्र पर 'पिंगल-प्रकाश' नाम का यह सर्वांगपूर्ण और समयोपयुक्त ग्रंथ लिख कर सचमुच बड़ा भारी काम किया है। पुराने पद्यवद्ध ग्रंथों से काम चलता न देख कर बा० जगन्नाथप्रसाद 'भानु' ने छन्द प्रभाकर की रचना की जो अब तक छात्रों का काम देता आ रहा था। पर गद्य में होने पर भी उसका ढंग पुराना है। दूसरी बात यह है कि हिन्दी-काव्य की वर्त्तमान गति का उसमें कुछ भी विचार नहीं किया है।

प० रघुवरदयालु जी ने अपने ग्रंथ की रचना नए ढंग पर की है। इसमें छन्दों के भेद, लक्षण आदि बहुत ही सुबोध और सरल प्रणाली से लिखे गए हैं और प्रस्तार का विषय भी बहुत ही स्पष्ट कर के समझाया गया है। छन्दों के कुछ विभाग नई पद्धति पर किए गए हैं। मात्रा मुक्तकों पर एक स्वतंत्र अध्याय ही है। छन्दों के नए नए योग, जो आधुनिक कवियों की रचनाओं में पाए जाते हैं, उदाहरण सहित दिखाए गए हैं। आजकल के 'स्वच्छन्द छन्दों' को भी मिश्र जी ने छन्दोविधान के शासन के भीतर कर के दिखा दिया है। उदाहरण उन्होंने आजकल के प्राय सब प्रसिद्ध कवियों की रचनाओं से दिए हैं जिससे आधुनिक काव्यक्षेत्र का विस्तृत परिचय प्रकट होता है। स्कूलों के अतिरिक्त विश्वविद्यालयों के छात्रों के लिए भी यह ग्रन्थ बड़ा उपयोगी होगा। वास्तव में हमारे छन्दों की अच्छी जानकारी इस ग्रन्थ से हो सकती है

—रामचन्द्र शुक्ल

छन्द सूची

पिंगल-प्रकाश

मगलाचरण

जो अभिषेक की बात सुनी,
तौ प्रसन्नता नेकु परी न दिखाई ।
औ बनबास की आयसु पै
नहिं रेख कछू दुख की तहँ आई ॥
जो दुख में न मलीन भई,
सुख में नहि जो कछु हू हरषाई ।
सो मुख-श्री रघुनन्दन की,
सुभ होहु हमें नित मगलदाई ॥

—श्रीवर

पिंगल-प्रकाश



पहला उल्लास

काव्य

काव्य क्या है? इस संबंध में विद्वानों के भिन्न भिन्न मत हैं। परन्तु भाव सबके एक ही हैं। सबके मतों का निष्कर्ष यही है कि "लोकोत्तर आनन्द देनेवाले रसात्मक वाक्य को काव्य कहते हैं।"

काव्य-भेद

काव्य रचना की दो शैलियाँ है। एक का नाम है 'गद्य शैली' और दूसरी का नाम है 'पद्य शैली'। संस्कृत में 'कादम्बरी', हिन्दी में इसका अनुवाद और अनेक मौलिक गद्य काव्य की रचनाएं हैं। आजकल 'गद्य-गीति' नाम से भी रचनाएं की जाने लगी हैं, ये गद्य काव्य हैं। पद्य-काव्य के

विषय में कहना ही क्या है? सारा प्राचीन साहित्य पद्य-शैली से ओतप्रोत है। रामायण, महाभारत आदि इनमें मुख्य हैं।

गद्य और पद्य

अब जानना यह है कि गद्य और पद्य कहते किसे हैं? साधारणतया "जिस रचना-शैली के वाक्य-समूहों में बोल-चाल का ही ढग बरता गया हो, अर्थात् जिस रचना के वाक्य समूहों मे व्याकरण के नियमो का पूर्णरूपेण पालन किया गया हो, यथा-स्थान विरामादि का भी प्रयोग किया गया हो, किन्तु उसमे मात्राओं या वर्णों का न, कोई नियमित क्रम हो और न नियमित सख्या और न यति-गति का ही बधन हो, वही गद्य है।" परन्तु "जिस रचना-शैली के वाक्य समूहा में यथाशक्ति व्याकरण के नियमों की रक्षा करते हुए मात्रा या वर्ण या दोनो का निश्चित क्रम या माप या सख्या हो और जिसमे यति, गति नियमित हो तथा चरणों की सख्या भी निश्चित हो वह पद्य है।"

छन्द और पिंगल

'छन्द' शब्द 'छदि' धातु से बना है, जिसका शब्दार्थ है—'आच्छादन करना' अर्थात् 'ढक लेना'। कहा जाता है कि आदि में मृत्यु-भय से कुछ देवताओं ने गायत्री आदि मत्रो मे अपने को ढक रखा था। इसी से ये मत्र छन्द कहलाये जाने लगे। इसीलिये इस शास्त्र को ही छन्द-शास्त्र कहने लगे। वेद के षडङ्गों (शिक्षा, निरुक्ति व्याकरण, ज्योतिष आदि) में छन्दशास्त्र एक अग माना गया है। कहा भी है कि—

'छन्द वेद को अंग है, कहैं मुनिन के वृन्द ।
या ते पढियतु प्रात ही, वरणे नाग फनिन्द ॥

'पिंगलच्छन्द सूत्रम्' के वृत्तिकार श्री हलायुध ने लिखा है—
'श्रीमन् पिंगल नागोक्त छन्द शास्त्र महोदधी ।'

\+ × + +

'पिंगलाचार्य्यसूत्रस्य मया वृत्तिर्विधास्यते'

इससे स्पष्ट है कि छन्दशास्त्र के निर्माता 'पिंगल' नाम के मुनि हैं, यही छन्दशास्त्र के आचार्य माने जाते हैं, इन्हीं के नाम पर छन्दशास्त्र को 'पिंगल' भी कहने लगे। यह भी कहा जाता है कि आप शेषावतार हैं, और यो भी 'पिंगल' का शब्दार्थ सर्प, नाग है, इसी से छन्द ग्रन्थों मे जहाँ तहाँ इन्हें, शेष, फणीश, अहिराज, पन्नगराज नामों से सबोधित किया है।

छन्द और उसकी विशेषताएं

'पद्य' शब्द 'छन्द' का प्राय पर्य्यायवाची शब्द ही माना जाता है। छन्द का पारिभाषिक रूप पद्य की व्याख्या मे बताया जा चुका है। अर्थात् "जिस वाक्य समूह में व्याकरण के नियमों की यथाशक्ति रक्षा करते हुए मात्रा या वर्ण या दोनों का निश्चित क्रम, माप या सख्या हो और यति, गति और चरणों की निश्चित व्यवस्था हो वह छन्द है।"

छन्द की अनेक विशेषताएं हैं। और मुख्य विशेषता यही है कि छन्दशास्त्र वेद का एक अंग है। कहा भी है—

"जैसे वेद विहीन द्विज, हीन लोक सो होय।
त्यो ही छन्दोज्ञान विन, कहैं सबै कवि लोय ॥"

सचमुच छन्दो की ऐसी ही महिमा है। छन्द सगीत का मुख्य अग है। और सगीत एक ऐसा विषय है जो प्राणीमात्र को प्रिय है। पद्य मे कोमल-कान्त कर्ण-प्रिय-पदावली रहती है, जो लोकोत्तर आनन्द-दायिनी होती है, फिर यह प्रिय क्यो न हो। इसके अतिरिक्त पद्यान्तर्गत 'अर्थ अमित अति आखर थोरे' वाले नियम का पूर्ण रूपेण निर्वाह किया जाता है। इससे बडे बडे विचारो की माला थोडे से शब्दो मे कठस्थ की जा सकती है। नीरस से नीरस विषय छन्द की चाशनी से मीठा बन जाता है और शीघ्र ही हृदयगम हो जाता है। पद्यमय वाक्यावली का मानव समाज पर शीघ्र प्रभाव पडता है। यही सब कारण हैं कि हमारे ऋषियो के सभी प्राचीन शास्त्र छन्दोबद्ध हैं। गद्य में सरसता, रमणीयता और ये विशेषताए लाना टेढी खीर है, विरलो का ही काम है।

छन्दोभग

छन्द की निश्चित मात्रा या वर्णों की न्यूनाधिकता से छन्द के पढने-सुनने में एक खटक सी पैदा हो जाती है जिसे छन्दोभग दोष कहते हैं। इस दोष से बहुत बचना चाहिये।

वर्ण और मात्रा

अकारादि जिनके खण्ड न हो सके वर्ण या अक्षर कहलाते

हैं। (अ=नहीं+क्षर=नाश) अर्थात् जिसका स्वरूप सदा एक रहे। यह अक्षर दो तरह के हैं—स्वर और व्यंजन।

जिन वर्णों का उच्चारण बिना किसी दूसरे वर्ण की सहायता के होता है वे स्वर कहलाते हैं, जैसे—अ, इ, उ[1] आदि। और जिन वर्णों का उच्चारण स्वरों की सहायता से होता है वे व्यंजन कहलाते हैं। जैसे—क, ख, ग, आदि।

प्रत्येक वर्ण के उच्चारण में जितना काल लगता है उसे मात्रा कहते हैं।

मात्रा भेद से अक्षर या वर्णों के दो और भेद हो जाते हैं—(१) ह्रस्व और (२) दीर्घ।

जिन वर्णों के उच्चारण में एक मात्रा काल लगता है वे सब ह्रस्व कहलाते हैं। यथा—अ इ, उ क, ल, स आदि, और जिन वर्णों के उच्चारण में दो मात्रा-काल लगता है वे सब दीर्घवर्ण कहलाते हैं। यथा—आ, ई, ए, ऋ आदि।[2]

१—अ, इ, उ, ऋ, ये चार मूलाक्षर हैं। आ, ई, ऊ आदि इन्हीं स्वरों के मेल से बने हैं, यथा—अ+अ=आ, इ+इ=ई, उ+उ=ऊ, इत्यादि।

२—जिन वर्णों पर आ, इ, ए, औ, आदि की मात्राएं लगती हैं वे वर्ण भी उसी मात्रा के उच्चारण के अनुसार ह्रस्व और दीर्घवर्ण कहलाते हैं, यथा—ह्रस्व क, कि और दीर्घ कू, को आदि।

लघु और गुरु *

छन्दशास्त्र मे ह्रस्व को लघु और दीर्घ को ही गुरु कहते हैं। अथवा यों कहिये कि पिंगल मे एक मात्रावाले वर्ण लघु और दो मात्रावाले वर्ण गुरु माने जाते हैं। लघु का चिन्ह [।] पूर्ण विराम के आकार का है और गुरु का चिन्ह (S) अंग्रेजी वर्ण 'एस्' के आकार का है। लघु चिन्ह से एक मात्रा का और गुरु चिन्ह से दो मात्राओं का बोध होता है।

यथा

S I I I I I S I I I I I S S I I I I I I I I I I I I S

'जे गुर चरन रेनु सिर धरहीं। ते जनु सकल विभव वस करहीं।'

ऊपर की अर्द्धाली के शब्दो पर गुरु-लघु के चिन्ह लगाने से तुरत गिनती हो जाती है कि इस छन्द के प्रत्येक चरण मे सोलह मात्राए है।

छन्दशास्त्र में गुरु-लघु का विशेष ध्यान रखना पडता है। इससे यह जानना भी बहुत जरूरी है कि कहाँ-कहाँ लघु आता है और कहाँ-कहाँ गुरु।

---

* कण्ठस्थ करने योग्य पद्य—

अ इ उ ऋ ये स्वर चारि अरु, सब व्यजन लघु मान।
आ ई ऊ ए ऐ ओ औ अं अः गुरु जान॥
लघु स्वर के सयुक्त जो, व्यजन सो लघु होय।
गुरु स्वर के सयुक्त जो, व्यजन गुरु हैं सोय॥

लघु—१ ह्रस्व स्वर लघु होते हैं और इन स्वरों के मेल से व्यजन भी लघु हो जाते हैं। जैसे—अ, इ, उ, ऋ, क, कि, कु, कृ आदि।

२ सम्पूर्ण व्यजन लघु हैं।

३ सयुक्ताक्षर के पहले का वर्ण जिस पर जोर नहीं पड़ता वह लघु ही माना जाता है। यथा 'कन्हैया' मे क' लघु है।

४ यदि गुरु वर्ण लघुवत पढा जाय तो उसकी गणना भी लघु वर्ण मे होती है। यथा—'जामवन्त के वचन सोहाए' मे 'सो' का उचारण लघुवत् 'सु' की तरह होने पर लघु माना गया।

गुरु—१ दीर्घ स्वर गुरु होते हे और उन स्वरों के मेल मे व्यजन भी गुरु हो जाते हैं। यथा—आ, ई ऊ, ए, ऐ, ओ, औ, अ, अ, का, की, कू, के, कै, को, कौ, क, क

अनुस्वार युत वर्ण जो, वा विसग युत जान।
स्वर अथवा व्यजन रहे, गुरू होत है तौन॥
सयोगी के आदि लघु, अरु पदान्त लघु कोइ।
कहुँ दीर्घ हू गनात है, कवि इच्छा जब होइ॥
यथा 'सरस्वति' से विनय, करत 'कन्हैया' टेर।
यहाँ 'सरस्वति' म 'र' गुरु, 'क' लघु 'कन्हैया' केर॥
'जु' लघु 'जुन्हैया' शब्द मे, 'द' लघु 'मोदप्रद' माहि।
सयोगी के आदि है, तो हू लघू गनाहि॥

छन्द की मात्राएं गिनना

किसी छन्द के प्रत्येक चरण मे कितनी मात्राए हैं, इसकी गणना इस प्रकार करनी चाहिये कि छन्द के प्रत्येक चरण के गुरु वर्णों पर गुरु का (ऽ) यह वक्राकार चिन्ह और लघुवर्णों पर लघु का खडी पाई जैसा पूर्ण विराम का (।) यह चिन्ह रखता जाय। सब वर्णों पर चिन्ह रखने के बाद गुरु चिन्हों की दो दो और लघु चिन्हों की एक एक मात्रा गिनता जाय और प्रत्येक चरण के आगे योगफल रखता जाय। बस प्रत्येक चरण की मात्राए ज्ञात हो जायँगी।

वर्णों पर गुरु लघु के चिन्ह रखते समय इस बात का भी ध्यान रखे रहे कि धारा-प्रवाह (गति) के साथ पढने मे जिस वर्ण का उच्चारण लघुवत् हो उस पर लघु और जिसका उच्चारण गुरुवत् हो उस पर गुरु चिन्ह ही रखे। "जैसा लिखा जाय वैसा पढा जाय" नागरी लिपिका यह नियम सर्वत्र लागू नहीं है। जैसे कि लिखा जाता है 'सोहाए' और पढ़ा जाता है 'सुहाए' इसलिये 'सो' पर लघु चिन्ह ही रखा जायगा।

यथा

ऽ।ऽ। ऽ।।। ।ऽऽ
(१) आमवत के वचन सोहाए। — १६ मात्राए

।। ।।ऽ। ।।। ।। ऽऽ
सुनि हनुमान हृदय अति भाए॥ — १६ मात्राए

ऽ ऽ।ऽऽ।।ऽ ।ऽऽ
(२) लीला तुम्हारी अति ही विचित्र। — १८ मात्राए

यति

छन्द शास्त्र में विराम का भी नियम होता है। छन्द का प्रत्येक चरण एक वा अधिक स्थानों में टूटता है। अथवा यों कहना चाहिये कि छन्द शास्त्र के अनुसार शब्द-योजना इस प्रकार से होती है कि पढते-पढते नियमित स्थान पर थोडा-सा रुककर तब आगे बढना पडता है। इसे ही विराम, विश्राम, या यति कहते हैं। संक्षेप में यति का लक्षण यह भी हो सकता है कि 'छन्द में जिह्वा के इष्ट विश्राम स्थान को यति कहते हैं।'

यथा

'भे प्रगट कृपाला, दीन दयाला, कौसल्या हितकारी।'

यह छन्द का एक चरण है जो कृपाला' और 'दयाला' पर टूटता है। यहाँ जिह्वा कुछ विश्राम लेती है। अतः इन शब्दों के आगे विराम-चिन्ह लगा दिये जाते हैं जो रुकने के लिये संकेत करते हैं।

यति-भंग

यति के स्थान पर यदि कोई शब्द विभाजित हो जाय तो वहाँ यति भंग दोष कहा जाता है। कवि को इस दोष से बचना चाहिये।

यथा

हर हरि केशव मदन सो,—हन घन स्याम सुजान।
ज्यों ब्रजवासी द्वारिका,—नाथ रटन दिन मान॥

'मदनमोहन' एक शब्द है। पर यहाँ 'मदन मो-' पहले चरण में और 'हन दूसरे चरण में चला गया। इसी तरह 'द्वारिकानाथ शब्द के भी दो टुकडे होकर दोनों चरणों में बँट गये हैं। यही यति-भगदोष है। यति भग दोष से पदों का अर्थ समझने में उलझन पड जाती है। यथाशक्ति इस दोष से बचना चाहिये।

गति

प्रत्येक छन्द में एक प्रकार की गति अर्थात् पाठ-प्रवाह का भी ढग होता है। इसका कोई मुख्यत नियम नहीं कहा जा सकता अभ्यास पर निर्भर है।

यथा

'लपन सकोप बचन जब बोले'

यह सोलह मात्रा की चौपाई है। इसकी गति ठीक है।

गति-भग

जहाँ छन्द के सब नियम पूरे-पूरे उतरते हैं परन्तु गति ठीक नहीं होती, वहाँ गति-भग दोष कहा जाता है।

यथा

'लपन जब सकोप बचन बोले'

इस चरण मे सोलह मात्राए तो हैं परन्तु चौपाई की गति ठीक नही है। इसलिये यहाँ गति-भग दोष माना जायगा। छन्द में मुख्य और प्रधान बात है उसकी गति का ठीक होना। लय छन्द का साँचा है, वह झट बतला देती है, कि छन्द की गति ठीक है अथवा नही। इसके अतिरिक्त गति का कोई मुख्य नियम नही कहा जा सकता।

गण

छन्द के चरणो की रचना गणो के अनुसार होती है। 'मात्रा या वर्णों के निश्चित समूह को गण कहते हैं'। गण दो प्रकार के होते हैं—मात्रिक और वर्णिक। आजकल लोग मात्रिक गणो से प्राय काम नही लेते। मात्रिक छन्दों मे इनकी आवश्यकता पडती है, इनकी जगह सख्या-सूचक शब्दो और वर्णिक गणो से ही काम निकाल लेते हैं, और काम निकल भी जाता है। परन्तु कहीं कहीं मात्रिक गणो की बडी आवश्यकता पड जाती है, यथा 'सोरठा' और 'रोला' छन्दो की यति और मात्राओं में समता है, परन्तु गति मे अन्तर है। मात्रिक गणो से इसका निर्णय ठीक हो जाता है। रोला के प्रसग मे इस बात को भलीभाँति स्पष्ट कर दिया गया है।

मात्रिक गण*

टगण, ठगण, डगण, ढगण और णगण यह पाँच भेद मात्रिक गणो के हैं जो क्रमश ६, ५, ४, ३ और २ मात्राओं के सूचक हैं। अर्थात् टगण से ६, ठगण से ५, डगण से ४, ढगण से ३ और णगण से २ मात्राओं का बोध होता है। प्रस्तारानुसार टगण के १३, ठगण के ८, डगण के ५, ढगण के ३ और णगण के २ रूप होते हैं। इस तरह कुल ३१ रूप होते हैं इन रूपों की कोई कोई सूरत वर्णिक गणो से कहीं कहीं मेल खा जाती है, यथा मगण से तात्पर्य ऽ ऽ ऽ तीन गुरु से है। यहाँ टगण के

---

*मात्राओं के निश्चित समूह को मात्रिक गण कहते है।

प्रथम रूप का नाम 'हर' है। जिसका रूप ऽऽऽ तीन गुरु है। नगण ।।। का रूप यहाँ ढगण के ।।। वलय या भाव नामक रूप से मिलता है। मात्रिक और वर्णिक गणों में बहुत अन्तर है। वर्णिक गण तीन वर्ण के होते हैं जिनके कुल रूप आठ ही है और मात्रिक के टगण से णगण तक ३१ रूप हैं। वर्णिक गण तीन लघु वर्ण तक के ही सूचक हैं और मात्रिक दो मात्रा तक के सूचक हैं।

किस नाम से गुरु लघु का कैसा क्रम समझना चाहिये यह आगे के इस नकशे में स्पष्ट है—

टगण (छः कल)*

क्रम संख्या,	रूप,	संज्ञा,	उदाहरण
१	ऽऽऽ	हर	सीताजी
२	।।ऽऽ	शशि	गिरधारी
३	।ऽ।ऽ	रवि	उमापती
४	ऽ।।ऽ	सुरपति	पारवती
५	।।।।ऽ	अहिप	जनकसुता
६	।ऽऽ।	अहि	कृपासिन्धु
७	ऽ।ऽ।	पकज	दीनबन्धु
८	।।।ऽ।	अज	जगतनाथ
९	ऽऽ।।	कलि	रावापति

* १ हर, २ ससि, ३ रवि, ४ सुरपति ५ अहिप, ६ पकज, ७ अज, ८ कलि, ९ चट।

१०	||S||	चन्द्र	मुरलीधर
११	|S|||	ध्रुव	रमारमण
१२	S||||	धर्म	नंदसुवन
१३	||||||	शालिकर	जलजनयन

ठगण (पंचकल)*

क्रम संख्या,	रूप,	संज्ञा,	उदाहरण
१	|SS	इन्द्रासन	पुरारी
२	S|S	शूर	राधिका
३	|||S	चाप	लखपती
४	SS|	हीर	गोपाल
५	||S|	शेखर	सुरपाल
६	|S||	कुसुम	रमापति
७	S|||	अहिगण	शोकहर
८	|||||	पाप गण	मनहरण

---

११ १२ १३
ध्रुव, धरमउ अरु सालिकर, छकलनाम सुखकंद ॥

१ २ ३ ४ ५
*इन्द्रासन अरु सूर, चाप, हीर, सेखर गनो ।
६ ७ ८
कुसुमो अहिगन रूर, पाप गनो पँचकल कहे ॥

सूचना—इन रूप संज्ञाओं के पर्यायवाची शब्द भी इन शब्दों की जगह प्रयोग किये जाते हैं ।

डगण (चौकल)[1]

क्रम संख्या	रूप	संज्ञा	उदाहरण
१	S S	गुरुयुगल, कर्ण	श्यामा
२	I I S	कमल	विलम्बा
३	I S I	भूपाल	रमेश
४	S I I	चरण	मोहन
५	I I I I	विप्र	रघुवर

ढगण (त्रिकल)[2]

क्रम संख्या,	रूप,	नाम	उदाहरण
१	I S	ध्वजा	उमा
२	S I	सुरपति, चीन नंद ग्वाल नाग	श्याम
३	I I I	भाव, धरम	अमर

णगण (द्विकल)[3]

क्रम संख्या,	रूप,	संज्ञा,	उदाहरण
१	S	हार, चौर, नूपुर, कुंडल,	श्री
२	I I	सुप्रिय	शिव

१—गुरुजुगल, कर पद्मज प्रमान । भूपति, चरण, विप्र उर आन ।

२—ध्वज, सुरपाल, अरु भाव कहि, तीन त्रिकल के नाम ।

३—नूपुर प्रिय हैं णगण के गण इकतीस प्रमान ॥

मात्रिक गण और उनकी संज्ञाओं के प्रयोग प्राय मात्रिक छन्दों में पुराने आचार्यों ने किये हैं, यथा—

प्लवगम छन्द लक्षण

(१) छकल, द्विकल पुनि दोय त्रिकल गण ठानिये।
द्वै इक कमल रसाल धुजा पुनि आनिये।
यों कल कर इकईस चार पद वानिये।
छन्द प्लवगम नाम धाम बुध मानिये॥

अर्थात् प्लवगम छन्द के प्रत्येक चरण मे टगण (छकल) णगण (द्विकल), दो टगण (दो त्रिकल) और अन्त में कमल (।।ऽ) अर्थात् डगण का दूसरा रूप और ध्वजा (।ऽ) अर्थात् ढगण का पहला रूप, इस तरह रखना चाहिये।

दूसरे शब्दों मे भानुजी कहते हैं—

गादि वसू दिसि, राम, जगत प्लवग में,

अर्थात् वसु (आठ) और दिसि राम (तेरह) के विराम से इक्कीस मात्राओं का प्लवगम छन्द होता है। उसके प्रत्येक चरण के आदि में गुरु और चरणान्त मे जगण और गुरु रहता है।

इसी को यों भी कहते हैं—

(२) ग्यारह दस पर विरति, अन्त गुरु आनिये।

अर्थात् ग्यारह और दस के विराम से इक्कीस मात्रा का प्लवगम छन्द होता है, अन्त में गुरु रहना चाहिये।

यथा

(१)

ऽ। ऽ। ऽ ऽ। ।ऽ।।ऽ।ऽ
रूप रंग, की, ग्लानि, भरी, अलसा,नि है।
६ २ ३ ३ कमल ध्वजा
लखिये श्याम सुजान नेह सरसानि है।
आनन अमल अनूपम अलक विराजती।
जनु अलि अवलिरसाल कंज पर राजती॥

(२)

ऽ। ।ऽ ।। ऽ। ।ऽ। ।ऽ। ऽ
* गादि वसू दिसि, राम जयंत प्लवग में।
धन्य वही जो, रँगै राम रस रंग में।
पावन हरि जन, संग सदा मन दीजिये।
राम कृष्ण गुण, ग्राम नाम रस भीजिये॥

—भानु

(३)

फिरि बदनेस कुँवार, वियो सु फतेह अली।
बैठे इकले जाय, करनि मसलति भली।
घरी दोय बतराय, दुहूँ के मन रले।
कौल बचन करि एक, दोऊ डेरा चले॥

—सूदन

---

* गादि यह नियम संकुचित है। आदि में गुरु की कोई आवश्यकता नहीं।

ऊपर के तीनों लक्षणों से यह तात्पर्य निकलता है कि प्राचीन कवियों ने प्राय मात्रिक गणों से काम लिया है। आजकल सख्या सूचक शब्दों और वर्णिक गणो से अथवा सीधी सख्याएँ ही लिखकर काम लेते हैं। मात्रिक छन्द रचना में इनमें से किसी भी ढग से काम लिया जा सकता है, यह ठीक है। परन्तु मात्रिक-गणों से काम लेने से गति-भग दोष की आशका कम रहती है। साथ ही ऐसे अनेक छन्द हैं जिनकी मात्राएँ बराबर हैं, यति मे समता है परन्तु गति भिन्न है। इसके कोई नियम न बताकर चुप रहना पड़ता है। परन्तु मात्रिक गणो से काम लेने से ऐसी शकाएँ नहीं उठतीं और उनका निराकरण भी सहज ही मे हो जाता है। उदाहरणार्थ 'सोरठा' और 'रोला' की प्रत्येक पक्ति में ग्यारह और तेरह के विराम से चौबीस मात्राएँ रहती हैं। केवल गति में अन्तर है यही कह कर सतोष करना पडता है। इसी को मात्रिक गणों की कसौटी पर कसते हैं तो स्पष्ट अन्तर मालूम हो जाता है। यह अन्तर रोला छन्द के वर्णन मे दूसरे उल्लास में स्पष्ट किया गया है।

सख्या सूचक साकेतिक शब्द

ऊपर मात्रिक गणों की चर्चा इसलिये और कर दी है कि आगे चलकर यदि काव्य रसिक प्राचीन रीतिग्रन्थों को पढना चाहें तो उनके लक्षण समझने मे उन्हें आसानी हो। ऊपर कहा जा चुका है कि मात्रिक गणों के अतिरिक्त एक प्रणाली मात्रिक

छन्दों में यह बरती जाती है कि सख्यासूचक साकेतिक शब्दो मे मात्रा गिनने का काम निकाल लिया जाता है, यथा—'लहो कल लोक की 'प्रतिभा' अर्थात् प्रतिभा छन्द में लोक (चौदह) मात्राएँ रहती हैं और आदि मे 'ल' अर्थात् 'लघु रहता है। यों तो सख्यासूचक साकेतिक शब्दों की बडी सूची बन सकती है। स्थानाभाव से यहाँ थोडे साकेतिक शब्द लिखे जाते है।

०—नभ।
१—शशि, भू।
२—नयन, भुज, पक्ष, कर्ण, पद।
३—राम, अग्नि, काल, ताप, गुण।
४—वेद, वर्ण, फल, युग, आश्रम, अवस्था।
५—गति, बाण, पाण्डव, शिव, कन्या, तत्व, यज्ञ, वर्ग।
६—शास्त्र, राग, रस, ऋतु, वेदाग, ईति।
७—मुनि, स्वर, ताल, लोक, सिंधु, द्वीप, पुरी, वार।
८—वसु, सिद्धि, योग, याम, अग, दिग्गज, अहि।
९—भक्ति, निधि, अक, ग्रह, नाडी, भूखण्ड।
१०—दिशा, दोष, दिगपाल, अवतार।
११—शिव,
१२—रवि, राशि, भूषण, मास।
१३—भागवत, नदी।

रखने से दोष नहीं होता। और अशुभ वर्ण को गुरु कर देने पर भी उस दोष का मार्जन हो जाता है। अक्षरों के शुभाशुभ का अधिक विचार मात्रिक छन्दों में होता है। वर्णिक छन्दों में वर्णिक गणों का।

अलग अलग प्रत्येक वर्ण का फल इस प्रकार है—

छन्द के आदि में अ आ रखने से सम्पत्ति, इ ई से सुख उ ऊ से धन ए ऐ से सिद्धि, ओ औ से शुभफल, क ख ग घ से लक्ष्मीलाभ, च से सुख, छ से स्नेह, ज से लाभ, ड से सौंदर्य और शोभा, त से तेज और सुख, द ध से धैर्य, न से सुख, य से मंगल, श से सुख, श्री स से सम्पत्ति और क्ष से सुख लाभ होता है। ये सब शुभ वर्ण हैं।

अशुभ वर्णों में झ भयदायक है। ट ठ से दुख, ढ से सौंदर्य नाश, थ से युद्ध, प फ ब भ म से भय, र से दाह, ल व से संघर्ष, ष से दुख और ह से हानि होती है।

ङ ञ ण ये अशुभ हैं पर आदि में नहीं आते। स्वरों में 'ऋ' को कोई शुभ और कोई अशुभ मानते हैं पर शुभ अधिक मान्य है। अ बीच में आता है।

दग्धाक्षरों के दोषों का निराकरण ऊपर बतला आये हैं। इनके उदाहरण इस प्रकार हैं—

झ—झाँझ मृदंग संख सहनाई ['झ' गुरुवर्ण है।]
ह—हरि व्यापक सर्वत्र समाना ['हरि' सुरवाची है।]
र—रमानाथ जहँ राजा, सो पुर बरनि कि जाइ ['रमा' सुर वाची]

शुभाशुभ और दग्धाक्षर*

काव्य मे शुभाशुभ वर्णों का भी ध्यान रखना पडता है। प्राय स्वर सभी शुभ है। व्यजनों मे क, ख, ग, घ, च, छ, ज, ड, द, ध, न, य, श, स, क्ष ये पन्द्रह वर्ण शुभ हैं। और शेष ङ, झ ञ, ट, ठ, ढ, ण, त, थ, प, फ, ब, भ, म, र, ल, व, ष, ह ये उन्नीस वर्ण अशुभ कहलाते हैं। इनमें भी झ, भ, र, ष, ह ये पाँच तो इतने अशुभ हैं कि इन्हे दग्धाक्षर कहते है। इन्हे भूलकर भी कविता के आदि में नहीं रखना चाहिए। पर बहुतों का कहना है कि नर-काव्य में इन वर्णों से बचना चाहिये। आशीर्वादक, मागलिक, सुर वाची और आदर्शवादी महात्माओ के सबंधी पदो के आदि मे

---

* कठाग्र करने के लिये —

१ क ख ग घ च छ ज ड द ध न य श, स क्ष अक्षर शुभ आहि।
ङ झ ञ ट ठ ढ ण त थ प फ ब भ, म र ल व ष ह शुभ नाहिं॥

२ एक कवग के अत को वर्ण[1] चवर्ग के द्वै[2] 'मनीराम' गनीजें।
चारि टवर्ग के बीच बिना[3] तजि जानि थकार पवर्ग[4] न कीजे॥
तीन यवर्ग के छाँडि यकार[5] ते और सकार[6] हकार[7] न कीजें।
वर्ण सदोष विचारि के चित्त पे मित्त कवित्त के आदि न दीजे॥
अर्थात् (१) ङ, (२) झ ञ, (३) ट ठ ढ ण, (४) प फ ब भ म,
(५) र ल व, (६) ष और (७) ह ये अशुभ वर्ण हैं।

ɪ देहु छन्द के आदि नहिं भूलि 'झ ह र भ ष भाइ।
आदि गुर वरण मागलिक, सुर वाची सुखदाइ॥

रखने से दोष नहीं होता। और अशुभ वर्ण को गुरु कर देने पर भी उस दोष का मार्जन हो जाता है। अक्षरों के शुभाशुभ का अधिक विचार मात्रिक छन्दों में होता है। वर्णिक छन्दों में वर्णिक गणों का।

अलग अलग प्रत्येक वर्ण का फल इस प्रकार है—

छन्द के आदि में अ आ रखने से सम्पत्ति, इ ई से सुख उ ऊ से धन ए ऐ से सिद्धि, ओ औ से शुभफल, क ख ग घ से लक्ष्मीलाभ, च से सुख, छ से स्नेह, ज से लाभ, ड से सौंदर्य और शोभा, त से तेज और सुख, द ध से धैर्य, न से सुख, य से मंगल, श से सुख, श्री स से सम्पत्ति और क्ष से सुख लाभ होता है। ये सब शुभ वर्ण हैं।

अशुभ वर्णों में झ भयदायक है। ट ठ से दुख, ढ से सौंदर्य-नाश, थ से युद्ध, प फ ब भ म से भय, र से दाह, ल व से संघर्ष, ष से दुख और ह से हानि होती है।

ङ ञ ण ये अशुभ हैं पर आदि में नहीं आते। स्वरों में 'ऋ' को कोई शुभ और कोई अशुभ मानते हैं पर शुभ अधिक मान्य है। अ बीच में आता है।

दग्धाक्षरों के दोषों का निराकरण ऊपर बतला आये हैं। इनके उदाहरण इस प्रकार हैं—

झ—झाँझ मृदंग संख सहनाई ['झ' गुरुवर्ण है।]
ह—हरि व्यापक सर्वत्र समाना ['हरि' सुरवाची है।]
र—रमानाथ जहँ राजा, सो पुर बरनि कि जाइ ['रमा' सुर बाची]

"— रचहु मंजु मनि चौके चारू [रचहु मंगल वाची]
भ— भरत महा महिमा जलरासी ['भरत' सुखाची]
प—पनसुख जनम सकल जग जाना ['पनसुख' सुखाची]

वर्णिक गण

तीन वर्णों के समूह को वर्णिक गण कहते हैं। प्रस्तार के अनुसार आदि मध्य और अन्त के लघु-गुरु के विचार से उन के आठ रूप हैं —

क्रम संख्या	रूप	संज्ञा	उदाहरण
१	ऽ ऽ ऽ	मगण	गोस्वामी
२	। ऽ ऽ	यगण	यशोदा
३	ऽ । ऽ	रगण	कालिका
४	। । ऽ	सगण	यमुना
५	ऽ ऽ ।	तगण	गांगेय
६	। ऽ ।	जगण	विवेक
७	ऽ । ।	भगण	बालक
८	। । ।	नगण	नयन

किस गण का क्या नाम है, सोदाहरण इन को स्मरण रखने के लिये यह सूत्र बहुत उत्तम है—

"यमाता राज भान सलगम्"

इस सूत्र का प्रत्येक वर्ण एक एक गण का बोधक है। 'ल' लघु का और 'ग' गुरु का सूचक है। यह सूत्र आठ गण और

लघु, गुरु का बोधक है। ये दशाक्षर छन्द-शास्त्र में इसी तरह व्याप्त हैं जैसे कि भगवान विष्णु विश्व में।

इस सूत्र से प्रत्येक गण का उदाहरण और रूप मालूम हो जाता है। यथा—'य' यगण का बोधक है। 'यगण' का रूप जानने के लिये उसके आगे के दो वर्ण 'मा' और 'ता' को इसके साथ मिलाने से 'यमाता' हुआ। इसे ही उदाहरण समझ लो। इस उदाहरण से ही यगण का। ऽ ऽ रूप सिद्ध हो गया। इसी प्रकार 'मगण' के लिये 'मा' के आगे के दो वर्ण मिला लो। 'मातारा' होगा। इससे मगण का ऽ ऽ ऽ यह रूप मालूम हो गया। ऊपर कहा जा चुका है कि इस सूत्र का प्रत्येक वर्ण एक एक गण का बोधक है अर्थात् सूत्र का प्रत्येक वर्ण प्रत्येक गण के आदि वर्ण का बोधक है। इसी नियम से सब गणो के नाम, रूप और उदाहरण मालूम हो सकते हैं। 'सलगम' में 'स 'सगण' नाम का बोधक है। स (।) लघु, ल (।) लघु और गम् में म् हलन्त होने से 'ग' (ऽ) गुरु का बोधक है। अर्थात् 'सलगम्' से सगण का ।।ऽ यह रूप स्पष्ट हो जाता है। ल (।) लघु का और 'ग' (ऽ) गुरु का बोधक है।

इसके अतिरिक्त गणबोधक और भी छन्दोबद्ध लक्षण अन्य विद्वानों ने बतलाए हैं उनमें से दो यहाँ उद्धृत कर दिये जाते हैं। रुचि के अनुसार इन्हे स्मरण कर लेना चाहिये।

(१)

आदि, मध्य, अवसान में, भ, ज, स गुरु ते जान।
य र, त लघू ते जानिये, म, न क्रमते ग, ल मान॥

अर्थात् भगण के आदि मे, जगण के मध्य में और सगण के अत मे गुरु रहता है। इसी तरह यगण के आदि मे, रगण के मध्य में और तगण के अत मे लघु रहता है । और मगण में तीनो गुरु तथा नगण में तीनो लघु रहते हैं।

(२)

तीन गुरु जामे सोई 'मगन' बखाने गन,
नगन सो तीन लघु जामें सो प्रमान है।
आदि गुरु जा मे सोई 'भगन', 'यगन' जा में,
आदि लघु सोई चारु सुख के निधान है॥
मध्य गुरु जा में सोई 'जगन' जहान जाने,
'रगन' सु मध्य जा में लघुता विधान है।
अत गुरु जा में सोई 'सगन' सराहें ताहि
'तगन' सु अत लघु अशुभ महान है॥

इस पद्य का भाव स्पष्ट है।

देवता और फल

इन गणो के देवता और फल भी भिन्न-भिन्न हैं। यही नहीं बल्कि प्रत्येक गण का स्वामी, फल, मास, पक्ष, तिथि, वार, नक्षत्र, वर्ण (जाति) रग, वस्त्र, भूषण, कुल, माता, पिता, लोक भी अलग अलग हैं। लघु गुरु समेत ये दशाक्षर दशों अवतार के सूचक हैं । (१) मगण—मत्स्य, (२) यगण—कच्छप, (३) रगण—वाराह, (४) सगण—नृसिंह, (५) तगण—वामन, (६) जगण—परशुराम, (७) भगण—राम और (८) नगण—कृष्ण

वतार के सूचक है। (६) गुरु—चौद्ध और (१०) लघु—कल्कि के दसवें अवतार के सूचक हैं। जो हो, पर इन्हीं दशाक्षरो पर छन्द शास्त्र की निर्भरता है।

प्रत्येक गण के सभी अग जानने की आवश्यकता नहीं है। साधारणतया प्रत्येक गण का देवता और उसका फल जानना आवश्यक है उसमें भी मुख्यत फल। जिससे कि छन्द के आदि में अशुभ फल देने वाले गण का ध्यान रखा जा सके। देवता और फल-सूचक दो पद दिये जाते हैं। अपनी रुचि के अनुसार उन्हें कठ कर लेना चाहिये।

(१)

तीनों 'गो' 'मगन' मे 'मही' है सुर 'लक्ष्मी' फल,
'नगन' त्रिलघु सुर 'नाक' वर बुद्धिदान।
आदि गुरु 'भगण' है चन्द्र सुर 'मगल दा'
लघु आदि यगन 'जल' आनँद अनेक जान।
'जगन' गो मध्य 'सूर' स्वामी सुख दूर करें,
मध्य 'ल' रगन 'अग्नि' स्वामी दुख को निदान।
सगन मे अन्त गुरु स्वामी 'वायु' भ्रमन है,
'ल' अत तगन 'व्योम' स्वामी सून्य फल मान॥

अर्थ स्पष्ट है।

(२)

मगण पृथ्वी तासु फल श्री, यगण जल आयु प्रद।
रगण पावक दाह ता फल, सगण बायु विदेशद।

तगण व्योम तु शून्य फलयुत, जगण आदित रुज फल।
नगण स्वर्ग सदा सुखप्रद भ शशि देवै यश फल।

भाव स्पष्ट है।

यद्यपि गणों के देवता, फल आदि के सम्बध के दो पद लिख दिये हैं। फिर भी यह स्पष्ट करने के लिये कि किस गण का क्या रूप, उदाहरण, देवता और फल हैं यह गण-फलक दिया जाता है।

गण फलक

गण	रूप	उदाहरण	देवता	फल	शुभाशुभ
मगण	SSS	माता जी	पृथ्वी	लक्ष्मी	शुभ
नगण	।।।	पवन	स्वर्ग	सुख	
यगण	।SS	भवानी	जल	आयु	
भगण	S।।	बालक	चन्द्रमा	यश	
जगण	।S।	व्रजेश	सूर्य	रोग	अशुभ
रगण	S।S	देवता	अग्नि	दाह	
तगण	SS।	गोविंद	आकाश	शून्य	
सगण	।।S	यमुना	वायु	विदेश	

ऊपर के फलक से शुभ और अशुभ गण स्पष्ट हो जाते हैं। आचार्यों का कहना है कि केवल छन्द के पहले पद मे अशुभ गण नहीं पड़ना चाहिये। और यदि पहला चरण भी मगल-वाची या सुखवाची हो तो अशुभ गण का भी कोई दोष नहीं

जाता। कुछ का कहना है कि गणो के शुभाशुभ का विचार भी मात्रिक छन्दो में ही किया जाता है वर्णिक में नहीं। फिर भी जहाँ तक हो वर्णिक छन्दो के आदि चरण मे अशुभ गण नहीं रखने चाहियें और यदि रखने ही पडें तो देवबाची या मगल-वाची बनाकर ही रखना चाहिये।

द्विगण-विचार

जिस तरह दग्धाक्षरो को हम गुरु करके या सुर और मगल वाची शब्दो म प्रयोग कर लेते हैं। उसी तरह यदि हमें अशुभ गण रखना ही पडे तो उसके आगे दूसरा शुभ गण रखने से उस दोप का परिहार हो जाता है। इस नियम को द्विगण-विचार कहते हैं। इन आठो गणो मे मगण और नगण की मित्र, भगण और यगण की दास, जगण और तगण की उदासीन तथा सगण और रगण की शत्रु सज्ञा है। द्विगणो के सयोग और फलाफल का यह फलक दिया गया है।

द्विगण फलक

गण संज्ञा	संयोग	फल
१. मित्र	मित्र + मित्र	सिद्धि
मगण, नगण	मित्र + दास	विजय
	मित्र + उदासीन	हानि (गात्र-दुखद)
	मित्र + शत्रु	प्रिय नाश (बधु-हानि)
२. दास	दास + मित्र	सिद्धि (कार्य सिद्धि)
भगण, यगण	दास + दास	सर्व जीववश (कोई कोई हानि मानते हैं)
	दास + उदासीन	पीडा (धन नाश)
	दास + शत्रु	पराजय (मित्र भी शत्रु हो)
३ उदासीन	उदासीन + मित्र	अल्प-फल
जगण तगण	उदासीन + दास	प्रभुता प्राप्ति (कोई दुख मानते हैं)
	उदासीन + उदासीन	विफल
	उदासीन + शत्रु	दु ख
४. शत्रु	शत्रु + मित्र	शून्य
रगण, सगण	शत्रु + दास	प्रिय-नाश (नारि-नाश)
	शत्रु + उदासीन	शाका (कुल-नाश)
	शत्रु + शत्रु	पराजय (नायक-नाश)

इस फलक से स्पष्ट हो गया कि द्विगण में किस गण के साथ किस गण का संयोग शुभ है और किस के साथ किस गण का अशुभ। कठाग्र करने के लिये इस फलक को छन्दोवद्ध दे दिया है।

मगन, नगन ये मित्र हे, भगन, यगन ये दास।
उदासीन ज त जानिये, र स रिपु केशवदास ॥

मित्र ते जु होय मित्र बाढ़ै नहु रिद्धि सिद्धि,
मित्र तें जु दास त्रास युद्ध ते न जानिये।
मित्र ते उदास गन होत गोत दुख देत,
मित्र त जु शत्रु होय मित्रबधु हानिये।
दास ते जु मित्रगण काज सिद्धि केशोदास,
दास ते जु दास वस जीव सब मानिये।
दास ते उदास होत धन नास आसपास
दास तें जु शत्रु, मित्र शत्रु सो बखानिये ॥१॥

जानिये उदास ते जु मित्रगन तुच्छ फल
प्रकट उदास ते जु दास प्रभुताइये।
होय जो उदास ते उदास तो न फलाफल,
जो उदास ही ते शत्रु तो न सुख पाइये।
शत्रु ते जु मित्रगन ताहि सो अफल गन,
शत्रु ते जु दास आशु बनिता नसाइये।
शत्रु ते उदास कुल नाश होय केशोदास,
शत्रु तें जु शत्रु नाश नायक को गाइये ॥२॥

नर काव्य में गणागण का विचार अवश्य करना चाहिये।
हाँ, देववाची, मगलवाची शब्दो तथा देवकथा प्रसग मे मात्रिक

या वर्णिक छन्दो के अन्तर्गत गणागण, और दग्धाक्षरो के विचार की विशेप आवश्यकता नहीं। परन्तु ग्रन्थारम्भ मे ऐसा विचार करना उत्तम है। प्राचीन आचार्यो ने ऐसा ही किया है। रामचरितमानस का आरम्भ—श्लोक 'वर्णानां' मगण तथा सोरठा 'जेहिसु नगण से हुआ है। आजकल भी विचारशील कवि इसी शैली पर चल रहे हैं। कविवर मैथिलीशरण जी ने साकेत' का 'जयति' नगण से, सिरस जी ने भरत भक्ति' का 'अचल नगण से और महाकवि हरिऔध' जी ने 'प्रियप्रवास' का दिवस नगण से ही आरम्भ किया है।

तुक

छन्द रचना में तुक का जानना भी बहुत आवश्यक है। यों तो कान इतने अभ्यस्त होते हैं कि छन्द सुनते ही तुक को पहचान लेते हैं। वास्तव मे तुक में ऐसा ही आकर्पण है कि वह श्रोता को मुग्ध कर देती है। यद्यपि यह नहीं कहा जा सकता कि बिना तुक के कविता हो ही नहीं सकती। फिर भी यह स्वय-सिद्ध बात है कि तुक से पद में लयगत-सौंदर्य, कर्ण-माधुर्य और विचित्र आकर्पण आजाता है। लय अथवा धारा प्रवाह छन्द का प्राण है, तुक उसका सहोदर है।

कहा जा सकता है कि सस्कृत में तो प्राय अतुकान्तों का ही साम्राज्य है, फिर भी सस्कृत में पदलालित्य, कर्ण-प्रियता, लयगत सौंदर्य बेजोड हें। ठीक है, इसका कारण है कि

संस्कृत में प्राय चुने हुए वृत्तों में ही पद्य रचना की जाती है। और उन वृत्तों के कुछ ऐसे अनूठे गठे हुए वर्ण क्रम से साँचे तैयार किये गये हैं कि जिनमें ढलते ही पद अनोखे सरस और कर्ण-मधुर हो जाते हैं। हिन्दी में भी चुने हुए संस्कृत के वर्ण-वृत्तों में अतुकान्त रचना बुरी नहीं जँचती। महाकवि हरिऔध जी का 'प्रिय प्रवास' अतुकान्त वर्ण-वृत्तों का ही महाकाव्य है, पर वह सरसता, लालित्य और कर्ण प्रियता में अपने ढग का बेजोड है। हिन्दी के मात्रिक छन्दो मे अतुकान्त अच्छे नहीं जँचते, सुनते ही कान में खटक पैदा कर देते है।

हिन्दी में तुक कहाँ से आई? इसके जन्मदाता हमारे अपढ ग्रामीण हैं। उनकी बात बात मे तुक चलती है। उनके गीतों मे तुकबंदी का ही बाहुल्य होता है। "भरे जायँ मलारें गायँ" "ऊधो का लेना न माधो का देना" ऐसी ही तुकमय उनकी कहावतें हैं। हिन्दी-साहित्य मे चारण और भाटो के द्वारा गीति-काव्य और वीर-गाथाओ से 'तुक' का प्रवेश हुआ। और चिरकाल से तुकमय पद सुनते आने से वह हमारे कानो का विषय बन गया है।

संस्कृत मे भी जो छन्द तुकमय हैं, उनका कहना ही क्या? जयदेव जी के संस्कृत काव्य गीतगोविंद में तुकों के दर्शन होते हैं, यथा—

'पतति पतत्रे विचलित पत्रे, शकित भवदु पयानम्।
रचयति शयन सचकित नयन, पश्यति तव पथानम्॥"

तुकात ने इस पद में कितना आकर्षण ला दिया है। प्राकृ
भी तुक मे खाली नहीं है—

"पिंग जटा वलि ठाविअ[१] गंगा
धारिअ णाअरि[२] जेण[३] अधगा[४]।
चद कला जसु[५] सीसहि णोक्खा[६],
सो तुम्ह सकर दिज्जउ[७] मोक्खा[८]।

उर्दू मे भी क़ाफिया और रदीफ दोनों का नियम होता है। हाँ, किन्हीं शेरो के तुकात मे सम स्वर-वर्ण समता होती है और किन्हीं में नहीं, यथा—

सम स्वर-वर्ण समता

खींचो न कमानो को न तलवार निकालो।
जब तोप मुक़ाबिल है तो अख़बार निकालो॥

सम-स्वर-वर्ण-असमता

क़र्ज़ की पीते थे मय लेकिन समझते थे कि हाँ।
रग लायेगी हमारी फ़ाक़ामस्ती एक दिन॥

जो हो, हिंदी का पुराना साहित्य भी तुकमय है, और आजकल की खड़ी बोली की रचनाओ मे भी तुक का प्राधान्य है। लोकमत तुकों के ही पक्ष मे है। हाँ अंग्रेज़ी और बंगला के प्रभाव मे आकर हिन्दी के कुछ कविगण अतुकात रचनाओं की ओर झुक गये हैं।

---

१ स्थापित २ नागरि ३ येन ४ अर्धंग ५ यस्य ६ अनोखा ७ दीजिये ८ मोक्ष।

तुक है क्या ? छन्द के चरणात मे आने वाला अनुप्रास ही वास्तव मे तुक है। जिसे सीधे सादे शब्दों मे यो कह सकते हैं—छदो के चरणात मे रहने वाले समस्वर वर्णों की समता ही तुक है।"

तुक के सम्बध मे हमे दो बातें बतलानी हैं—एक यह कि उत्तमता की दृष्टि से तुको के कितने प्रकार हैं ? उनके क्या नियम है ? दूसरे यह कि सम अर्द्धसम, आदि छदो के अतर्गत—सम, विपमादि चरणों मे —आने के कारण चरणो के इन नाम भेदो से तुको के नाम और प्रकार क्या हैं ?

पहले हमे उत्तमता की दृष्टि से तुको का निर्णय करना है। उत्तमता की दृष्टि से तुको मे प्रकारातर से दो ढग बरते गये है—एक समस्वर गुरु लघु का आधार लेकर और दूसरा समस्वर-वर्ण-समता के सहारे पर। पर वास्तव मे दोनो एक ही हैं।

१ समस्वर गुरु-लघु का आधार

१—यदि छन्द के चरणान्त में दो गुरु आवे तो वहाँ पाँच मात्राओं के समस्वर मिलने से तुक उत्तम, चार के मिलने से मध्यम और चार से कम मिलने से तुक निकृष्ट हो जाती हैं।

उत्तम

जौं तपु करइ कुमारि तुम्हारी।
भाविउ मेटि सकहिं त्रिपुरारी॥

मध्यम

पुत्रों को नत देख धात्रियाँ बोलीं धीरा—
जाओ बेटा, 'रामकाज' क्षण भंग शरीरा।

—मैथिलीशरण गुप्त

निकृष्ट

महा तुच्छ यम कोटि तिहारे आगे पुत्री
सती-सिरोमनि उभय लोक महँ तुही भवित्री ॥

यहा केवल 'त्र' में स्वर-साम्य है।

७—यदि छन्द के चरणान्त मे लघु-गुरु (। ऽ) या गुरु लघु (ऽ ।) आवें तो पाँच मात्राओं के समस्वर के मिलने से उत्तम, चार के मिलने से मध्यम इस से कम के मिलने से तुक निकृष्ट कहलाती है।

उत्तम

(१) सरस मारस सारस सोहते।
कमलिनी अलिनी सर जोहते ॥

—'सिरम'

(२) मृत्यु ? उसमें तो सहज ही मुक्ति।
भोग तू निज भावना की भुक्ति ॥

—मैथिलीशरण गुप्त

मध्यम

(१) परकाजहि देह को धारे फिरौ परजन्य जथारथ ह्वै दरसौ।
निधि नीर सुधा के समान करौ सब ही विधि सज्जनता सरसौ॥
घन आनद' जीवन दायक हौ कछु मेरियौ पीर हिये परसौ।
कबहूँ वा बिसासी सुजान के, आँगन मो अँसुवान को लै बरसौ॥

—घनानद

(२) सियापति छाँडि न कोई सहाय।
उमापति सेवक क्यों न कहाय।

—मान

निकृष्ट

(१)

होता है हित के लिये सभी।
करते हैं हरि क्या अहित कभी?

—मैथिलीशरण गुप्त

(२)

चरन सेवा करत निसि दिन, रामकी करि प्रीति।
कछु न चाहिय मोहि आनहु, भई प्रभु परतीति॥

—'सिरम

(३)

निन्दा अस्तुत उभय सम, ममता मम पदकञ्ज।
ते भजन मम प्रान प्रिय, गुन मंदिर सुखपुंज॥

३ यदि छन्द के चरणान्त में दो लघु आ पड़े तो चार मात्राओं का सम-स्वर मिलना उत्तम दो का मध्यम और एक का निकृष्ट है।

उत्तम

गुरु पद रज-मृदु मंजुल अंजन।
नयन अमिय दृग दोष विभंजन।

मध्यम

धन्य धन्य तैं धन्य विभीषन।
भयेहु तात निसिचर-कुल-भूषन।

—रामचरित मानस

निकृष्ट

फिरहु तोष मम हृदय, भयो तू मेरो ही सुत।
पुष्प गुलाब प्रभाव, न कोउ कटक सन रूसत॥

—'सिरस'

२. सम-स्वर वर्ण समता का आधार

छन्दों के चरणान्त में अधिक सम-स्वर वर्णों की समता होने से उत्तम, न्यून समता होने से मध्यम और अनियमता होने से निकृष्ट तुक होती है।

उत्तम तुक के सम-सरि, विषम सरि, कष्ट-सरि; मध्यम के असयोग-मीलित, स्वर-मीलित, दुर्मिल और निकृष्ट तुक के अमिल-सुमिल, आदि-मत्त-अमिल और अन्त मत्त-अमिल ऐसे तीन तीन भेद है।

उत्तम

सम-सरि १

कुलिस किसी पर कड़क रहे हैं आली तोयद तड़क रहे हैं।
कुछ कहने के लिये लता के अरुण अधर वे फड़क रहे हैं॥
मैं कहती हूँ—रहें किसी के हृदय वही, जो धड़क रहे हैं।
अटक अटक कर भटक भटक कर भाव वही जो भड़क रहे हैं॥

विषम सरि २

कहुँ दाभन ते मुख जाको छियो जब तू दुहिता लखि पावत ही।
अपने कर ते निज घावन पै तुही, तेल हिंगोट लगावत ही॥
जिहि पालन के हित धान समा, नित मूठहि मूठ खवावत ही।
मृग छौना सो क्यों पग तेरे तजे जाहि, पूत लौं लाड़ लड़ावत ही॥

—राजा लक्ष्मणसिंह

कष्ट सरि ३

खिले नेवाड़ी फूल, रंग अति लगे मनोहर।
नील कमल से हरित, डार कूजत खग सुंदर॥

१—'सरि' शब्द का अर्थ है 'आवृत्ति'। पूरे पदों में यहाँ अधिक से अधिक सम स्वर-वर्ण-समता है।

२—पूरे पदों में आये हुए कुछ वर्णों की समता हुई है।

३—बड़ी कठिनाई से सम स्वर सहित एक वर्ण की समता हुई है।

मध्यम

असयोग-मीलित १

उच्चारित होती चले वेद की वाणी।
गूंजै गिरि-कानन-सिंधु पार कल्याणी।
—साकेत

स्वर-मीलित २

ठाढे है नव द्रुम डार गहे,
धनु कांधे धरे कर शायक लै।
विकटी भृकुटी बडरी अँखियाँ,
अनमोल कपोलन की छबि है।
तुलसी असि मूरति आनि हिये,
जड डारु दै प्रान निछावरि कै।
श्रम-सीकर साँवरि देह लसै,
मनो रारि महा-तम तारक मै॥
—कवितावली

दुर्मिल ३

प्रभु को निष्कासन मिला, मुझको कारागार।
मृत्यु दण्ड उन तात को, राज्य तुझे धिक्कार॥

१ तुक के संयुक्त वर्णों का समता में न गिना जाना असयोग मीलित तुक है। ऊपर की तुक 'वाणी' 'ल्याणी' में 'ल्या' के साथ यदि 'व्या' जैसा वर्ण होता तो 'य' और 'ण' की समस्वर-वर्ण समता होने से तुक उत्तम हो जाती।

२ चरणों के सर्वान्त्य वर्ण में केवल समस्वर समता है।

३ सर्वान्त्य समस्वर सहित वर्णों की समता है।

निकृष्ट

अमिल-सुमिल १

चँद भगीरथ की की शुचि चाँदनी, कै शिव की भल कीरति छावै।
चदन गौर लगाव मही, किधौं चौर सुहात, धयारि डुलावै।
धात्र सुधा-सरिता जग बीच, किधौं यश चादरि स्वच्छ बिछावै।
छीर-पयोधि नहो वह छीर किधौं अघ-भगनि गग सुहावै॥

—भरत भक्ति

आदि मत्त अमिल २

मुनि जेहि ध्यान न पावहिं, जाहि न जानत वेद।
कृपा सिंधु सोइ कपिन्ह सन, करत अनेक विनोद॥

—रामचरित मानस

अन्त मत्त अमिल ३

ठेलि ठेलि कै कायरनि, तुही नरक मे देति।
असि तू ही वर वीर की, होति स्वर्ग की हेतु॥

अतुकान्त

छन्दो के चरणान्त में स्वर और वर्ण समता न होना ही अतुकान्त अथवा भिन्न तुकान्त है।

---

१ छन्द म चरणान्त के एक दो समस्वर वर्णों की दो या तीन चरणों मे समता होना ही अमिल सुमिल तुक है ऊपर के पहले और तीसरे चरण में समता की झलक है।

२ चरणान्त के तुक वाले आदि वर्ण के स्वरों में विषमता होना।

३ चरणों के सर्वान्त्य वर्ण के स्वरों मे विषमता का होना।

चौपाई

पुलकि गात हिय सिय रघुबीरू। जीह नाम जप लोचन नीरू ॥
लखन राम सिय कानन बसहीं। भरत भवन बसि तप तनु कसहीं॥

६ भिन्नान्त्य—सम-छन्द के तुकान्तों की पारस्परिक विषमता को भिन्नान्त्य कहते हैं।

मन्दाक्रान्ता

शोभा वाले-विटप मिलमे पक्षियों के स्वरों से।
विज्ञानी हैं परम प्रभु के प्रेम का पाठ पाता ॥
व्याधा की हैं वधन-रुचियाँ और भी तीव्र होती ।
यों दोनो के श्रवण करने मे बडी भिन्नता है ॥

—प्रियप्रवास

छन्द-भेद

छन्द का शब्दार्थ और लक्षण बताया जा चुका है। मात्रा और वर्ण-गणना के भेद से पहले इसके दो भेद हैं । मात्रिक (जाति) और वर्णिक (वृत्त)। 'जिन छन्दो मे मात्राओं की सख्या और क्रम आदि का नियम होता है उन्हे मात्रिक अथवा जाति छन्द कहते हैं और जिन छन्दो में वर्णों की सख्या और उनके गुरु-लघु के क्रम का भी नियम होता है उन्हें वर्णिक या वृत्त छन्द कहते हैं।

इन मात्रिक और वर्णिक छन्दो मे से फिर प्रत्येक के तीन-तीन भेद हैं —सम, अर्द्ध-सम और विषम। फिर इनमे 'सम' छन्दों के 'साधारण' और 'दण्डक' ये दो दो भेद हो जाते है।

इसके पश्चात् इन साधारण, दण्डक, अर्द्ध-सम और विषम मात्रिकों के मूल और 'मुक्तक' ये दो दो भेद हो जाते हैं और वर्णिकों में 'सम' के अन्तर्गत साधारण के मूल और उपजाति, तथा दण्डकों के 'गणवद्ध और मुक्तक' दो दो भेद हो जाते हैं। इसी तरह वर्णिक अर्द्ध-सम और विषम छन्दों के भी गणवद्ध और मुक्तक ये दो दो भेद हो जाते है। स्पष्ट समझने के लिये अन्त में छन्द-वंश-वृक्ष भी दे दिया है।

मात्रिक-छन्दों के भेद

सम—जिन छन्दों के चारो चरणों में मात्राओं की संख्या और उनके क्रम की समता हो उन्हें मात्रिक छन्द कहते हैं, यथा—चौपाई।

अर्द्ध-सम—जिन छन्दों के विषम विषम (पहले तीसरे) और सम-सम (दूसरे-चौथे) चरणों में मात्राओं की संख्या और उनके क्रम की समता होती है, उन्हे मात्रिक अर्द्ध सम छन्द कहते हे, जैसे—सोरठा।

विषम—मात्रिक सम और अर्द्ध सम छन्दों के अतिरिक्त छन्द विषम कहलाते हैं। जैसे—आर्या, गाथा, मिलिन्दपाद आदि।

सम छन्दों के अन्तर्गत —

साधारण—जिन सम छन्दों के प्रत्येक चरण में बत्तीस मात्राए तक रहती हैं वे साधारण मात्रिक कहलाते हैं। जैसे—समान सवैया, आदि।

दण्डक—जिन सम छन्दो के प्रत्येक चरण मे बत्तीस से अधिक मात्राए रहती हैं वे मात्रिक-दण्डक कहलाते हैं। जैसे—करखा आदि।

इन सम-साधारण, दण्डकों तथा अर्द्ध-सम और विषमा के भी दो-दो भेद हैं—मूल और मुक्तक।

मूल—मूल छन्द वे हैं जिनकी मात्रा-गणना सम्पूर्ण चरणों मे समान रहती है। जैसे—चौपाई, सोरठा, मिलिन्द-पाद आदि।

मुक्तक—जिन छन्दो के चरणों में एक दो-मात्रा के घट-बढ जाने से अवान्तर-भेद हो जाते हैं वे छन्द मात्रा मुक्तक कहलाते हैं, जैसे--रूप चौबोला, छपदी आदि।

वर्णिक छन्दों के भेद

सम—जिन छन्दो के चारों चरणों में वर्णों की सख्या और गुरु लघु का क्रम अथवा गण समानता रहती है वे वर्णिक-सम छन्द कहलाते हैं, जैसे--मन्दाक्रान्त, सवैया, दण्डक आदि।

अर्द्ध सम—जिन छन्दो के सम-सम (दूसरे चौथे) और विषम-विषम (पहले तीसरे) चरणो मे वर्ण क्रम और उन चरणो की वर्ण-सख्या में समानता होती है वे वर्णिक अर्द्ध-सम है।

बगला, मराठी, अग्रेजी आदि भाषाओं के प्रभाव के कारण हिंन्दी में अब अनेक नये नये छन्दो की रचना होने लगी है। इसीलिये गणबद्ध और मुक्तकों के भेद में वृद्धि करनी पड़ी है।

विषम—वे वर्णिक छन्द हैं जिनके चरणों में से हर एक चरण की वर्ण संख्या और उनके गुरु-लघु के क्रम में परस्पर समता न हो।

सम छन्दों के अन्तर्गत—

साधारण—छब्बीस वर्ण तक के छन्द साधारण वृत्त कहलाते हैं जैसे—सवैया।

दण्डक—छब्बीस वर्ण से अधिक के छन्द दण्डक कहलाते हैं। जैसे—मनहरण।

इन सम-साधारण और दण्डकों तथा अर्द्ध सम और विषमों के भी दो-दो भेद हैं। सम-साधारण के मूल और उपजाति ये दो भेद हैं और अर्द्ध सम तथा दण्डकों के गण-बद्ध और मुक्तक ये दो दो भेद हैं।

मूल—वे छन्द हैं जिनकी चारों चरणों में वर्ण-गणना सम और गण बद्ध होती है। जैसे—मन्दाक्रान्ता।

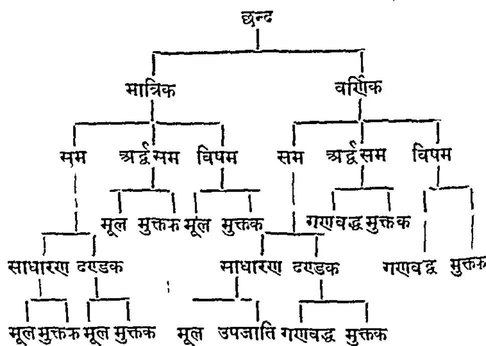
उपजाति—वे सम-वृत्त हैं जो भिन्न दो सम-वृत्तों के मेल से बनते हैं। किसी विशेष छन्द की जाति के अन्तर्गत होने के कारण वे उपजाति कहलाते हैं। यथा—मत्तगयद उपजाति।

गणवद्ध—जिन छन्दों में गण तथा गुरु लघु आदि का क्रम रहता है वे गण-वद्ध कहलाते हैं। जैसे—सवैया, अनग शेखर आदि।

मुक्तक—जो छन्द गण तथा गुरु-लघु आदि के नियमों से मुक्त रहते हैं वे मुक्तक कहलाते हैं। जैसे—मनहरण।

इन भेदोपभेदो के अन्तर्गत छन्दो के नाम, लक्षण और उदाहरण आदि का दूसरे उल्लास मे विस्तार से वर्णन है। अधिक स्पष्टता के लिये यहाँ छन्द-वंश-वृत्त दिया जाता है।

छद वंश-वृत्त



मात्रिक तथा वर्णिक छन्दों की पहचान

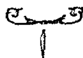
अमुक छन्द वर्णिक है या मात्रिक? इसके पहचानने का सरल ढग यह है कि छन्द के वर्ण गिन डालो। यदि चारों चरणों मे वर्ण-समता है तो वह वर्णिक है अन्यथा मात्रिक। वर्णिको में साधारण है या मुक्तक? इसके लिये गुरुलघु के क्रम पर ध्यान दे लेना चाहिये। ध्यान रहे कि वर्णिक छन्दो के वर्ण

गिनने में संयुक्ताक्षरों की गणना नहीं की जाती। यथा 'इन्द्र' में 'इ' और 'न्द्र' दो ही वर्ण गिने जायेंगे।

यह दोहा भी छन्द पहचानने के लिये उपयोगी हो सकता है—

लघु गुरु चारों चरण में क्रम तें मिलें समान।
वर्णिक है यह, अन्यथा मात्रिक छन्द प्रमान॥

अर्थात् 'यदि छन्द के चरणों में गुरु लघु का वर्ण-क्रम मिले तो वर्णिक अन्यथा मात्रिक।' पर इस ढंग से गणना करने से वर्णिक मुक्तकों में गड़बड़ हो सकती है क्योंकि वहाँ वर्ण-संख्या की ही समता होती है गुरु-लघु का कोई क्रम नहीं होता। इस से पहला ही ढंग उत्तम है।



दूसरा उल्लास

मात्रिक सम छन्द

५ मात्राओं के छन्द-८*

वीर

इस छन्द के चरणान्त में गुरु लघु।

भव-भीर। हरु पीर।
हे धीर। रघुबीर॥

—दास

६ मात्राओं के छन्द-१३

बगहस

चरणान्त में गुरु लघु।

कृष्ण पास। तवहि दास।
दिय पठाय। रन सुनाय॥

—सुजान चरित

---

* जितनी मात्राओं का छंद है। शुरू में शीर्षक दे दिया गया है उस शीर्षक के भीतर उतनी ही मात्रा के छंद समझने चाहियें।

हर छन्द

चरणान्त में नगण।

जगत जननि। दुखी जननि।
छोह करहि। व्यथा हरहि॥

—दास

७ मात्राओं के छन्द-२१

शुभ गति (अन्य नाम—सुगति)

प्रत्येक चरण में चार और तीन के विराम से सात मात्राएँ, और चरणान्त में प्राय गुरु रहता है —

(१)

आलस तजो। हर हर भजो।
छल ते लजो। गुन से सजो॥

—नायक

(२)

शिव शिव कहो। जो सुख चहो।
जो सुमति है। तो सुगति है

—भानु

(३)

लाल गोपाल। प्रभा विशाल।
जसुमति नद। आनँद कद॥

—दास

८ मात्राओं के छन्द-३४

छवि (अन्यनाम—मधुभार)

प्रत्येक चरण मे चार चार मात्राओ पर विराम और चरणान्त मे जगण रहता है —

(१)

प्रभु हो प्रवीन। नर हैं जो दीन।
तिनकी सम्हार। तुम्हरे अधार॥

(२)

बसि हिय प्रदेश। हे हरि हमेश।
नाशैं कलेश। गावें सुरेश॥

९ मात्राओं के छन्द-५५

हारी (अन्य नाम—गग)

चरणान्त में दो गुरु।

धन-धान्य पाना। हो यश कमाना।
धर वीर-बाना। कुछ कर दिखाना॥

—मान

वसुमती

चरणान्त में एक गुरु।

पर दुःख हरना। शुभ काम करना।
हरि नाम जपना। ससार अपना॥

—मान

निधि

चरणान्त में लघु ।

निज हिये विचार । यह जगत असार ।
गुरु भयो अधार । सुख लह्यो अपार ॥

१० मात्राओं के छन्द–८६

दीपक

चरणान्त में गुरु लघु ।

(१)

जो मान का ध्यान । रखते सु मतिमान ।
जो ठानते ठान । रखते सो है प्रान ॥

—मान

(२)

यह राउ बुधवान । करि सूर सनमान ।
जे जहाँ इहँ ज्ञान । तहँ थापि बलवान ॥

—काव्य कुसुमाकर

कमल

प्रत्येक चरण के आदि में त्रिकल और अन्त में प्राय रगण रहता है —

रँगीलो साँवरो । गयो जब द्वारिका ।
विकल फल ना हिये । कृष्ण रटना लगी ॥

—सत्यनारायण कविरत्न

कमला

प्रत्येक चरण में आठ लघु और चरणान्त में एक गुरु रहता है —

कच अँखियन लखि हों। अरु भुज भरि रखि हों।
शशि धरि निमल कला। हृदय कमल कमला॥

—दास

११ मात्राओं के छन्द-१४४

हंसमाला

चरणान्त मे दो गुरु।

इह आरण्य माहीं। सर मानुष्य नाहीं।
विकसे कज आला। कुरें हस माला॥

—दास

आभीर (अन्य नाम-अहीर)

महेश

इसके आदि में त्रिकल और चरणान्त में लघु-गुरु रहता है —

समय के साथ ढलो,
छल सको जिसे, छलो,
स्वार्थ मे रँगे चलो,
नहीं तो हाथ मलो!

—मान

१२ मात्राओं के छन्द–२३३

तोमर (अन्य नाम—वामन)

चरणान्त में गुरु लघु।

(१)

प्रस्थान—वन की ओर। या लोक-मन की ओर?
होकर न धन की ओर। हैं राम जन की ओर॥

—साकेत

(२)

तब चले बान कराल। फुंकरत जनु बहु व्याल।
कोपेउ समर श्रीराम। चले बिसिप निसित निकाम॥*

—रामचरित मानस

(३)

है वर्ग जिनका सैन्य। अनुचित उन्हें है दैन्य।
यह है उन्हीं की रीति। मेटें अधर्म अनीति॥

—अनघ

लीला

प्रत्येक चरण के अन्त मे जगण रहता है।

यथा

अवध पुरी भाग भारु। दसरथ गृह छवि अगारु।
गजत जहँ विस्वरूप। 'लीला' तनु धरि अनूप॥

—'दास'

---

* युद्ध विषयक रचनाएँ इस छन्द मे विशेष रुचिकर जँचती हैं।

ताण्डव

प्रत्येक चरण के आदि मे एक लघु और अन्त मे एक लघु रहता है –

रचैं ताण्डव सुख रासि। ललित भावहि परकासि।
सिवासकर कैलास। सदा पूजैं जन आस॥

—भानु

१३ मात्राओं के छन्द–३७७

चन्द्रमणि (अन्य नाम उल्लाला†)

चरण के अन्त में गुरु लघु का कोई नियम नहीं हैं –

(१)

भजहु सदा राधारमन। गावहु गुन गन ह्वै मगन।
वृन्दावन वासी बनौ। लहौ नित्त आनँद घनौ॥

(२)

काव्य कहा बिन रुचिर मति। मति सु कहा बिनही बिरति।
बिरतिउ लाल गुपाल भल। चरननि होय जु रति अचल।

—भानु

चण्डिका (अन्य नाम—धरणी)

प्रत्येक चरण में आठ, पाँच पर विराम और अन्त में रगण रहता है —

आदि शक्ति-रण-चण्डिके। भक्त-अटल-प्रण मण्डिके।
नव-जीवन सचालिका। जय-जग जननी कालिका।

—मान

---

† २८ दल वाला उल्लाला मात्रिक अर्द्ध-सम छन्दों में देखो।

१४ मात्राओं के छन्द–६१०

प्रतिभा (अन्य नाम— विजात)

प्रत्येक चरण के आदि में लघु और चरणान्त में गुरु रहे तो अच्छा है '—

चरित है मूल्य जीवन का। वचन प्रतिबिम्ब है मन का।
सुयश है आयु सज्जन की। सुजनता है प्रभा धन की॥

—रामनरेश त्रिपाठी

स्वरूपी

चरणान्त मे गुरु लघु का कोई नियम नहीं है। चरण के आदि में द्विकल होना चाहिये —

श्री मनमोहन की मूरति। है तुव सनेह की सूरति।
मैं निज मन यह अनुरूपी। तू मोहन प्रेम 'स्वरूपी'॥

— दास

मर्सी

चरणान्त में यगण या मगण रहता है —

सब घर घर ते व्रज नारी। दधि गोरस बेचन हारी।
सब जूथ जूथ मिलि चीह्ना। जमुना तट मारग लीह्ना॥

—दान लीला

मनमोहन।

प्रत्येक चरण मे आठ और छ पर विराम और अंत मे नगण रहता है —

रखते हैं जो सदय हृदय। मनको समता-मय निरभय।
परहित मे दें तन-मन-धन। जीवन मुकत वही सतजन॥

—मान

हाकलि*

प्रत्येक चरण में प्राय तीन चौकल अन्त मे एक गुरु।

(१)

मैं भी कहती हूँ जाओ। लक्ष्मण को भी अपनाओ।
धैर्य सहित सब कुछ सहना। दोनों सिंह-सदृश रहना॥

—साकेत

(२)

वनकर तुम्हीं उजडते हो। वनकर स्वय, विगडते हो।
मानो, अब यों पिछडो मत। उठो विश्व से बिछडो मत‡॥

—वैतालिक

---

* किसी किसी का मत है कि यदि हाकलि के चारों चरणों में तीन-तीन चौकल न पड़े तो उसे 'मानव' छन्द समझना चाहिये। उदाहरण के दूसरे छन्द का चौथा चरण ऐसा ही है कि उसके आदि मे चौकल नहीं पडता।

‡ हिन्दी में शब्द के अन्त्य अकारान्त वर्णों को प्राय हलवत् ही उच्चारण करते है। 'मत' को 'मत्' ऐसा उच्चारण करने पर 'म' का गुरुवत उच्चारण हो जाता है।

मनोरम

प्रत्येक चरण के आदि में द्विकल तथा अन्त में यगण अथवा भगण रहता है —

लोक-हित करना सदाई। बस यही सच्ची कमाई।
पूज गुरु-गोविंद को नित।'मान' है जो चाहता हित॥
— मान

मोहन (अन्यनाम-सरस)

प्रत्येक चरण में द्विकल, त्रिकल, जगण रहित चौकल, पच-कल का क्रम और तुकान्त मे नगण रहता है।

यह पाइ कै नर तन रतन।
कर ले अरे भगवत भजन।
जो चाहता भव नद तरन।
गुरुदेव की तो ले सग्न॥

सुलक्षण (अन्यनाम-सयुक्ता, मधुमालती)

मोहन के चरणान्त मे रगण आने पर सुलक्षण हो जाता है।

(१)

जिसमे न कोई पाप हो। हिंसा असत्य न ताप हो।
वह काम करने मे कहीं। उनको घृणा होती नहीं॥

(२)

वे सब स्वय दुख झेल कर। जी जान पर भी खेलकर†॥
करते सभी का हैं भला। कोई गया उनसे छला?
—अनघ।

---

† हिन्दी शब्द का अन्त्य अकारान्त यहाँ हलवन् पढ़ा जाता है।

पन्द्रह मात्राओं के छन्द—९८७

उज्वला

प्रति पद में दस और पाँच पर विराम, अन्त में रगण।

धवल रजत परवत हो तवै। अरु पयनिधि को बरनै सनै॥
तनहिं विमल ही ससि की कला। जब न हुत्यो तो जस उज्वला॥

—दास

हंसी (अन्य नाम—चौबोला)

प्रत्येक चरण के अन्त में लघु-गुरु रहता है —

मसक समान रूप कपि धरी। लकहि चलेउ सुमिर नरहरी॥
नाम लकिनी एक निसिचरी। सोकह चलेसि मोहि निदरी॥

—रामचरित मानस

✓ चौपई (अन्य नाम—जयकरी)

चरणान्त में गुरु लघु।

(१)

चहहु जो साँचो निज कल्यान। तौ सब मिलि भारत सतान।
जपौ निरतर एक जबान। हिन्दी हिन्दू हिन्दुस्थान॥

—प्रतापनारायण मिश्र

(२)

हम चौधरी डोम सरदार। अमल हमारा दोनो पार।
सब मसान पर हमरा राज। कफन माँगने का है काज।

—सत्य हरिश्चन्द्र नाटक

(३)

जिनके बल पर खड़ा समाज। रहती है शुचिता की लाज।
उनका त्राण न करना खेद। है अपना ही मूलोच्छेद।

—अनघ

गोपी

इस छन्द के प्रत्येक चरण में त्रिकल, द्विकल, छकल और चौकल का क्रम रहता है और चरणान्त में एक गुरु रहता है—

धरम को चीन्ह अरे भाई। लोक सेवा करि मन लाई।
जनम क्यों व्यर्थ गमावै है। क्यों नहीं हरि गुन गावै है॥

—मान

पुनीत

प्रत्येक चरण के आदि में सम कल के बाद विषम कल तथा अन्त में तगण रहता है—

जब तक करे न पूरा काम। तब तक न ले कभी विश्राम।
जो श्रम करें सुनो हे तात। होते वही बड़े विख्यात।

—मान

१६ मात्राओं के छन्द—१५९७

पादाकुलक

प्रत्येक चरण में चार चौकलों का क्रम रहता है—

सभु प्रसाद सुमति हिय हुलसी। राम चरित मानस कवि तुलसी॥
करइ मनोहर मति अनुहारी। सुजन सुचित सुनि लेहु सुधारी॥

—रामचरित मानस

पादाकुलक के अन्तर्गत —

पद्धरि (अन्य नाम-प्रज्वलय, प्रज्वलिया)

प्रत्येक चरण में आठ आठ पर विराम और अन्त मे जगण होता है —

तुम अमल अनत अनादि देव । नहिं वेद बखानत सकल भेव ।
सब को समान नहिं बैर नेह । निज भक्तन कारन धरत देह ॥

डिल्ला

प्रत्येक चरण में आठ-आठ पर विराम और अन्त में भगण होता है '—

पुनि मन वचन करम रघुनायक । चरण कमल बदउँ सब लायक ॥
राजिव नयन धरे धनु सायक । भगत विपति-भंजन सुख दायक ॥
—रामचरित मानस

अरिल्ल

प्रत्येक चरण के चौकलो मे जगण का निषेध है । अन्त में यगण या दो लघु रहते हैं —

गुंजत मधुकर मुखर मनोहर । मारुत त्रिविधि सदा बहसुन्दर ॥
नाना खग बालकन्हि जिआये । बोलत मधुर उडात सुहाये ॥
—रामचरित मानस

पज्झटिका

प्रत्येक चरण में दो चौकल फिर एक गुरु तथा एक चौकल फिर एक गुरु का क्रम रहता है । चौकलों में जगण का निषेध है ।

समता रख कर एक भलाई—, करना ही है शुद्ध कमाई।
दुनियाँ ममता-मोह-मई है। अपना शत्रु नहीं कोई है॥

मान

उपचित्रा*

प्रत्येक चरण में दो चौकल फिर एक गुरु तथा एक चौकल फिर एक गुरु का क्रम रहता है। चौकलो में कम से कम एक जगण अवश्य रहना चाहिये —

कभी न उसको है सुख मिलता। जो चित में दोनों के खलता।
रखो न रचक मित्र विषमता। सब के हित हो सची समता॥

—मान

चौपाई § (अन्य नाम—रूपचौपाई)

प्रत्येक चरण के अन्त में जगण और तगण का निषेध है अर्थात पदान्त में गुरु के बाद एक लघु नहीं आता।

---

*मात्राओं के गुरु-लघु के क्रम से चौपाइयों के अनेक सूक्ष्म भेद किये जा सकते हैं।

§ चौपाइयों की रचना में द्विकल और त्रिकल वाले शब्दों का ही प्रयोग करना चाहिये। त्रिकल (विषम) वर्ण समूह के बाद त्रिकल वर्ण समूह ही रखना चाहिये समकल (द्विकल या चौकल) नहीं। जिससे चौपाइयों की गति न बिगड़ने पावे। हाँ, त्रिकल के बाद जगण (चौकल) रखा जा सकता है क्योंकि उसके आदि के दो वर्ण

(१)

नहिं सतसग जोगु जपु जागा । नहिं दृढ कमल चरन अनुरागा ॥
एक बानि करुना निधान की । सो प्रिय जाके गति न आनकी ॥
—रामचरित मानस

'त्रिकल' का काम दे देते हैं—यथा 'हृदय विचारि सभु प्रभुताई' में 'हृदय' त्रिकल के बाद 'विचारि' जगण (चोकल) के आदि के दो वर्ण 'विचा' में त्रिकल के नियम का पालन हो गया।

समकलवाली चौपाइयाँ पढने मे और सुनने में भली लगती हैं। चौपाई के दो चरण अर्द्धाली कहलाते है।

पादाकुलक और चोपाई में केवल इतना अतर है कि पादाकुलक के प्रत्येक चरण मे चार चोकलों का होना आवश्यक है और चोपाइयों में होने न होने का नियम नहीं है। पादाकुलक वास्तव में चौपाई का ही एक विशेष रूप है। प्राय पादाकुलक और चौपाइयों का समिलित प्रयोग पाया जाता है। यथा—

"उमा राम सुभाव जेहि जाना। ताहि भजनु तजि भाव न आना ॥
सरन गये प्रभु ताहु न त्यागा। बिस्व-द्रोह-कृत अघ जेहि लागा ॥

इसके दूसरे और तीसरे चरण मे पादाकुलक और पहले-चाथे में चौपाइ के चरण है। फिर भी चारो चरण मिलकर चौपाई कहलाते ह। तात्पर्य यह हे कि 'पादाकुलक' को चोपाई कह सकते हैं पर चौपाई को पादाकुलक नहीं कह सकते '

(७)

देहु भगति रघुपति अति पावनि । त्रिविध-ताप भव दाप-नसावनि ॥
प्रनत काम सुर-धेनु कलपतरु । होइ प्रसन्न दीजइ प्रभु यह बरु ॥

—रामचरित मानस

इन्दुकला * (अन्य नाम—पदपादाकुलक)

प्रत्येक चरण के आदि मे एक द्विकल, इसके पश्चात् क्रमश अन्त तक प्राय द्विकल रहते हैं । जहाँ द्विकल के बाद त्रिकल आ जाता है वहाँ आगे एक त्रिकल और रख देते हे ।

तुलसी, यह दास कृतार्थ तभी । मुँह मे हो चाहे स्वर्ण न भी ।
पर एक तुम्हारा पत्र रहे । जो निज मानस कवि कथा कहे ॥

—साकेत

प्रसाद (अन्य नाम—शृ गार)

प्रत्येक चरण के आदि में त्रिकल (III, SI, IS) इसके पश्चात् द्विकल तथा अन्त मे गुरु लघु या लघु-गुरु ।

---

* इन्दुकला और चौपाइ की गति में अंतर है । इस गति के अंतर का कारण मात्रा-क्रम है । चौपाइ के आदि में सम कल के बाद सम कल और विषम कल के बाद विषम कल रहते हैं । परन्तु इन्दुकला के आदि में सदा द्विकल रहता है और शेष चौदह मात्राओं में द्विकल तो आ सकते हैं पर अन्त तक चौकल नहीं आ सकते । चरण में जहाँ द्विकल के बाद त्रिकल आता है वहाँ गति ठीक रखने के लिए एक त्रिकल और रखना पड़ता है ।

(१)

धरा पर धर्मादर्श-निकेत, धन्य है स्वर्ग-सदृश साकेत।
बढे क्यों आज न हर्षोद्रेक ? राम का कल होगा अभिषेक ॥

(२)

देव ! वे कुञ्जें उजडी पडी। और वह कोकिल उड ही गई।
हटाई हमने लाखों बार। किन्तु वे घडियाँ जुड ही गईं ॥

सिंह विलोकित *

इस छन्द में प्रत्येक चरण के कुछ अन्त्यवर्ण क्रमश उसके आगेवाले चरण के आदि मे आजाते है।

जब सगिन मोहन गमनत बनको।
बन को बरनत गिरि उर छनको ॥
छन को तकि न जात ब्रज तन को।
तनको रहै सँभार न तन को ॥
—समनेस

१७ मात्राओं के छन्द-२५८४

धीर

नवीं आठवीं मात्राओं पर विराम, चरण के आदि में द्विकल और चरणान्त में गुरु-लघु —

* सिंह का स्वभाव है कि वह अपनी गर्दन मोड मोड दायें बायें देखता हुआ चलता है। इस छन्द का रचना क्रम सिंह विलोकित ढग का है। प्रत्येक चरण के दाहिनी ओर के कुछ अन्त्य वर्ण बाईं ओर दूसरे चरण के आदि में चले आते हैं।

बरस रे आजा छुड़ा यह अंक। भानुकुल के निष्कलंक मयंक।
मिल गया मेरा मुझे तू राम। तू वही है भिन्न केवल नाम॥

—साकेत

मधुप (अन्य नाम—चन्द्र)

प्रत्येक चरण के आदि में त्रिकल और द्विकल फिर क्रमश द्विकल के आगे द्विकल और त्रिकल के आगे त्रिकल का क्रम और अन्त में कम से कम एक गुरु रहता है—

(१)

चाहता हूँ कि मनुष्य रहूँ मैं। और अपने को वही कहूँ मैं।
बनूँ बस मनुष्यता का मानी। यही हो मेरी एक निशानी॥

(२)

प्रकृति है गीली मिट्टी ऐसी। पका लो गढ़कर चाहे जैसी।
धूप से तरु भी तो जलते हैं। पथिक ऐसे में भी चलते हैं।

(३)

स्वय मैं नहीं जानता क्या हूँ। मानता आत्मा की आज्ञा हूँ।
समय मार्गी हूँ नहीं समय हूँ। नहीं मारुत, पर मारुत-मय हूँ।

—अनघ

(४)

चले फिर रघुवर मा से मिलने। बढ़ाया घन सा प्राणानिल ने।
चले लक्ष्मण भी पीछे ऐसे। भाद्र के पीछे आश्विन जैसे॥

—साकेत

१८ मात्राओं के छन्द—४१८१

गुरुपाद

चौपाई के आदि में द्विकल (णगण) बढा देने से इस छन्द का चरण बन जाता है। पदान्त में तगण और जगण का निषेध है :—

(१)

जब रहेउ एक दिन अवध अधारा ।
तब समुझत मन दुख भयेउ अपारा ॥
हा कारन कवन नाथ नहिं आयेउ ।
प्रभु जानि कुटिल किधौं मोहि बिसरायेउ ॥

माली

प्रत्येक चरण के आदि में द्विकल, फिर क्रमश जगण रहित चौकल और अन्त में कम से कम एक गुरु —

मुरली अधर मुकुट सिर, दीन्हे है।
कटि पटपीत लकुटा कर, लीन्हे है।
को जाने कब आयो, सुनि आली।
उर ते कढत न केहूँ, बनमाली ॥
—दास

१९ मात्राओं के छन्द—६७६५

मोहनी

तेरह और छ के विराम से उन्नीस मात्राएँ, चरणान्त में दो गुरु :—

बिन घनस्याम सुजान तें, भामिनि नहिं सोहै।
गरब न गहिली आनि उर, करि नाहक को है।
मो-सम सुन्दर आन नहिं, यह जानि जिय जोहै।
तो तन छवि सम साथ घन, छन छनि मन मोहै॥
—मगनेस

पीयूष वर्ष

दसवीं नवीं मात्राओं पर विराम, चरणान्त में लघु-गुरु* —

जो सुयश जग में कमाया युद्ध नहीं।
उस अबुध के हाथ आया कुछ नहीं॥
ज्ञान विद्या-बल कमाओ और यश।
जीत अपने को करो सब लोक वश॥
—रामनरेश त्रिपाठी

२० मात्राओं के छन्द—१०९४६

हंसगति

ग्यारह और नव मात्राओं पर विराम होता है। पदान्त में गुरु लघु का कोई नियम नहीं है —

जगत-ईस नर-भूप, सिया ढिग सोहत।
गर बैजन्तीमाल, सुजन मन मोहत॥
चरन चारु की सोभा निरखि पुरन्दर।
मगन नयन है गये, प्रमुद कर सुन्दर॥
—गदाधर

---

* चरणान्त में सगण रहने पर कोई कोई इसे आनन्दवर्द्धक भी कहते हैं। यदि इसके अन्त का गुरु हटा दो तो धीरवृन्द सत्रह मात्रा का बन जाता है।

२१ मात्राओं के छन्द—१७७११

प्लवंगम (अन्यनाम—प्लवंगा, चान्द्रायण, अरल)

प्रत्येक चरण में छकल, द्विकल, दो त्रिकल जगण रहित चौकल और लघु-गुरु का क्रम रहता है —

(१)

मेरा प्रिय हिंडोल निकुंजागार तू ।
जीवन-सागर, भाव-रत्न भांडार तू ॥
मैं हूँ तेरा सुमन, चढ़ूँ-सरसूँ कहीं ।
मैं हूँ तेरा जलद, चढ़ूँ-बरसूँ कहीं ॥

(२)

जय गंगे, आनंद-तरंगे, कलरवे,
अमल अचले, पुण्य-जले दिवसम्भवे ।
सरस रहे यह भरत-भूमि तुमसे सदा ।
हम सब की तुम एक चलाचल सम्पदा ।

—साकेत

२२ मात्राओं के छन्द-२८६५७

लावनी (अन्य नाम—राधिका)

प्रत्येक चरण में तेरह और नव मात्राओं पर विराम और चरणान्त में प्राय मगण रहता है —

(१)

तरु-तले विराजे हुए,—शिला के ऊपर,
कुछ टिके,—धनुष की कोटि टेक कर भू पर,

निज लघु सिद्धि-सी, तनिक घूम कर तिरछे,
जो सींच रही थीं पर्णकुटी के बिरछे,

(७)

उन सीता को, निज मूर्तिमती माया को,
प्रणयप्राणा को और कान्तकाया को,
यों देख रहे थे राम अटल अनुरागी,
योगी के आगे अलख ज्योति ज्यों जागी।

—साकेत

(३)

सबने सब दोष बिसार दिव्य गुण धारे।
तज बैर निरन्तर प्रेम प्रसंग प्रचारे।
चेतन जीवित ऋषि देव पितर सत्कारे।
कर दिये दूर खले गर्व कुमति के मारे॥

—नाथूराम 'शंकर' शर्मा

कुण्डल

प्रत्येक चरण में बारह और दस मात्राओं पर विराम और चरणान्त में दो गुरु होते हैं —

तू दयालु दीन हौं तु दानि हौं भिखारी।
हौं प्रसिद्ध पातकी, तु पाप-पुञ्ज हारी॥
नाथ तू अनाथ को, अनाथ कौन मो सो।
मो समान आरत नहिं आरतहर तोसो॥
ब्रह्म तू हौं जीव तू ठाकुर हौं चेरो।
तात मात गुरु सखा तु, सब विधि हित मेरो॥

तोहि मोहि नाते अनेक, मानिये जु भावै ।
ज्यों त्यों तुलसी कृपालु चरन सरन पावै ॥
—विनय-पत्रिका

उड़ियाना*

कुण्डल के पदान्त में केवल एक गुरु रहने पर उडियाना छन्द हो जाता है—

ठुमकि चलत रामचन्द्र बाजत पैजनियाँ ।
धाय मातु गोद लेति दशरथ की रनियाँ ॥
तन मन धन वारि मृदुल बोलती बचनियाँ ।
कमल बदन बोल मधुर, मंद सी हँसनियाँ ॥
—गोस्वामी तुलसीदास

२३ मात्राओं के छन्द—४६३६८

हीरक (अन्य नाम—हीर)

इस छन्द के प्रत्येक चरण में तीन छकल और अन्त में रगण रहता है—

दण्डक बन पावन वर ध्यावन हर मुक्त के ।
विप्र घरन भील तरन गीध करन मुक्त के ॥
राम-चरन ताक सरन वाकवरन मान के ।
दोषदमन सोकसमन मोच्छभवन ज्ञान के ॥
—हरदेव

*कुण्डल और उड़ियाना को गाने वाले प्राय प्रभाती राग में गाते हैं ।

२४ मात्राओं के छन्द—७५०२५

रोला*

इस छन्द के प्रत्येक चरण में (छकल, द्विकल और त्रिकल के क्रम से) ग्यारह तथा (त्रिकल, द्विकल, छकल और द्विकल के क्रम से) तेरह के विराम से चौबीस मात्राएँ होती हैं। चरणान्त में गुरु-लघु का कोई नियम नहीं है। फिर भी दो गुरु रखना अच्छा है —

---

* अधिकांश प्रमुख कवियों ने रोला की जैसी रचना की है उससे स्पष्ट होता है कि बहुमत रोला की इसी परिभाषा के पक्ष में है कि रोला "छन्द के एक चरण में ग्यारह मात्राओं पर यति हो और फिर तेरह पर पदान्त।" इसी तरह "सोरठा" छन्द का पहला और तीसरा चरण ग्यारह मात्राओं का होता है तथा दूसरा और चौथा तेरह का, यह सर्व-सम्मत परिभाषा है। फिर रोला छन्द के दो चरणों में और सोरठे के चार चरणों में अन्तर क्या रहा? पिंगल-ग्रन्थों में इस प्रश्न पर विशेष ध्यान नहीं दिया गया है, प्रत्युत सोरठे की परिभाषा "दोहा उलटे सोरठा" कह कर दोहे के गले वृथा ही बाँध रखी है। रोला छन्द के पदान्त की तेरह मात्राओं में और सोरठे के दूसरे चौथे चरणों में की तेरह मात्राओं के द्रगणादि की स्थिति में अन्तर है। रोला में क्रमशः त्रिकल, द्विकल, छकल, और द्विकल समूहों पर गति विराम होना चाहिए। सोरठे में क्रमशः छकल चौकल, एककल और द्विकल मात्रा समूहों पर गति विराम होना चाहिए। सोरठे के पहले और तीसरे

है ऐसो को मनुज अधम जीवित जग माहीं।
६ २ ३ ३ २ ६ २
जाके मुख सों वचन कबहुँ निकस्यो यह नाहीं॥
"जन्मभूमि अभिराम यही है मेरी प्यारी।
वारों जापै तीन-लोक की गणना सारी॥"

—जगन्नाथ प्रसाद चतुर्वेदी

(२)

हे देवो, यह नियम सृष्टि में सदा अटल है।
रह सकता है वही सुरक्षित, जिस में बल है।
निर्बल का है नहीं जगत में कहीं ठिकाना।
रक्षा-साधन उसे प्राप्त हों चाहे नाना।

—कामताप्रसाद गुरु

चरणों का अन्त नद (गुरु-लघु) से होना जरूरी है। रोला के प्रथम चरणान्त में नद हो तो बहुत अच्छा होता है, परन्तु आवश्यक नहीं है।

दोहे से सोरठे का यही सम्बन्ध है कि हर सोरठे का उलटा दोहा हो सकता है परन्तु हर दोहे का उलटा-सोरठा नहीं हो सकता, क्योंकि दोहे के पहले और तीसरे चरण सदा तेरह मात्राओं के ही नहीं होते, बारह मात्राओं के भी होते हैं। इसीलिए "दोहा उलटे सोरठा" कहना उलटी बात है। "सोरठा उलटे दोहा" कहना चाहिए।

—रामदास गौड़

(३)

मन प्रसन्न थिर सौम्य †, तुम्हें क्षण एक न भूलें,
प्रभु का रहे प्रकाश, कमल सा नित नित फूलें।
मानें सदा विभूति, तुम्हारी सचराचर को,
तुम्हें जान सर्वत्र न समझें कुछ भी डर को ॥

—रामदास गौड़

शोभन (अन्य नाम—सिंहिका)

चौदह, दस पर विराम और पदान्त में जगण।

देखु गुरु की ओर कवि तू, भरत बन्धु, निषाद।
चले जावें चढे परवत, मन न नेकु विषाद ॥
स्वेद-बुंद लगात मस्तक, हँफत पाँव नढाव।
सिद्ध कारज दिखतजन जन, बढत मन त्यहि चाव ॥

—शिवरत्न शुक्ल

रूपमाला (अन्य नाम – रामगीतिका, मदन)

चौदह, दस पर विराम और पदान्त में गुरुलघु।

वेद जिसको 'नेति' कह कर हो रहे हैं मौन !
मूढ ऐसे राम का तू, नाम रटता क्यों न ?
भाव के भगवान भूखे, चाहते क्या और ?
पाय ऐसे नाथ को मत, पड पराई पौर !

—मान

---

† यदि रोला की ग्यारहवीं मात्रा चारों चरणों में लघु रहे तो उसे काव्य छन्द कहते हैं।

२५ मात्राओं के छन्द—१२१३९३

गगनाङ्गना

सोलह, नव पर विराम, और अन्त में रगण रहता है—

निरखि सौतिजन हृदयनि रहै गरउ को ढग ना।
पटतर हित सतकवि के मन को, मिटै फलगना॥
बदन उघारि दुलहिया छनकु बैठि करि अगना।
चद पराजय साजहि लजित करहि गगनागना॥

मुक्तामणि

प्रत्येक चरण में तेरह, बारह पर विराम और अन्त में दो गुरु होते है—

कुण्डल ललित कपोल पर, सुछवि देत है ऐसे।
घन में चपला दमकि अति, लग नीकी दुति जैसे॥
चन्दन खौर विराज शुचि, मनु लछमी अति राजै।
सब आभा तिहुँ लोक की, मुख के आगे लाजै॥

—नायक

२६ मात्राओं के छन्द—१९६४१८

विष्णुपद

प्रत्येक चरण में सोलह, दस पर विराम, चरणान्त में गुरु।

मेरे कुँवर कान्ह बिनु सब कछु, वैसहि धरयो रहै।
को उठि प्रात होत ल मासन, को कर नेति गहै॥

सूने भवन जसोदा सुत के, गुन गुनि सूल सहे।
दिन उठि घेरत ही घर ग्वारिनि, उरहनि कोउ न कहे॥

—सूरदास

गीता

प्रत्येक चरण में चौदह, बारह पर विराम चरण के आदि में द्विकल और अन्त मे गुरु-लघु रहता है —

सोचहु सबै मिलि करहु भारत वृद्धि जग विख्यात।
धोवहु, लगावत कालिमा जो जगत तुम पर भ्रात।
तजि मोह निद्रा उठहु, देखहु, होत का चहुँ ओर,
सन्ध्या समय नियरान लाग्यो तुम्हें अजहुँ न भोर।

—मिश्रबन्धु

झूलना

सात, सात, सात और पाँच पर विराम, प्रत्येक चरण के आदि मे द्विकल, चरणान्त में गुरु लघु रहता है —

ऋषि श्रृंग के मख मे यहाँ, लागे सबै, हम आज।
है बालमति अब ही तिहारो, राज को नव काज॥
तुम धर्म नित्य प्रजानुरंजन, निज प्रमाद विहाइ।
सञ्चित जस धन प्रचुर ही, रघुवंस की प्रभुताइ॥

—उत्तर-रामचरित-नाटक

गीतिका

चौदह, बारह पर विराम और चरणान्त में लघु गुरु रहता है, परन्तु रगण कर्ण प्रिय होता है। मात्रा-क्रम मे तीसरी दसवीं सत्रहवीं और चौबीसवी मात्रा लघु रहने का भी नियम है —

चित्त-वृत्ति उदार, भाव-विशाल, मित्र जहान हो।
वीरता, गभीरता, आदर्श उच्च महान हो।
भीष्म-अर्जुन के सदृश कर्त्तव्य-पालन ज्ञान हो।
सत्य-पथ से डिग न पावे वह हृदय बलवान हो॥

—मान

२७ मात्राओं के छन्द—३१७८११

हरिपद* (अन्य नाम—कबीर, समुन्दर—सरसी)

सोलह, ग्यारह पर विराम चरणान्त में गुरु-लघु।

(१)

काम क्रोध-मद-लोभ-मोह की, पँचरगी कर दूर।
एक रग तन मन-वाणी मे, भर ले तू भरपूर॥
प्रेम-प्रसार न भूल भलाई, वैर-विरोध बिसार।
भक्ति-भाव से भज 'शकर' को, भक्ति दया उर वार॥

—नाथूराम 'शकर' शर्मा

---

* इसी छन्द के दो चरणों के साथ एक और टुकड़ा जोड़ कर लोग होली के कबीर गाते हैं —

चाल ढाल अपनो सब छोड़ी टटे माहिबी ठाट।
गिटपिट बाबू देहातिन मे समझे अप को लाट।
खूब अब रँग लाई अँगरेजी है।

(२)

डूब बची लक्ष्मी पानी में सती आग में पैठ ।*
जिये उर्मिला करे प्रतीक्षा सहे सभी घर बैठ ॥
सहन दिया तो भला सहन क्या होगा तुझे अदेय ।
प्रभु की ही इच्छा पूरी हो जिस में सब का श्रेय ॥

—साकेत

२८ मात्राओं के छन्द—५१४२२९

सार (अन्य नाम—दोवै, ललित पद, नरेन्द्र)

(१)

सोलह, बारह पर विराम, अन्त में प्राय दो गुरु ।
हम हैं वाहि पवन की बानी जो इत उत नित धावै,
हा हा करति विराम हेतु पै कतहुँ विराम न पावै ।
जैसो पवन सुनौ वैसोई जीवन प्राणिन केरो,
हाहाकार उसासन की है झंझावात घनेरो ॥

—रामचन्द्र शुक्ल

(२)

तन तज देना, धर्म न तजना, यही वीर गौरव है ।
धर्म-कर्म से हीन मनुज जीवन जग में रौरव है ।

*कोई कोई रीतिकार इस छन्द के दो चरणों के दो दल मानकर 'हरिपद' कहते हैं ।

जीवन-पथ पर बढ़, कर क्षण मे छिन्न मोह के बंधन।
फडक उठे फिर दृढ शरीर, फिर हो प्राणो में स्पन्दन ॥
—प्रवासीलाल वर्मा

✓ हरिगीतिका

सोलह, बारह पर विराम , चरणान्त में लघु गुरु रहता है पर रगण प्राय कर्ण-मधुर होता है। मात्रा-क्रम से पाँचवीं, बारहवीं, उन्नीसवीं तथा छब्बीसवीं मात्राएँ लघु रहती हैं —

मन जाहि राचेउ मिलिहि सो बरु सहज सुदर साँवरो।
करुनानिधानु सुजानु सीलु सनेहु जानत रावरो ॥
एहि भाँति गौरि असीस सुनि सिय सहित हिय हरषित अली।
तुलसी भवानिहि पूजि पुनि पुनि मुदित मन मदिर चली ॥
—रामचरित मानस

✓ शुद्धगा (अन्य नाम विधाता, वेतवै)

चौदह, चौदह पर विराम, इसके चरणान्त में प्राय मगण रहता है। मात्रा-क्रम से इसकी पहली, आठवीं और पन्द्रहवीं मात्राए लघु रहती हैं —

जतीले जाति के सारे प्रबन्धो को टटोलेंगे।
जनो को सत्य सत्ता की तुला से ठीक तोलेंगे ॥
बनेगे न्याय के नेगी खलों की पोल खोलेंगे।
करेंगे प्रेम की पूजा रसीले बोल बोलेंगे ॥
—नाथूराम शकर शर्मा,

कलनाद

इस छन्द का प्रत्येक चरण चौदह मात्रा के स्वरूपी छन्द का दूना होता है —

यह ज्योति नहीं ज्वाला की है मनोमोहिनी माया,
रजनी रवि की अनुगामिनि तम है प्रकाश की छाया।
क्षण-भगुरता ही जीवन की है सच्ची परिभाषा,
अनुभूति निराशा है यदि जीवन विभूति है आशा॥

— बालकृष्ण राव

यह रात मौन व्रत धारे, ओढे यह चादर काली,
लक्षावधि झिलमिल आँखें, क्यो दिखा रही मतवाली!
अतर तर का अँधियारा यह फैल पड़ा भूतल मे,
सब ओर यही है छाया वन उपवन में जल-थल में॥

—नवीन

२६ मात्राओं के छद =३२०४०,

मरहटा

इस छन्द के प्रत्येक चरण में दस आठ और ग्यारह पर विराम चरणान्त में गुरु लघु रहता है —

मन दया-मया मय, शुचि समता-मय, रख दीनों का ध्यान।
मुख से निकले वच, पाले सच-मच, हो सम्मान कहाँ न!
वश में रख मन को, भूल न पन को, कर भगवत-गुन गान।
स्वाहा हो सर्वस, रह मत परबस, रख मानी बन 'मान'॥

—मान

२० मात्राओं के छन्द—१३४६२६९

चवपैया

दस, आठ और बारह पर विराम, चरणान्त में एक गुरु रहता है। यों तो कई गुरु रह सकते हैं पर एक सगण और एक गुरु कर्ण-मधुर होता है—

(१)

सिर मोर पखौना, बनो सुठौना, मंजु मुरलिया बाजै,
अति छूटी अलकें, मुख पर झलकें, तिन पर गोरज भ्राजै।
गौवन के पाछे, कछनी काछे, हाथ लकुटिया सोहै,
चलि निरखो माई, कुँअर कन्हाई, मन्मथ को मन मोहै॥

—हरदेव

(२)

भये प्रगट कृपाला, परम दयाला, कौसल्या-हितकारी।
हरपित महतारी, मुनि-मनहारी, अद्भुत रूप विचारी॥
लोचन अभिराम, तनु घनस्याम, निज आयुध भुज चारी।
भूषन बनमाला, नयन विसाला, सोभा सिंधु खरारी॥

—रामचरित मानस

चौबोला

सोलह और चौदह पर विराम, चरण के अन्त में लघु गुरु।

(१)

बायीं ओर धनुष की शोभा, दायीं ओर निषंग छटा,
वाम पाणि में प्रत्यंचा है, पर दक्षिण में एक जटा।

आठ मास चातक जीता है, अपने घन का ध्यान किये,
आशा कर निज घनश्याम की, हमने बरसों बिता दिये ।

(२)

दीन भाव से कहा उन्होंने—बहन, एक दिन बहुत नहीं,
बरसों निराहार रहकर ये आँखें रया भर गईं कहीं ।
विवश लौट आई रोकर मै, लाई हूँ नैवेद्य यहाँ ।
आता हूँ मैं—कहकर देवर, गये उन्हीं के पास वहाँ ॥

—साकेत

(३)

हृदय सिंधु की किस भँवरी में नाच रहे हो जीवन धन !*
जीवन की नैया को खेते, बहक रहे किस ओर सजन ?
झीनी झीनी झाँकी सी कुछ, आँख मिचौनी सी करती,
तेरी सुछवि छबीली 'नटवर' झाँक रही लजती डरती ।

—'नटवर'

ताटंक

सोलह और चौदह पर विराम, चरणान्त में मगण ।

ग्रास हुआ आकाश, भूमि क्या, बचा कौन अँधियारे से
फूट उसी के तनु से निकले तारे कच्चे पारे-से !
विकच व्योम-विटपी को मानो मृदुल बयार हिलाती है,
अचल भर भर कर मुक्ता-फल खाती और खिलाती है ।

---

*हिन्दी में शब्द के अन्त का अकारान्त वर्ण हलन्त पढ़ा जाता है ।

लावनी ताटक का ही एक भेद है। जिस ताटक के चरणान्त मे लघु गुरु का कोई नियम न हो उसे लावनी समझना चाहिये। ख्याल गानेवाले बाईस मात्रावाली लावनी से पृथक् करने के लिये इसे लँगडी लावनी कहते हैं —

(१)

एक न मैं होता तो भव की क्या असख्यता घट जाती ?
छाती नही फटी यदि मेरी तो धरती ही फट जाती ?
हाय ! नाथ, धरती फट जाती हम तुम कहीं समा जाते
तो हम दोनो किसी तिमिर में रहकर कितना सुख पाते

(२)

नाथ, न तुम होते तो यह व्रत कौन निभाता तुम्हीं कहो ?
उसे राज्य से भी महार्ह धन देता आकर कौन अहो ?
मनुष्यत्व का सत्व-तत्व यों किसने समझा-बूझा है ?
सुख को लात मारकर तुमसा कौन दुखों से जूझा है ?
—साकेत

३१ मात्राओं के छन्द—२१७८३०६

वीर (अन्यनाम—आल्हा छन्द *)

सोलह और पन्द्रह पर विराम, चरणान्त मे गुरु लघु रहता है। एक तरह से चौपाई और चौपई मिलकर वीर छन्द बनता है —

* पहले यह छन्द वीररस मे ही प्रयुक्त होता था। वीररस का छन्द होने से ही आल्हा छन्द इसका नाम भी पडा है। अब दूसरे भावों को भी इस छन्द में व्यक्त करने लगे हैं।

(१)

जिनके रहे विचार सदा दृढ़ मन में रमैं देस उपकार।
नवगुन गन पर भक्ति जिन्हें हो मिथ्या शब्द न सकै उचार ॥
उच्च पुरुष जो दम्भ द्वेष पाखंड तम गति के हो पार।
तिन ऐसी सन्तति के हूँ मैं सभी प्रकार घृणित औ ख्वार ॥
—मिश्रबन्धु

(२)

मानस की फेनिल लहरों पर किस छवि की किरण अज्ञात,
स्वर्ण वर्ण में लिखती अविदित तारक लोकों की शुचि बात ?
अलि ! किन जन्मों की मिश्रित-सुधि बजा सुप्त तन्त्री के तार,
नयन नलिन में बँधी मधुप सी करती मर्म मधुर गुंजार ।
—सुमित्रानन्दन पंत

गोपी शृंगार

पन्द्रह और सोलह पर विराम तथा चरणान्त में गुरु लघु अथवा लघु गुरु रहता है। अर्थात् गोपी और शृंगार छन्द मिल कर गोपी शृंगार बनता है —

कहा व्याकुल हो मैंने भी, "तुम्हारे कोमल कर से यही—
चाहता पीना मैं प्रियतम, नशा जिसका उतरे ही नहीं।"
हृदय की बात ! नवीन कली,-सदृश हम खोल कह चुके हार !
कुन्द-मल्लिका सदृश वह भी, चुप रहे जीवन धन मुस्काय ॥
—प्रसाद

३२ मात्राओं के छन्द ३५२४५७८

त्रिभंगी

प्रत्येक चरण मे दस, आठ, आठ और छ मात्राओ पर विराम, चरणान्त मे गुरु रहता है। इसके चौकलो मे जगण वर्जित है --

यहु शृ गे जाकी, मुकट-प्रभा की, नील-घटा की, द्युति जीते।
सीतल जल वारे, श्रवत अपारे, झरना भारे, लहिरीतें॥
द्रुम-पु ज नवेली, जिटी सुहेली, पहुपनि मेली, थिर थहरें।
मकरद बटोरें, जहँ चहुँ ओरे, झमकि झकोरें, मृदु फहरें॥

—मालती-माधव नाटक

रूपसवैया*

इस छन्द का प्रत्येक चरण चौपाई का दूना होता है --

दुख से दग्ध ताप से पीडित, चिन्ता से मूर्च्छित मन से कृश।*
श्रम से शिथिल मृत्यु से शकित, विभ्रम-वश कर पान विषय विष॥
जग-प्रपच की घोर दुपहरी,—में रे पथिक प्यास से विह्वल!
भक्ति-नदी मे क्यो न नहाकर, कर लेता है जीवन शीतल॥

—रामनरेश त्रिपाठी

---

*रूप सवैया के चरणान्त में भगण रहने पर कोई कोई उसे समान सवैया कहते हैं।

मराल

इस छन्द का प्रत्येक चरण प्रसाद छन्द के एक चरण का दूना होता है —

(१)

हिमालय के आँगन में उसे, प्रथम किरणों का दे उपहार।
उषा ने हँस अभिनंदन किया और पहनाया हीरक-हार।
जगे हम लगे जगाने विश्व, लोक में फैला फिर आलोक।
व्योम-तम पुंज हुआ तब नाश, अखिल संसृति हो उठी अशोक॥

—जयशंकर प्रसाद

(२)

रचाया था हिल मिल कर रास, रात परियों ने हो बेहोश।
हार मोती का टूटा गिरा, आप क्यों कहते उसको ओस।
देख ऊषा का राग-सुहाग, उठ चली रजनी भरकर रोष।
चू पड़े नयनों से कुछ बूँद, लोग भ्रम से कहते हैं ओस॥

—बेनीपुरी

(३)

प्रतिज्ञा करि राखी युग मित्र, परस्पर व्याहन निज संतान,
निरंतर सहृदय सरल पवित्र, दिवाचत ताको सुधि मतिवान।
चारु सच्चरित बुद्धि अभिराम, असाधारन गुन मंगल मूल,
पठइ सुत कीन्हों समुचित काम, करन सम्बध सुहृद अनुकूल॥

—मालती माधव नाटक

मत्तसवैया

इसका चरण इन्दुकला के एक चरण का दूना होता है।

विचलित हो अमल न मौन रहे निष्ठुर शृंगार उतरता हो।
क्रन्दन, कम्पन, न पुकार बने निज साहस पर निर्भरता हो।
अपनी ज्वाला को आप पिये नव नील कंठ का छाप लिये।
विश्राम श्रान्ति को शाप दिये ऊपर, ऊँचे, सब झेल चले॥

—जयशंकर 'प्रसाद'

दण्डकला, पद्मावती और दुर्मिल

इन छन्दों में से प्रत्येक के एक-एक चरण में दस, आठ और चौदह के विराम से बत्तीस मात्राएं होती हैं। दण्ड कला के चरणान्त में सगण पद्मावती के चरणान्त में दो गुरु और दुर्मिल के चरणान्त में सगण और दो गुरु रहते हैं। चौकलों में जगण का निषेध है।

दण्डकला

(१)

जय जय नँदनंदा, आनँदकंदा, असुरनिकंदा देव हरे।
जय जय भव-भंजन, जन मन-रंजन, नाम लेत खल कोटि तरे।
जय यदुकुल भूषण, दनुजन दूषण, करुणा कर प्रभु टेर सुनो।
जय संत सहायक, सब सुखदायक, दुख दारिद के सीस धुनो॥

—हरदेव

(२)

फलफूलनि ल्यावै हरिहिं सुनावै, है या लायक भोगनिकी।
अरु सब गुन पूरी, स्वादनि रूरी, हरन अनेकन रोगनिकी।

हँसि लेहि कृपानिधि लखि योगी सिधि, निदहिं अपने योगनकी।
नभ ते सुर चाहैं भागु सराहैं, वारन दण्डक लोगनकी ॥
—दास

पद्मावती

यद्यपि जग कर्ता, पालक हर्ता, परिपूरण वेदन गाये।
प्रभु तदपि कृपाकरि, मानुस वपु धरि, थल पूँछन हम सन आये।
सुन सुरवर नायक, राक्षस घायक, रक्षहु मुनि जन यश लीजै।
शुभ गोदावरितट, विशद पंचवट, पर्णकुटी प्रभु तहँ कीजै ॥
—भानु

दुर्मिल

जय जय रघुनंदन, असुर निकंदन, कुल मंडन यश के धारी।
जन मन सुखकारी, विपिन विहारी, नारि अहिल्यहिँ सी तारी।
सरनागत आयो, ताहि बचायो, राज विभीषन को दीन्हों।
दसकंध विदारो, पथ सुधारो, काज सुरन जन को कीन्हो ॥
—गोस्वामी तुलसीदास

मात्रिक दण्डक

३७ मात्राओं के छन्द

करखा

आठ, बारह, आठ और नव पर विराम, चरणान्त में यगण।

नमो नरसिंह, बलवंत नरसिंह प्रभु,
सत हित काज, अवतार धारो।

खभ तें निकसि, भू हिरनकश्यप पटक,
झटक दै नखन, झट उर बिदारो ।
ब्रह्म रुद्रादि, सिर नाय जय जय कहत,
भक्त प्रहलाद, निज गोद लीनों ।
प्रीति सों चाटि, दै राज सुख साज सब,
नरायनदास, वर अभय दीनों ॥

—छन्द प्रभाकर

झूलना (२)

दस, दस, दस और सात पर विराम चरणान्त में यगण।

जयति खल-खडिनी, चड-मुख-मर्दिनी,
भगत-भय-भजिनी, दु खहारी ।
दुष्ट-दल-गजनी, दास-मन-रजनी,
मोह-मद-हारिनी, ज्ञानकारी ।
देव-मुनि-रच्छिनी, दनुज कुल-भच्छिनी,
कलुप कलि कल्पिनी, शक्तिभारी ।
दीन-जन पालिनी, घोर-अघ घालिनी,
धन्य जगदंब जय, जय तिहारी ॥

—काव्य शिक्षक,

४० मात्राओं के छन्द

विजया

दस दस, दस, दस पर विराम, चरणान्त में प्राय रगण रहता है —

सित कमलवससी, सीतकर असंसी,
विमल विधि हंससी, हीरवर हारसी।
सत्य गुन सत्वसी, सांतरस तत्वसी,
ज्ञान गौरवत्वसी, सिद्धि विस्तारसी।
कुंदसी कासंसी, भारतीबाससी,
सुरतरुनिहारसी, सुधारस सारसी।
गंग जल धारसी, रजत के तारसी,
कीर्ति तव विजय की सभु आगारसी॥

—दास

मदनहर

इसके प्रत्येक चरण में दस, आठ, चौदह, आठ पर विराम, आदि में दो लघु और अन्त में एक गुरु रहता है —

सखि लखि यदुराई छवि अधिकाई,
भाग भलाई जान परै, फल सुकृति करै।
अति कांति मदन मुख, होतहि सन्मुख,
'दास' हिये सुख भूरि भरै, दुख दूरि करै।
छवि मोर पखन की, पीत बसन की,
चारु भुजन की चित्त अरै, सुधि बुधि बिसरै।
नवनील कलेवर, सजल भुवन धर,
बर इंदीवर छवि निदरै, मद मदन हरै॥

—दास

४४ मात्राओं के छन्द,

विनय

वारह, वारह, बारह और आठ पर विराम, चरणान्त में प्राय रगण रहता है —

जय जय जग जननि देवि, सुर-नर-मुनि असुर-सेवि,
भक्ति-मुक्ति-दायिनि भय, हरनि कालिका।
मगल-मुद-सिद्धि-सदनि, पर्वसर्वरीस वदनि,
ताप-तिमिरि तरुन तरनि किरनमालिका ॥
वर्म-चर्म कर कृपान, सूलसेल धनुपवान,
धरनि, दलनि दानव-दल, रन करालिका।
पूतना पिशाच प्रेत, डाकिनि साकिनि समेत,
भूत ग्रह बेताल खग, मृगालि-जालिका ॥
—विनयपत्रिका

४६ मात्राओं के छन्द

चंचरी (अन्यनाम हरिप्रिया)

वारह, वारह, वारह और दस पर विराम, चरणान्त में गुरु।

जाको नहिं आदि अत, जननि जनक देव कत,
रूप रग रेख रहित, व्यापक जग जोई।
मच्छ कच्छ कोल रूप,वामन नर हरि अनूप,
परसुराम राम कृष्ण, बुद्ध कल्कि सोई।
मधुरिपु माधव मुरारि, करुनामय कैटभारि,

रामादिक नाम जासु, जाहिर बहुतेरो।
कोमल सुभ वास मजु, सुखमा सुपसील गज,
ताको पद कज चित्त चचरीक मेरो॥

—दास

मात्रिक अर्द्धसम*

चारों चरण मिलकर २८ मात्राओं के छन्द

बरवै (अन्य नाम—मनोहर, ध्रुवा, कुरग नदा)

इस छन्द के विषम (पहले-तीसरे) चरणो में बारह और सम (दूसरे-चौथे) चरणों में सात मात्राए होती हैं। सम चरणों के अत में लघु रहता है। परन्तु जगण श्रुति-मधुर जँचता है —

अवधि शिला का उर पर, था गुरु भार।
तिल तिल काट रही थी, दृग जल धार॥

—साकेत

चारों चरण मिलकर ४२ मात्राओं के छन्द

अति बरवै

इस छन्द के विषम (पहले-तीसरे) चरणों में बारह और सम (दूसरे चौथे) चरणों मे नव मात्राएँ होती हैं।

*दोहरी पक्ति वाले (प्राय अर्द्धसम) छन्दो की प्रत्येक पक्ति को दल कहते हैं। प्रत्येक दल में पहला चरण विषम और दूसरा सम कहलाता है। अर्द्धसम बरवै, दोहा आदि मे दो दल होते है। इन दोनों के पहले और तीसरे चरण विषम और दूसरे चौथे सम कहलाते हैं।

समचरणों के अन्त में लघु रहता है परन्तु जगण श्रुति-मधुर होता है —

कवि-समाज को बिरवा, भल चले लगाइ।
सींचन की सुधि लीजो, कहुँ मुरझि न जाइ॥

—छन्द प्रभाकर

चारों चरण मिलकर ४८ मात्राओं के छन्द

दोहा ‡

इस छन्द के विषम (पहले-तीसरे) चरणों मे तेरह-और सम (दूसरे-चौथे) चरण मे ग्यारह मात्राएँ होती हैं। विषम चरणो के आदि में जगण का निषेध है, सम चरणो के अन्त में गुरु लघु वा लघु रहता है —

(१)

दोषहि को उमहै गहै, गुन न गहै खल लोक।
पिये रुधिर पय ना पिये, लगी पयोधर जोंक॥

—महाकवि वृन्द

(२)

रहिमन लाख भली करो, अगुनी अगुन न जाय।
राग सुनत पय पियत हूँ, साँप सहज धरि खाय॥

—रहीम

‡ गोस्वामी तुलसीदास तथा जायसी आदि महाकवियों ने तेईस अथवा तेईस और चौबीस मात्रा के मिलेजुले दलोंवाले दोहों का भी प्रयोग किया है, इसी लिये इस छन्द का विशेष वर्णन मात्रामुक्तकों में दिया गया है।

(३)

भरित नेह नव नीर नित, बरसत सुरस अथोर ।
जयति अपूरब घन कोऊ, लखि नाचत मन मोर ॥

—भारतेन्दु

सोरठा*

इसके विषम (पहले-तीसरे) चरणों में ग्यारह और सम (दूसरे-चौथे) चरणों में तेरह मात्राएँ होती हैं। विषम चरणों में तुकान्त मिलते हैं। तुकान्त में नद (गुरु लघु) का रहना आवश्यक है —

रहिमन मोहि न सुहाय, अमी पियावत मान बिनु ।
बरु विष देय बुलाय, मान सहित मरिबो भलो ॥

—रहीम ।

चारों चरण मिलकर ५२ मात्राओं के छन्द

दोही

दोहे के तेरह मात्रावाले विषम चरणों के आदि में द्विकल और बढा देने से दोही छन्द बन जाता है —

जो मुए, मरत, मरिहैं सकल, घरी पहर के बीच ।
है लही न काहू आजुलों, गीवराज की मीच ॥

*सोरठे को उलट देने से दोहा बनता है। रोले की टिप्पणी में देखो ।

चारों चरण मिलकर ५६ मात्राओं के छन्द

उल्लाला

इस छन्द के विषम (पहले-तीसरे) चरणों मे पन्द्रह और सम (दूसरे-चौथे) चरणों मे तेरह मात्राएँ रहती हैं। इसमे सम चरणों के अंत मे गुरु लघु का कोई नियम नहीं है —

मत चरचा चालो नीति की, जग का ये ही हाल है।
उपकार भुला देना सहज, आजु कालिह की चाल है॥

—पूर्ण

(२)

जय प्रसव ज्ञान-पार्थिव-प्रकट, अज्ञ प्रजा-मन मुग्ध कर।
जय जयति प्राथमिक भू प्रभू, भू विज्ञान-विदग्ध वर॥

—श्रीधर पाठक

चारों चरण मिलकर ४८ मात्राओं के छन्द

चुलियाला*

चौबीस मात्रा वाले दोहे के सम चरणो के अन्त में जगण और एक लघु के रूप में, पचकल बढ़ा देने से चुलियाला छन्द बन जाता है —

(१)

तुम समान दाता नहीं, विपति बिडारनहार उमापति।
तव चरननि में मान की, बरदा के असवार रहे रति॥

*कोई कोई इसे चार पद का मानते हे। चार पद मानने वाले लोग दोहे के सम चरणों के अन्त में यगण रखते हैं।

(२)

मेरी निनती गानि के, हरिजू देखो नेक दया कर।
नाहीं तुम्हरी जात है दुख हरिबे की टेक सदा कर॥

—भानु

दोनों दल मिलकर ६२ मात्राओं के छन्द

घत्ता

प्रत्येक दल में दस, आठ और तेरह पर विराम, चरणान्त में नगण रहता है —

मत मद कर धन का, है कुछ चण का, किसी का न अपकार कर।
रख ध्यान बात का, देश, जातिका विश्वनाथ का ध्यान धर॥

—भान

घत्तानन्द

प्रत्येक दल में ग्यारह, सात और तेरह पर विराम, चरणान्त में नगण रहता है —

जय कदिय कुल कस, बलि विध्वस, केशिय बक दानव दरन।
सो हरि दीन दयाल, भक्त कृपाल, कवि सुखदेव कृपा करन॥

—छन्दो मजरी

मात्रिक-विषम

पाँच पद मिलकर १०६ मात्राओं के छन्द

पंचपदी-सक़र *

इस छन्द के आदि में दो चरण रोले के, फिर दो दल दोहे के और अंत में एक चरण 'कमल' छन्द का रहता है —

(१)

टिमटिमाति जातीय जोति जो दीप-शिखासी।
लगत बाहिरी ब्यारि बुझन चाहत अबला सी॥
शेष न रह्यो सनेह कौ काहू हिय में लेस।
कासों कहिये गेह को देसहि में परदेस॥
भयो अब जानिये।

—सत्यनारायण कविरत्न

(२)

भगुर है यह देह, चार दिन का है जीवन।
करो न कलह-कलक पक मे अक विलेपन॥
त्यागो विष सम भाइयो! फूट, द्वेष, छल, क्रोध।

---

* इस तरह हजारों पचपदियाँ बन सकती है। पचपदी को उर्दू में मुखम्मस कहते हैं। परन्तु उसमें चारों चरण एक ही छन्द के होते है। मुखम्मस सक़र छन्द नहीं होता। यह पचपदी बहुत प्रसिद्ध है। नन्ददास, सूरदास, सत्यनारायण जी आदि ने इसमें भ्रमरगीत लिखे हैं।

रहो प्रेम से सुख सहित, तजकर बंधु विरोध ॥
सदा फूलो फलो ।

—लोचनप्रसाद पाण्डेय

मिलिन्दपाद संकर छन्द *

छः पद मिलकर ६२ मात्राओं के छन्द

प्रसार,

इस छन्द के आदि में चार चरण गोपी छन्द के और अन्त मे दो चरण प्रसाद छन्द के रहते हैं —

खुले दृग देखें दीनों को, ।
स्वेद सिंचित जन मीनों को ॥
श्रान्त श्रमजीवी हीनों को ।
धूल-धूसरित मलीनों को ॥
खड़ा जिन में तू रज लपटाय ।
मुक्ति! हाँ, मुक्ति मुझे मिल जाय ॥

—गोकुलचन्द शर्मा

---

* महाकवि नाथूराम जी शंकर शर्मा ने छ: चरणवाले सभी छन्दों का नाम 'मिलिन्दपाद' बड़ा ही उपयुक्त नाम रखा है। उर्दू में मुसद्दस छ: चरणवाले छन्दों को कहते हैं। परन्तु वहाँ चरण एक ही जाति के छन्द के होते हैं।

छ चरण मिलकर १२८ मात्राओं के छन्द

तरग

इस छन्द के पहले दो चरण चौपाई के, फिर दो चरण रूप सवैया छन्द के और अन्त मे फिर दो चरण चौपाई के रहते हैं। इस तरह छ चरण रहते हैं —

तुम भी ग्राम खुले सपने हो।
रूप रग मे वही बने हो॥
कटी-बँटी हरियाली में तुम, वैसे ही तो जडे हुए हो।
उठे तरल-श्यामल-दल गुफित अचल मे तुम पडे हुए हो॥
धरती माता की मटियाली।
रहे गोद यह भरी निराली॥

—रामचन्द्र शुक्ल

छ पद मिलकर १४४ मात्राओं के छन्द

कुण्डलिया

इस छन्द के आदि मे दोहा और अन्त मे रोला होता है। इस तरह इस के प्रत्येक चरण मे चौबीस मात्राए होती हैं और छ पद रहते हैं। दोहे के चौथे चरण की शब्दावलि ज्यों की त्यों रोले के पहले पद के आदि में और दोहे के पहले चरण के आदि का शब्द या कुछ वर्ण कुडलिया के छठे पद (रोले के चौथे पद) के अत में ज्यों के त्यो सिंहविलोकित ढग से आते हैं —

कीजै गमन सुमानसर, यह दुखदायक ताल।
हंस बस अवतंस हौ, मौन गहौ इहि काल॥
मौन गहौ इहि काल काक बक खल या ठावैं।
अति कठोर बरजोर सोर चहुँ ओर मचावैं॥
बरनै दीनदयाल इन्हैं तजि सुख सो जीजै।
सठ संगति अति भीति भूलि तहँ गमन न कीजै॥

—दीनदयालु गिरि

अमृतध्वनि*

इस छन्द के आदि में दोहा और अन्त में सिंहविलोकित-ढंग से रोला रहता है। इसमें उद्धत वर्ण रहते हैं जिन में प्राय अनुप्रास की छाया रहती है —

धुनि धुनि सिर खल तिय गिरहिं, सुनत राम धनु शब्द।
लग्गिय सर झरि गगन महिं, यथा भाद्रपद अब्द॥
अब्द निनद करि क्रुद्ध कुटिल अरि युक्ति मरत लरि।
मुंड परत गिरि रुंड लडत फिरि खड्ग पकरि करि॥
रिच्छ प्रबल भट उद्धत मरकट मर्दत तिहिं ध्वनि।
निर्त्तत सुर मुनि मित्र कहत जय कृत्ति अमृतध्वनि॥

—दास

छः पद मिलकर १४८ मात्राओं के छन्द

छप्पय (अन्य नाम—षट्पद)

इस छन्द के आदि में चार पद रोला के और अन्त में दो

---

* प्राय इस छन्द में वीररस का वर्णन किया जाता है।

(१)

भीमसेन जमदग्नि का बेटा ।
कुन्ती को सुत दसकधरवा ॥
अब हम मोटा धरव तुम्हार ।
दु सासन केरी अनुहार ॥

—मृच्छकटिक भाषा (भूप)

(२)

सच बोले सच बात विचारें ।
खरे काम कर जनम सँवारे ॥
राखें देस जाति का मान ।
ऐसो मति दीजै भगवान ॥

—रामदास गौड

चितहस

इसके प्रत्येक चरण में उन्नीस या बीस मात्राएँ होती हैं, चरण के अत में प्राय रगण रहता है —

अयि दयामयि देवि, सुखदे, सार दे,
इधर भी निज वरद पाणि पसार दे ।
दास की यह देह तन्त्री तार दे,
रोम तारों में नई झकार दे ।

—साकेत

गोद में गिर प्यार के पुतले बने।*
जग में गिर कर सरग सुख से घिरे॥
पर उसी दिन सिर ! बहुत तुम गिर गये।
पाजियों के पाँव पर जिस दिन गिरे॥

—हरिऔध,

सुमेरु

इस छन्द का प्रत्येक चरण उन्नीस या बीस मात्रा का होता है, चरण के आदि में लघु, अंत में दो गुरु रहते हैं। बारह और सात या आठ पर विराम रहता है।

(१)

यही है आज का सा, यह सवेरा,
मिटा रानत्व वन में भी न मेरा।
अनुज ! मुझ से न तुम न्यारे कभी हो,
सुहृत, सहचर, सचिव, सेवक सभी हो॥

---

* श्री हरिऔधजी ने चौपदों के नाम से अनेक मात्रामुक्तकों का प्रयोग किया है। चौपदा उर्दू के चार चरण वाले 'कते' के ढंग का होता है। प्रत्येक में चार ही चरण होने के कारण चौपदा नाम उपयुक्त ही है। उर्दू में 'रुबाई' चार चरण वाले विशेष प्रकार के छन्द को कहते हैं। रुबाई का अर्थ है 'चौपदा'।

—रामदास गौड़,

(२)

कहाँ है हा ! तुम्हारा धैर्य वह सब ?
कि कौसिक सग भेजा था मुझे जब ॥
लड़कपन भूल लक्ष्मण का सदय हो,
हमारा वश नूतन कीर्तिमय हो ।

—साकेत

नांदीमुखी

इसके प्रत्येक चरण में बीस मात्राएँ होती हैं, आदि में पचलघु और आगे तीन यगण रहते हैं। चारो चरणो में यह क्रम न रहने पर भी गति ठीक रहने से नादीमुखी ही होता है—

जनम प्रभु लियो औध मे लूट माँची ।
लुट्यो सब सबनि वस्तु एकौ न बाँची ।
द्विजन किय विदा वाकवादै सुखी कै ।
नृपति जब उठे श्राद्ध नादीमुखी कै ।

—दास

प्रिया

इस छन्द के प्रत्येक चरण में बाईस या तेईस मात्राएँ होती हैं, इसकी यति, गति पर निर्भर है —

'होमर' जो है यूनान का, कवि आदि कहाया ।
उसने भी सुयश वीरो का है जोश मे गाया ।
'फिरदौसी' ने भी नाम अमर अपना बनाया ।
जब फारसी वीरो का सुयश गाके सुनाया ॥

—भगवानदीन 'दीन'

श्रौर सन का सामूहिक नाम जाति चौनोला है। सत्ताईस मे लेकर वत्तीस मात्रा तक के चौबोले साधारण गानेवाले लावनियो, फाग के चौबोलो में और कजली गानेवाले अपने गीतो में गाते हैं। जहाँ चारों चरण समान नहीं है वहाँ जाति चौनोला ही कहना चाहिये॰ —

(१)

घोडे जहाँ अनेक गधो का वहाँ काम क्या था सच कह ?
विदित हो गई तेरी सारी चतुराई तू चुप ही रह।
शुद्धाशुद्ध शब्द तक का है जिनको नहीं विचार।
लिखवाता है उनके कर से नये नये अखबार॥

—महावीर प्रसाद द्विवेदी

(२)

"अपना स्वार्थ सिद्ध करने को जगत् मित्र बन जाता है।
किन्तु काम पडने पर, कोई कभी काम नहिं आता है।
भरे बहुत से इस पृथ्वी पर पापी, कुटिल कृतघ्न।
इसी एक कारण से उनपर, उठे अनेको विघ्न॥

—श्रीधर पाठक

(३)

चाहे कुश कटक ही बन, छा जाना जीवन पथ पर,
पर, प्राणो में, प्राणेश्वर बसना अक्षय मधु बनकर।

॰—रामदास गौड़

मात्रावाले छन्द भी दिगपाल ही कहलाते हैं। चरणान्त में गुरु लघु का कोई मुख्य नियम नहीं है —

(१)

सों पायँ आजु डौलै महि सीत धूप में।
विधि बुद्धि तुच्छ जाकी महिमा अनूप में।
हर जासु रूप राखै हिय बीच सर्वदाहि।
दिगपाल भाल जाकी रज राजती सदाहि॥

—दास

टिप्पणी—इसके पहले दो चरणों में से हर एक में बाईस और अन्तिम दो चरणों में से हर एक मे तेईस मात्राएँ हैं —

(२)

शुचि विश्व-बन्धुता का, है पाठ भी पढाया—
आरम्भ में हमीं ने, जग सभ्य है बनाया॥
विज्ञान-ज्ञान के हैं, गुरु भी हमीं जहाँ के।
आये न सीखने याँ, क्या क्या कहाँ कहाँ के॥

—मान

टिप्पणी—इसके प्रत्येक चरण में चौबीस मात्राएँ हैं।

जाति चौबोला

चौबोले के रूप के, उसके कला दो कला कम होने से जो अवान्तर भेद होते हैं वह सभी भेद चौबोले के ही अन्तर्गत हैं।

चौबीस-चौबीस मात्राएँ होती हैं। इस के विषम चरणों के आदि में जगण का निषेध है। सम चरणों के अंत में गुरु लघु अथवा लघु रहता है —

(१)

सेवक सेव्य भाव बिनु, भव न तरिय उरगारि।
भजहु राम पद पंकज, अस सिद्धान्त विचारि॥
— गोस्वामी तुलसीदास

'करो किसी की दृष्टि को शीतल सदय कपूर।
इन आँखों में आप ही, नीर भरा भरपूर॥
—साकेत

ध्यान रहे कि यदि दोहे के प्रत्येक चरण के आदि में एक समकल समूह हो तो उस के आगे एक और समकल समूह रखो, और यदि विषमकल समूह हो तो विषम कलों का जोड़ा रखो। दोहे का शब्दार्थ ही है 'जोड़े वाला' अर्थात् जिसके चरणों के आदि में सम-सम या विषम-विषम मात्रासमूहों का जोड़ा रहे वह दोहा। यह भी ध्यान में रखना चाहिये कि चौबीस मात्रा वाले दोहों के विषम (पहले-तीसरे) चरणों के आदि में जगण न हो और अन्त में सगण रगण अथवा नगण में से कोई रहे और सम चरणों के अन्त में जगण, तगण, अथवा नगण रहे, और तेइस मात्रा वाले दोहों के विषम चरणों के अन्त में तगण और जगण को छोड़ शेष छहों गणों में से कोई रह सकता है।

जिससे, घोर निराशा में भी आशा का मुख म्लान न हो,
सह्य बने संघर्ष, सरसता उर की अन्तर्धान न हो।
—मिलिन्द

(४)

बार बार आती है मुझ को मधुर याद बचपन तेरी।
गया, ले गया तू जीवन की सबसे मस्त खुशी मेरी।
चिन्ता-रहित खेलना-खाना वह निर्भय फिरना स्वच्छन्द।
कैसे भूला जा सकता है बचपन का अतुलित आनद॥
—सुभद्राकुमारी चौहान

अर्द्ध-सम मात्रा मुक्तक

दोहा*

इस छन्द के विषम (पहले-तीसरे) चरणों में बारह या तेरह-तेरह और सम (दूसरे-चौथे) चरणों में ग्यारह-ग्यारह मात्राएं होती हैं। इस तरह प्रत्येक दल में तेईस तेईस या

---

* जिस दोहे के आदि में जगण पड़ जाता है उसे 'चडालिनी दोहा'

।S।
कहते है। यथा—'बखान ना चडालिनी दोहा दुख की खानि।' यदि जगण पड़े ही तो पूरे शब्द में न पडे। जैसे 'समान' 'विमान' आदि शब्द, और यदि मंगलवाची या देववाची पद हो तो यह दोष क्षम्य भी है। यदि जगण पड़नेवाले वर्णों में दो शब्द पड जायें तो यह दोष नहीं रहता है यथा—

चौबीस-चौबीस मात्राएँ होती हैं। इस के विषम चरणों के आदि में जगण का निषेध है। सम चरणों के अन्त में गुरु लघु अथवा लघु रहता है —

(१)

सेवक सेव्य भाव बिनु, भव न तरिय उरगारि।
भजहु राम पद पंकज, अस सिद्धान्त बिचारि॥
— गोस्वामी तुलसीदास

'करो किसी की दृष्टि को शीतल सदय कपूर।
इन आँखों में आप ही, नीर भरा भरपूर॥
—साकेत

ध्यान रहे कि यदि दोहे के प्रत्येक चरण के आदि में एक समकल-समूह हो तो उस के आगे एक और समकल समूह रखो, और यदि विषमकल समूह हो तो विषम कलों का जोड़ा रखो। दोह का शब्दार्थ ही है 'जोड़े वाला' अर्थात् जिसके चरणों के आदि में सम-सम या विषम-विषम मात्रासमूहों का जोड़ा रहे वह दोहा। यह भी ध्यान में रखना चाहिये कि चौबीस मात्रा वाले दोहों के विषम (पहले तीसरे) चरणों के आदि में जगण न हो और अन्त में सगण रगण अथवा नगण में से कोई रहे और सम चरणों के अन्त में जगण, तगण, अथवा नगण रहे, और तेईस मात्रा वाले दोहा के विषम चरणों के अन्त में तगण और जगण को छोड़ शेष छहों गणों में से कोई रह सकता है।

(२)

इहाँ उहाँ कर स्वामी, दुऔ जगत मोहि आस।
पहिले दरस दिखावहु, तौ पठवहु कैलास॥

—जायसी

टिपणी—इन दोनों के प्रत्येक दल में तेइस मात्राएँ है।

(३)

जिन दिन देखे वे कुसुम, गई सो बीति बहार।
अब अलि रही गुलाब की, अपत कटीली डार॥

—बिहारी

(४)

आवत ही हरषे नहीं, नयनन नहीं सनेह।
तुलसी तहाँ न जाइये, कचन बरसे मेह॥

— तुलसी

टिप्पणी—इन दोनों के प्रत्येक दल मे चौबीस मात्राएँ है।

(५)

अब गृह जाहु सखा सब, भजेहु मोहि दृढ नेम।
सदा सरब-गत सरब हित, जानि करेहु अति प्रेम॥

—तुलस

(६)

आजु खडग चौगान गहि, करी सीस-रिपु गोइ।
खेलौं सौंह साहसौं, हाल जगत महँ होइ॥

—जायसी

टि०—पाँचवे दोहे के पहले दलमें तेईस और दूसरे में चौबीस तथा छठे दोहे के पहले दलमें चौबीस और दूसरे में तेईस मात्राए है।

लघु गुरु की न्यूनाधिकता से दोहों के अनेक भेद हो सकते हैं। इनमें तेईस प्रकार के दोहे बहुत प्रसिद्ध हैं।* मनोरंजनार्थ दो तीन दोहे यहाँ दिये जाते हैं —

भ्रमर (२६ वर्ण = २२ गुरु + ४ लघु)

कोऊ साँचो ना मिलो, ज्ञानी-मानी मीत।
जे पाये ते स्वारथी-दंभी मैले चीत॥

—मान

करभ (३२ वर्ण = १६ गुरु + १६ लघु)

भजन कह्यो तातें भज्यो, भज्यौ न एकौ बार।
दूर भजन जातें कह्यौ, सो तैं भज्यो गँवार॥

—बिहारी

वानर (३८ वर्ण = १० गुरु + २८ लघु)

करत करत अभ्यास के, जडमति होत सुजान।
रसरी आवत जात तें, सिल पर होत निसान॥

—वृन्द।

---

*भ्रमर सु भ्रामर, सरभ, स्येन, मण्डुक, मरकट कहि।
करभ, सु नर, अरु हंस, आनि मदकल, कविजन लहि।
कहूँ पयोधर, चाल, और वानर, जिय जानहु।
त्रिकल, और कहि मच्छ, कच्छ, हरदेव बखानहु।
शार्दूल अहिवर, बरन वायस, विडाल, सेनक, कहो।
उदर सर्प तेईस ये दोहा नाम सुकवि लहो॥

—हरदेव

विषम

गीत अथवा पद

गीत अथवा पदों की जितनी मुक्तक रचना होती है उतनी अन्य मुक्तक छन्दों की नहीं होती। इनका संबंध राग और रागनियों से होता है। उन्हीं के स्वर और लय विशेष के अनुसार गीतों में मात्राओं की वृद्धि होती है और उनका ह्रास होता है। यही कारण है कि इनके चरणों में विषमता रहती है। ऐसी अवस्था में गीतों के लिये किसी विशेष नियम का निर्धारण नहीं किया जा सकता। फिर भी समष्टि रूप से गीतों अथवा पदों की रचना पिंगल के नियमानुसार ही होती है। हाँ प्राय देखा जाता है कि किसी पद या गीत के आरंभ में जितनी मात्राओं की टेक रखी जाती है, ठीक उसी की दूनी मात्राओं के नीचे के चरण रखे जाते हैं। पर ऐसा कोई नियम नहीं है। ऐसा बहुत होता है कि टेक की मात्राएँ कुछ हैं और नीचे के चरणों की मात्राएँ कुछ, परस्पर कोई संबंध नहीं होता। यही नहीं बल्कि नीचे के चरणों में परस्पर भी विषमता होती है। कोई चरण छोटा और कोई बड़ा होता है। और आजकल के छायावाद में ऐसे ही गीतों की भरमार है। विषय के हृदयंगम कराने के लिये यहाँ कुछ पद उद्धृत कर दिये जाते हैं* —

(१)

जसोदा हरि पालने झुलावै।
हलरावै, दुलराइ मल्हावै, जोइ सोइ कछु गावै ॥

---

* हरिऔध

मेरे लाल को आउ निंदरिया, काहे न आनि सुवावै ।
तू काहे न बेगि सी आवे तोकों कान्ह बुलावे ॥
कबहुँ पलक हरि मूँद लेत हैं, कबहुँ अधर फरकावें ।
सोवत जानि मौन ह्वै रहि रहि, करि करि सैन बतावै ॥
इहि अन्तर अकुलाइ उठे हरि, जसुमति मधुरे गावै ।
जो सुख 'सूर' अमर मुनि दुरलभ, सो नँद भामिनि पावै ॥

—सूर

टिप्पणी—इस की टेक ग्यारह मात्रा की है। तीसरे चरण में पन्द्रह और बारह के विराम से सत्ताईस मात्रा का चरण है और शेष चरण सोलह और बारह के विराम से अट्ठाइस मात्राओं के सार छन्द के हैं।

(२)

कर सकेंगे क्या वे नादान ।
बिन सयानपन होते जो हैं बनते बड़े सयान ॥
कौआ कान ले गया सुन जो नहि टटोलते कान ।
वे क्यो सोचें तोड़ तरैया लाना है आसान ॥

—हरिऔध

टिप्पणी—इस की टेक सोलह मात्रा की है, शेष पद सत्ताइस मात्रा के सरसी छन्द के है।

(३)

बस अब नहिं जाति सही ।
विपुल वेदना विविधि भाँति जो तन मन व्यापि रही ॥
कबलौं सहे, अवधि सहिबे की कछु तो निश्चित कीजे ।
दीनबन्धु यह दीन दशा लखि क्यों नहिं हृदय पसीजे ॥

वेद वदत गावत पुरान सब तुम त्रय-ताप नसावत।
सरनागत की पीर तनक हू तुम्हें तीर सम लागत॥
हम से सरनापन्न दुखी को जाने क्यों विसरायो।
सरनागत वत्सल 'सत' योंही कोरो नाम धरायो॥
—सत्यनारायण कविरत्न

टिप्पणी—इसकी टेक बारह मात्रा की है। टेक के नीचे का चरण छब्बीस मात्रा का विष्णुपद है। शेष चरण अट्ठाईस मात्रा के सार छन्द के हैं।

(४)

अब जो प्रियतम को पाऊँ।
तो इच्छा है, उन चरणों की रज में आप रमाऊँ।
आप अवधि बन सकूँ कहीं तो क्या कुछ देर लगाऊँ,
मैं अपने को आप मिटाकर, जाकर उन को लाऊँ।
—साकेत

टिप्पणी—इसकी टेक में चौदह मात्राएँ हैं। शेष चरणों में टेक की दूनी अट्ठाईस मात्रा का सार छन्द है।

(५)

मो सम को त्रिकाल बडभागी।
तजि साकेत सकेत हिये के भये राम अनुरागी॥
जिमि प्रभु मोहिं राखि सरनागत अपत अघिहि अपनाये।
तिमि मेरो हिय सदा आपनो मंदिर रखहु बनाये॥
—रामदास गौड

टिप्पणी—टेक में चौपाई और शेष चरण सार छन्द के हैं।

(६)

भूतल कब आओगे प्यारे।
गग जमुन अब छिन्न-भिन्न हैं, ढूँढत चरन तुम्हारे॥
हेरि हेरि अँखियाँ पथरानी, छतियन परत दरारे।
कहाँ विलमि हा! रहे प्राणधन पीरे पटुका वारे॥
तुमको कहत दयानिध सिगरे, पचि पचि मरत निचारे।
फिर तुम हा! कत नहीं पसीजत, प्रानन के आधारे॥
'अनुज' अकिंचन तुम्हें पुकारत हे त्रिभुवन उजियारे।
जाति-जाति कहँ सब कोऊ चाहत हम कारे तुम कारे॥

—महन्त लक्ष्मणाचार्य 'वाणी भूषण

टिप्पणी—इसकी टेक चौपाई का एक चरण है। शेष चरण अट्ठाईस मात्रा के सार छन्द के हैं।

(७)

हे अनन्त!
ऊपर सूर्य, चन्द्र, तारागण,
भू पर सागर, गिर-रज, कण-कण,
तेरी कीर्ति गुँजाते,
जिससे गूँजी दिशा दिगत।
हे अनन्त!

—अवन्त

टिप्पणी—इसकी टेक छ मात्रा की है, टेक के बाद दो चरण चौपाई के, तीसरा चरण चौदह मात्रा का और चौथा चरण चौपई का है।

(८)

दो दिन खेल गया उपवन मे ।
रूप अनोखा लेकर आया, खेला-कूदा हँसा-हँसाया,
दिव्य सुरभि से वन महँकाया ।
इस से बढकर भला और क्या रक्खा है जीवन मे ॥१॥

गुण सौंदर्य देख कर प्यारा, रीझ गया माली हत्यारा,
और किया डाली से न्यारा ।
तोड ले चला दुष्ट बेचने दया न आई मन में ॥२॥
जीवित सब ने सीस चढाया, मृत हो जाने पर ठुकराया,
घर से बहुत दूर फिकवाया ।
लगी रही दुनिया सदैव, ही अपने मन के धन मे ॥३॥
दो दिन खेल गया उपवन में ।

—बदरीनाथ भट्ट

टिप्पणी—इस छन्द की टेक सोलह मात्रा की है । पहला चरण सोलह सोलह के विराम से अड़तालीस मात्रा का है और तोड अट्ठाईस मात्रा का सार छन्द का है ।

(९)

ऐ रजकण के ढेर तुम्हारा है विचित्र इतिहास !
तुम मनुष्य की उन अभिलाषाओं के हो उपहास,
कि जिनका असफलता है अंत
और आशा जीवन !

बना अजान खण्ड ही यह लो आज तुम्हारा सदन
कभी उत्थान कभी है पतन ।
वासनाओं का यह ससार
भयानक भ्रम का है बधन,
और इच्छाओं का मण्डल
आदि से अत रुदन है रुदन,
एक अनियन्त्रित हाहाकार
इसी को कहते हैं जीवन ।

—भगवती चरण वर्मा

टिप्पणी—यह सस्वर पद है। इसमें कई भिन्न भिन्न छन्दों का मेल है।

(१०)

बादल राग

ऐ निर्बन्ध !
अन्ध तम अगम अनर्गल बादल !
हे स्वच्छन्द !—
मन्द-चचल समीर रथ पर उच्छृङ्खल ?
ऐ उद्दाम !
अपार कामनाओं के प्राण !
बाधा रहित विराट !
ऐ विप्लव के प्लावन !
सावन घोर-गगन के
ऐ सम्राट !

ऐ अटूट पर छूट, टूट पडनेवाले – उन्माद !
विश्व विभव को लूट लूट लडनेवाले—अपवाद !
आ विखरे, मुख फेर, कली के निष्ठुर पीड़न !
छिन्न-भिन्न कर पत्र-पुष्प-पादप-वन-उपवन
वज्र-घोष से ऐ प्रचंड,
आतंक जमाने वाले !
कंपित जंगम,– नीड विहंगम,
ऐ न व्यथा पाने वाले !
मय के मायामय आँगन पर ,
गरजो विप्लव के नव-जलधर ?
—सूर्यकान्त त्रिपाठी "निराला'

टिप्पणी—इस पद में अनेक छन्दों का मिश्रण है। यह अपने ढंग का निराला ही है। पर इस में भी सँगीत की लय है।

ख्याल*

ख्याल कम से कम बाईस मिसरे[1] का होता है जिसमें पहले दो मिसरे टेक या धुरपद कहलाते है। फिर चार मिसरों का एक

---

*सगीत में पदों की भाँति ख्यालों का भी एक स्थान है। पिछले सौ वर्षों तक उत्तरी भारत में ख्याल भी खूब गाये गये। ख्याल 'मराठी'

१ पंक्ति

चौक[1] होता है। पाँचवा मिसरा उडान या मिलान कहलाता है जो धुरपद के दूसरे मिसरे से जोड दिया जाता है। गाने की किसी भी रगत को चार चौक मे बदिश कर देने से ख्याल माना जाता है यद्यपि चार चौक से अधिक पचास और साठ चौक तक के भी ख्याल देखे गये हैं। परन्तु मुख्यतया चार चौक को ही महत्व दिया गया है।

कर्मों से ज्ञान हो यही वेद कहते हैं।
जब ज्ञान हुआ तब कर्म नहीं रहते हैं॥ } टेक

जैसे वृक्षों पर प्रथम पुष्प आते हैं।
फल प्रकट होय तब पुष्प सूख जाते हैं॥
ऐसे ही मनुज कर्मों से ज्ञान पाते हैं।
जब ज्ञान हुआ कर्मों को बिसराते हैं॥ } चौक

और लावनी नाम से प्रसिद्ध है। ख्याल गानेवालों के दो थोक हैं कलँगी और तुर्रा। कलँगी के प्रवर्तक श्री शाहअली और तुर्रा के प्रवर्तक महात्मा तुकनगिरि थे। किसी मराठी दरबार ने इन दोनों गायनाचार्यों में से एक को कलँगी, दूसरे को तुर्रा उपहार प्रदान किया था। इसी से ये नाम प्रचलित हो गये।

ख्याल गानेवालों के दोनों दलों में प्राय बहुत दिनों तक विवाद चलता रहा है। जिस समय दोनों थोक वाले मच पर चढ़ाउतरी के ख्याल कहते हैं, अच्छा रग जमता है। —स्वर्गनारायण

१ चार पक्तियों का एक चौक कहलाता है।

कर्मों का संग अज्ञानी जन गहते हैं।] उत्थान या मिलान
जब ज्ञान हुआ तब कर्म नहीं रहते हैं॥] अन्त में शुरू का दूसरा मिसरा

—स्वामी नारायणानंद।

ख्यालों में रंगते अनेक हैं। उनमें खड़ी, लंगड़ी, छोटी, मेरी जान, डिढ़ग्नभी तिकड़िया, चौताल और महराज आदि प्रसिद्ध हैं।

खड़ी

इसका प्रत्येक चरण तीस से बत्तीस मात्रा तक का होता है—

सुमन सुगंध लोभी मन मधुकर काम-कमल पर जा बैठा।
प्रेम पाँखुरी में फँसकर अपने को आप गँवा बैठा॥

—स्वामी नारायणानंद

लँगड़ी

गाना गणनायक बुद्धि विधायक सदा सहायक चाप धृते।
मद जन वदन, निकंदन, विघ्न राशि आनंदकृते॥

—स्वामी नारायणानंद

टिप्पणी—इसकी पहली पंक्ति बत्तीस मात्रा की और दूसरी सत्ताइस की है।

तिकड़िया

जय जय गणेश काटो कलेश विद्या हमेश देना अन धन।
शिवजी के लाल करो प्रतिपाल, मूरति विशाल गिरिजानंदन॥

—मक्खनलाल

चौताल

नीके सभी साज, सभी अजूबा अदाज,

लिये सग मे ममाज, सग्री नदलाला।

नाचे तोडे ताल, गावें रागिनी रसाल,

लिये रग और गुलाल सब ब्रजबाला॥

—स्वामी नारायणानन्द

छोटी

बाईम मात्रा की लावनी छोटी रगत कहलाती है।[1]

डिढखरी

लखो एक अचरज, सो हम पै कह्यो न जाय।

सिंधु सीपी में गयो समाय।

सिकस्ता और तवील रगतें भी प्राय लोग गाते हैं जो कि उर्दू की गजल लहरो से आई हैं —

रगत सिकस्ता—

लसत है मस्तक पै दिव्य चदा त्रय नयन त्रिच ज्योति-ज्वाल की है।

लहरती गगा जटा में सुख से विचित्र छवि चन्द्रभाल की है।

—स्वामी नारायणानन्द जी।

रगत तवील —

करुणानिधि टेरत हौं तुमको मेरी टेर सुनो कहँ देर करी।

भव सागर बीच भँवर मे पडी मेरी नैया को पार लगादो हरी।

—पन्नालाल

---

[1] बाइस मात्रा की लावनी देखो।

कभी एक ही रगत में कई रगतों का सम्मिश्रण हो जाता है। जैसे लगडी रगत का ख्याल लिखा और उसी चौक के अन्तर्गत तोडा दोहा, चौपाई आदि आदि को भी उसमें मिला दिया, परन्तु उसकी मुख्य रगत वही मानी जावेगी कि जिस रगत में टेक या ध्रुपद हो।

पंच पदी और छपदे आदि।

जिस तरह राष्ट्र-भाषा हिन्दी पर मराठी, गुजराती, बगला आदि प्रान्तीय भाषाओं, और अँगरेजी का प्रभाव पड़ा है। उसी तरह उर्दू— जो खडी बोली का ही एक रूप है—का भी प्रभाव पडा है। बल्कि यों कहना चाहिये कि हिन्दी पद्य पर अरबी, फारसी की बहरों का भी प्रभाव पडा है। और जिस तरह वहाँ मुखम्मस और मुसद्दस लिखे जाते हैं ठीक उसी ढग पर हिन्दी में भी पद्य रचना होने लगी है। महाकवि हरिऔध जी ने इस तरह की बहुत रचनाए की हैं। ये पचपदियाँ और छपदे हिन्दी के सकर पचपदी' और 'सकर मिलिंदपाद' छन्दों से भिन्न हैं। इन में एक ही छन्द के पाँच-पाँच और छ-छ चरण रहते हैं। पचपदी मुखम्मस का ठीक शब्दार्थ है और 'छपदे' मुसद्दस का। हम पहले कह आये हैं कि अरबी फारसी की अनेक बहरें मात्रामुक्तकों के अन्तर्गत आ जाती हैं। इसी से यहाँ पर चरचा की गई है। पचपदियाँ हिन्दी के मूल छन्दों में भी लिखी जाने लगी हैं। पचपदियों और छपदियों के कुछ उदाहरण मनोरञ्जनार्थ दिये जाते हैं —

पञ्च पदी

(१)

दुनिया में जो बादशाह है सो है वह भी आदमी।
और मुफलिसो गदा है सो है वह भी आदमी।
जरदार बेनवा है सो है वह भी आदमी।
नेमत जो खा रहा है सो है वह भी आदमी।
टुकडे जो माँगता है सो है वह भी आदमी ॥१॥

—नजीर

(२)

नव यौवन की चिता बना कर।
आशा कलियों को स्वाहा कर।
भग्न मनोरथ की समाधि पर।
तपस्विनी बैठी निर्जन में।
जीवन के इस शून्य सदन में ॥

— दिनकर

टिप्पणी—इस छन्द में प्रत्येक चरण चौपाई का है।

छपद

(१)

चमकती हुई धूप किरणें सुनहली।
उगा चाँद और चाँदनी यह रुपहली।
हवा मद बहती धरा ठीक सँभली।

सभी पौध जिनसे पली और बहली।
सकल लोक की जिस तरह है कहाती।
सभी की उसी भाँति है वेद थाती ॥
—'हरिऔध'

टिप्पणी—इसका प्रत्येक चरण बीस मात्रा के नान्दीमुख छन्द का है।

(२)

देख कर जो विघ्न बाधाओं को घबराते नहीं।
भाग पर रह कर के जो पीछे है पछताते नहीं
काम कितना ही कठिन हो पर जो उकताते नहीं।
भीड पड़ने पर भी जो चंचल हैं दिखलाते नहीं ॥
होते हैं यक आन में उनके बुरे दिन भी भले।
सब जगह सब काल में रहते हैं वे फूले फले ॥
— हरिऔध

इसका प्रत्येक चरण गीतिका छन्द का है।

(३)

वेद कहते हैं कि निर्धन के हे धन गिरधारी।
सच्चिदानन्द सगुन ब्रह्म हैं मंगलकारी ॥
चश्मये फैज दो आलम मे है उनका जारी।
सब्ज रहती है सखावत की सदा फुलवारी ॥
कोई उस बाग से, महरूम नहीं आता है।
फूल लेने कोई जाता है तो फल लाता है ॥
—सतोषी सुदामा

सार-मिलिन्दपाद

भाव राशि की रूप राशि के अभिनव साँचे ढाली।
नव रस मय यौवन तरंग की लेकर छटा निराली॥
मंजु-अलंकारों से सजकर जगमग-जगमग करती।
कोमल-कलित ललित-छन्दों के नूपुर पहन थिरकती॥
गज गामिनि! अनुपम शोभा की दिव्य-प्रभा बरसाओ।
छम-छम करती हृदय कुंज में आओ कविते! आओ॥

—श्यामसुन्दर खत्री

रूपमवेया-मिलिन्दपाद

घर घर में जगदीशचन्द्र वसु होना काम हमारा ही है।
बन कर कृषक, गर्व से कृषि को बोना काम हमारा ही है॥
शिल्प बढाकर ताजमहल फिर रचकर के दिखलाने होंगे।
व्यापारी बन देश देश में अपने पोत घुमाने होंगे॥
रेल तार आकाश यान ये हम क्या कभी बना न सकेंगे।
शुद्ध स्वदेशी पीताम्बर क्या भारत को पहना न सकेंगे॥

—भारतीय आत्मा

कलाधरात्मक-मिलिन्दपाद

बिरले ध्रुव धर्म धारते हैं। शुभ कर्म नहीं बिसारते हैं॥
तरसें वह वीर रोटियों को। चिथड़े न मिलें लँगोटियों को॥

सभी पौध जिनसे पली और बह्ली।
सकल लोक की जिस तरह् है कहाती।
सभी की उसी भाँति हैं वेद थाती॥
—'हरिऔध'

टिप्पणी—इसका प्रत्येक चरण बीस मात्रा के नागीमुख छन्द का है।

(२)

देख कर जो विघ्न बाधाओं को घबराते नहीं।
भाग पर रह कर के जो पीछे है पछताते नहीं
काम कितना ही कठिन हो पर जो उकताते नहीं।
भीड पडने पर भी जो चचल है दिखलाते नहीं॥
होते है यक आन में उनके बुरे दिन भी भले।
सब जगह सब काल में रहते हैं वे फूले फले॥
— हरिऔध'

इसका प्रत्येक चरण गीतिका छन्द का है।

(३)

वेद कहते है कि निर्धन के है धन गिरधारी।
सच्चिदानन्द सगुन ब्रह्म हैं मगलकारी॥
चश्मये फैज दो आलम मे है उनका जारी।
सब्ज रहती है सखावत की सदा फुलवारी॥
कोई उस बाग से महरूम नहीं आता है।
फूल लेने कोई जाता है तो, फल लाता है॥
—सतोषी सुदामा

हाँ ऐ त्यागी विपदाओ !
आती हो, आओ ! आओ !!
—विपन्न

नरसी-मिलिन्दपाद

जहाँ एक भी जन रोता है पाकर कोई क्लेश,
हो बस उस विधुवर के घर में वही हमारा देश।
पोछे जहाँ एक स करुण कर दु खी के दो नेत्र,
वही हमारा और तुम्हारा बने जीवन चेत्र।
मातृ भूमि के सहित वही है प्रकृति पुरुष का देश।
नील गगन सा मुक्त चतुर्दिक् विस्तृत और सु-वेश ॥
—भारतीय

प्रसाद-मिलिन्दपाद

(१)

पाप का क्षणिक प्रभाव विलोक,
लोभ यदि सके न कोई रोक।
शोक, तो उसकी मतिपर शोक !
बना क्या, बिगडा जब परलोक ॥
विजय है वही कि सब ससार—
करे पीछे भी जय जयकार ॥
—मैथिलीशरण गुप्त

कुलबोर-प्रथा पुजा रहे हैं।
उलटे हम हाय ! जा रहे हैं॥
—नाथूराम 'शकर' शर्मा

शुद्धगा-मिलिन्दपाद

बडो के मत्र मानेगे प्रसगो को न भूलेंगे।
कहो क्या ऊँच ऊँचो की, ऊँचाई को न छूलेंगे॥
बढेगे प्रेम के पौधे, दया के फूल फूलेंगे।
भरे आनन्द मे चारो, फलो के झाड झूलेंगे॥
सबो को 'शकरानदी' अनिष्टो से उबारेंगे।
बिगाडो को बिगाडेंगे, सुधारो को सुधारेंगे॥
—नाथूराम "शकर" शर्मा

लावनी

कुछ ग्रन्थ किसी भाषा के पढ लेते हैं।
टूटी फूटी कविता भी गढ लेते हैं॥
मिथ्याभिमान कुजर पर चढ लेते हैं।
लडभिड कलक माथे पर मढ लेते हैं॥
इनका घमड जिसकी ठोकर खाता है।
वह वीर समालोचक पदवी पाता है॥

सखी-मिलिन्दपाद

पत्थर तुम मुझे बनाओ, दृढता का पाठ पढाओ।
साहस सुकर्म सिखलाओ, पथ उन्नति का दिखलाओ॥

हाँ ए प्यारी विपदाओ !
आती हो, आओ ! आओ !!
—निपन्न

नरसी-मिलिन्दपाद

जहाँ एक भी जन रोता है पाकर कोई क्लेश,
हो वस उस विभुवर के घर में वही हमारा देश।
पोछे जहाँ एक स करुण कर दु खी के दो नेत्र,
वही हमारा और तुम्हारा बने जीवन क्षेत्र।
मातृ-भूमि के सहित वहीं है प्रकृति पुरुष का देश।
नील गगन-सा मुक्त चतुर्दिक् विस्तृत और सु-वेश ॥
—भारतीय

प्रसाद-मिलिन्दपाद

(१)

पाप का क्षणिक प्रभाव विलोक,
लोभ यदि सके न कोई रोक।
शोक, तो उसकी मतिपर शोक !
बना क्या, बिगडा जब परलोक ॥
विजय है वही कि सब ससार—
करे पीछे भी जय जयकार ॥
—मैथिलीशरण गुप्त

कुलचोर-प्रथा पुजा रहे हैं।
उलटे हम हाय ! जा रहे हैं॥
—नाथूराम 'शकर' शर्मा

शुद्धगा-मिलिन्दपाद

बडो के मत्र मानेंगे प्रसगो को न भूलेंगे।
कहो क्या ऊँच ऊँचो की, ऊँचाई को न छूलेंगे॥
बढेंगे प्रेम के पौधे, दया के फूल फूलेंगे।
भरे आनन्द से चारो, फलो के झाड झूलेंगे॥
सबो को 'शकरानदी' अनिष्टो से उबारेंगे।
बिगाडो को बिगाडेंगे, सुधारो को सुधारेंगे॥
—नाथूराम "शकर" शर्मा

लावनी

कुछ ग्रन्थ किसी भाषा के पढ लेते हैं।
टूटी फूटी कविता भी गढ लेते हैं॥
मिथ्याभिमान कुजर पर चढ लेते हैं।
लडभिड कलक माथे पर मढ लेते हैं॥
इनका घमड जिसकी ठोकर खाता है।
वह वीर समालोचक पदवी पाता है॥

सखी-मिलिन्दपाद

पत्थर तुम मुझे बनाओ, दृढता का पाठ पढाओ।
साहस सुकर्म सिखलाओ, पथ उन्नति का दिखलाओ॥

हाँ रे प्यारी विपदाओ !
आती हो, आओ ! आओ !!
—विपन्न

नरसी-मिलिन्दपाद

जहाँ एक भी जन रोता है पाकर कोई क्लेश,
हो बस उस विभुवर के घर से वही हमारा देश।
पोंछे जहाँ एक स करुण कर दु खी के दो नेत्र,
वही हमारा और तुम्हारा बने जीवन क्षेत्र।
मातृ भूमि के सहित वहीं है प्रकृति पुरुष का देश।
नील गगन-सा मुक्त चतुर्दिक् विस्तृत और सु-वेश ॥
—भारतीय

प्रसाद-मिलिन्दपाद

(१)

पाप का क्षणिक प्रभाव विलोक,
लोभ यदि सके न कोई रोक।
शोक, तो उसकी मतिपर शोक !
बना क्या, बिगडा जब परलोक ॥
विजय है वही कि सब संसार—
करे पीछे भी जय जयकार ॥
—मैथिलीशरण गुप्त

(२)

जहाँ अलि गुंजन करता आज,
कूकती पिक छाता ऋतुराज !
वहीं है कल पतझड का राज
नाचता दस-दिशि नाश-समाज।
क्षणिक है उन्नति-सम्मेलन।
अरे मेरे अस्थिर जीवन॥

—अशोक

प्रज्वलया-सप्तपदी

जिन आँखों का नीरव अतीत,
कहता है मिटना मधुर जीत,'
जिन पलकों में तारे अमोल
आँसू से करते हैं किलोल,
उस चिन्तित चितवन में विहास
बन जाने दो मुझ को उदार !
फिर एक बार, बस एक बार !

—महादेवी वर्मा

मात्रिक छन्दों के अन्तर्गत

आर्या और गाथा छन्द

बरवै, दोहा, छप्पय, कुण्डलिया आदि के अतिरिक्त संस्कृत में कुछ मात्रिक अर्द्धसम और विषम छन्द हैं जिन्हें आर्या कहते

हैं। प्राकृत में यही गाथा के नाम से प्रसिद्ध हैं। ये दो दलों मे लिखे जाते हैं। संस्कृत, मराठी और प्राकृत मे इनका विशेष चलन है। अब हिन्दी मे भी इनका व्यवहार होने लगा है। इन के अनेक सूक्ष्म भेद हैं। यहाँ मूल और प्रचलित छन्द लिखे जाते हैं।

इन छन्दों मे चौकलों (डगण) का ही प्रयोग होता है। प्रस्तारानुसार चौकलो (डगण) के SS , IIS, ISI, SII और IIII ये पाँच रूप हैं।

*आर्या (गाहा, गाथा)

इस के विषम (पहले-तीसरे) चरणों में बारह-बारह मात्राएँ, दूसरे में अठारह और चौथे में पन्द्रह मात्राएँ होती हैं और

---

* दोहे की भाँति गुरु लघु के हेरफेर मे आर्या के भी छब्बीस भेद होजाते हैं —

मत्ताइस गुरु तीनि लघु, लच्छी अच्छर तीस ।
गुरुहि घटे लघु बिय बढ़े, सो सो नाम छबीस ॥
रिद्धि, बुद्धि, लज्जा गनो विद्या, छमा विभाँति ।
देही (वैदेही), गौरी, धात्रियो, चुर्णा,छाया, क्रान्ति ॥
महामाय पुनि किर्त्ति, सिधि, मानिनि, रामा मानि ।
गाहिनि, विस्वा, वासिता, सोभा, हरिना जानि ॥
चक्री, सारसि, कुररि अरु, सिंही, हँसी लेखि ।
लच्छि सहित मत्ताइसे, गाहा भेद विशेषि ॥

चरणान्त मे गुरु रहता है । इसके विषम (पहले, तीसरे, पॉचवे और सातवें) गणो (चौकलो) मे जगण का निषेध है —

(१)

।।ऽ ऽ ऽ, ऽ ऽ ऽ।। ऽ ऽ । ऽ । ।। ।। ऽ
पहले + आँसा + मे थे, मानस + मे कूद + मग्नां + प्रिय अब + थे।
१ + २ + ३, ४ + ५ + ६ + ७ +

ऽ ऽ । ऽ। ऽ ऽ । ऽ । ऽ ऽ । ऽ ।। ऽ
छींटे + वहां उडे + थे, बडे बडे + अश्रु * + वे कब + थे ॥
१ + २ + ३, ४ + ५ ६ + ७ +

—साकेत

(२)

कवि निर्धन भी होकर शठ की सेवा कभी न करता है ।
रत्नाकर मे जाकर, हस कभी क्या विचरता है ?

—रामचरित उपाध्याय

(३)

दल है तो बास नहीं , बास नहीं तो न प्रचुर मकरद ।
मधुप एक कुसुम में , गुण दो या तीन तो नहीं मिलते ॥

—चन्द्रधर शर्मा

---

† तीस मात्रा वाले पहले दल के छठे गण में जगण रहता है या चारों ही वर्ण लघु रहते हैं ।

* सत्ताईस मात्रा वाले दूसरे दल में छठा गण एक लघु का ही मान लिया जाता है ।

गीति[1] (उग्गाहा उद्गाथा)

इस के विषम (पहले-तीसरे) चरणों में बारह बारह और सम (दूसरे चौथे) चरणों में अठारह अठारह मात्राएँ होती हैं। चरणान्त में गुरु रहता है। प्रत्येक दल के विषम (पहले, तीसरे, पाँचवें, सातवें) गणों (चौकलों) में जगण का निषेध है। छठे गण में जगण रहता है अथवा चारों वर्ण लघु रहते हैं —

(१)

रघुवर तन यश समता चन्द करैं कहहु कौन भाँतिन तें[2] ।
दोषान्वेषी वह नित, यह निर्मल है प्रकाश कान्तिन तें ॥
—गदाधर

(२)

करुणे क्या रोती है ? 'उत्तर' मे और अधिक तू रोई—
'मेरी विभूति है जो, उसको 'भव भूति' क्यों कहे कोई ?
—साकेत

उपगीति (गाह)

इस के विषम (पहले तीसरे) चरणों में बारह बारह और सम (दूसरे और चौथे) चरणों मे पन्द्रह-पन्द्रह मात्राएँ होती

---

१ पथ्या आदि विपुला, आदि गीति के सोलह उपभेद हैं।

२ आर्या छन्द में पहले उदाहरण में गुरु-लघु द्वारा चौकलों को दिखा दिया गया है। उसी तरह लक्षण के अनुसार उदाहरणों में चौकल समझ लेने चाहिएँ।

हैं। विषम (पहले, तीसरे, पाँचवें, सातवें) गणों में जगण का निषेध है। चरणान्त में गुरु रहता है —

हरि मुख सुखद ससी सो, हासी मृदु अमिय[1] सी बासी।
नवला नजरि चकोरी, छवि रस पीवै तऊ प्यासी॥

—समनेम

उद्गीति (विग्गा, विगाथा)

इस के विषम (पहले, तीसरे) चरणों मे बारह-बारह दूसरे में पन्द्रह और चौथे में अठारह मात्राएँ होती हैं। विषम (पहले, तीसरे, पाँचवें, सातवें) गणों में जगण का निषेध है—

मन मे रख ममता को, पर-हित कर जीवन[2] सफल हो।
जो प्रश्न सामने हो, हल हो जब तक नहीं तुझे कल हो॥

—मान

आर्यागीति* (खधा, स्कधक, साहिनी)

इसके विषम (पहले-तीसरे) चरणों में बारह-बारह और

---

१ सत्ताईस मात्रावाले सब दलों में छठा गण एक लघु का मान लिया जाता है। अत यहाँ 'य' एक लघु वर्ण का ही छठा गण है।

२ देखो टिप्पणी तीसरी।

---

* आर्यागीति (खधा) के सत्ताईस भेद हैं —

राजसेना

णदउ भद्दउ सेस सरग,
सिव बभ वारण वरुण,

सम (दूसरे चौथे) चरणों में बीस बीस मात्राएँ होती हैं। चरणान्त मे गुरु रहता है। विषम (पहले, तीसरे, पाँचवें, सातवें) गणों (चौकलो) मे जगण का निषेध है —

(१)

स्वामि सहित सीता ने, नन्दन माना सघन कानन भी।
वन उर्मिला वधू ने, किया उन्ही के हितार्थ निज उपवन भी॥
—साकेत

(२)

स्त्री चिन्ता की सीमा, बहुत हुई तो द्वार देहरी तक है।
अगणित चिन्ताओं मे, घूमा करता पुरुषों का मस्तक है॥
—चन्द्रहास

णीलु भअण तालक सेहर
सर गअणु सरहु विमई,
खीर णअणु णर णिद्ध णेहलु।
मअगलु भोअलु सुद्ध सरि
कुंभ कलस ससि जाण।
सरह सेस ससहर गुणहु
सत्ताइस खंधाण॥
—प्रा० पिं०

अर्थात् नन्द, भद्र, शेष, सारंग, शिव, ब्रह्मा, वारण, वरुण, नील मदनताटंक, शेखर, शर, गगन, शरभ, विमति, क्षीर, नगर, नर, स्निग्ध, स्नेहल मन्कल, लोल, शुद्ध, सरि, कुंभ, कलश, और शशि ये सत्ताइस भेद खन्धान (आर्यागीति) के हैं।

गाहिनी और सिंहनी*

गाहिनी

इसके विषम (पहले-तीसरे) चरण मे बारह बारह, दूसरे चरण मे अठारह और चौथे चरण मे बीस मात्राएँ रहती हैं। चरणान्त मे गुरु रहता है प्रत्येक दल मे मात्राओ के पश्चात जगण रहता है –

न कुछ कह सकी अपनी, न उन्हीं को पूछ मैं सकी भय से,
अपने को भूले वे, मेरी ही कह उठे सखेद हृदय से॥

—साकेत

---

* पुव्वद्ध तीस मत्ता
पिंगल पभणेइ मुद्धिणि सुणेहि।
उत्तद्धे वत्तीसा
गाहिनि विवरीअ सिंहिणी भणु सव्व॥

—प्रा० पि०

अनुवाद

पूर्वार्द्धे त्रिशन्मात्रा पिंगलो भणति हे मुग्धे शृणु।
उत्तरार्द्धे द्वात्रिंशद् गाहिनी, विपरीता सिंहनीं भणति सर्वे॥
अर्थात् गाहिनी का उलटा सिंहिनी छन्द होता है।

वर्ण-वृत्त

सम

१ वर्ण के छन्द—२

श्री*

(ग)

सी, धी। री, धी॥

—रामचन्द्रिका

---

*जितने वर्णों का छन्द है आरंभ में शीर्षक दे दिया है। उस शीर्षक के भीतर उतने ही वर्णों के छन्द समझने चाहिएँ। इसी तरह छन्दों की विस्तृत परिभाषाएँ न लिखकर गुरु, लघु और वर्णिक गणों के आदि के सांकेतिक अक्षर दे दिये हैं। कितने वर्णों पर विराम होगा, उसके लिए अंकों में संख्या दे दी गई है और दूसरे नाम कोष्ठ में दे दिए गये हैं। उदाहरणार्थ 'इन्दिरा वृत्त', का लक्षण यों लिखा गया है।

इन्दिरा (कनक मंजरी)

(न र र ल ग) ६, ५

इसी की विस्तृत परिभाषा यों हो जाती है—

नगण (।।।), रगण (ऽ।ऽ), रगण (ऽ।ऽ), लघु (।) और गुरु (ऽ) के क्रम से ग्यारह वर्ण का 'इन्दिरा' अथवा कनक-वृत्त होता है, छ और पाँच वर्णों पर विराम रहता है।

(११ वर्ण के छन्दों के उदाहरण देखो।)

वर्ण-वृत्त

सम

१ वर्ण के छन्द—२

श्री

(ग)

सी, धी। री, धी॥

—रामचन्द्रिका

जितने वर्णों का छन्द है आरंभ में शीर्षक दे दिया है। उस शीर्षक के भीतर उतने ही वर्णों के छन्द समझने चाहिएँ। इसी तरह छन्दों की विस्तृत परिभाषाएँ न लिखकर गुरु, लघु और वर्णिक गणों के आदि के सांकेतिक अक्षर दे दिये हैं। जितने वर्णों पर विराम होगा, उसके लिए अंकों में संख्या दे दी गई है और दूसरे नाम कोष्ट में दे दिए गये हैं। उदाहरणार्थ 'इन्दिरा वृत्त', का लक्षण यों लिखा गया है।

इन्दिरा (कनक मंजरी)

(न र र ल ग) ६, ५

इसकी विस्तृत परिभाषा यों हो जाती है—

नगण (।।।), रगण (ऽ।ऽ), रगण (ऽ।ऽ), लघु (।) और गुरु (ऽ) के क्रम से ग्यारह वर्ण का 'इंदिरा' अथवा कनक-मंजरी वृत्त होता है, छः और पाँच वर्णों पर विराम रहता है।

(११ वर्णों के छन्दों के उदाहरण देखो।)

२ वर्ण के छन्द—४

कामा

(ग ग)

ध्याये, राधा । त्यागे, बाधा ॥

—मान

महि

(ल ग)

सबै, तजौ । हरी भजौ ॥

—कन्हैयालाल मिश्र

सार

(ग ल)

(१)

राम, नाम । सत्य धाम ॥

(२)

और, नाम । को न, काम ॥

—रामचन्द्रिका

मधु

(ल ल)

छल, तज । हर, भज ॥

—कन्हैयालाल मिश्र

३ वर्ण के छन्द—८

नारी (ताली)

(म*)

रागी सो, रोगी है। त्यागी सो, योगी है।

—मान

शशी

(य)

दुखी को ?, कुपथी। सुखी को ?, सुपथी॥

—मान

प्रिया

(र)

त्यागिये, काम को। ध्याइये, श्याम को।

—मान

रमण

(१)

जग है, सपना। कन है अपना।

(२)

दुख क्यों, टरि है। हरिजू, हरि है॥

—रामचंद्रिका

* यहाँ 'म' मगण का बोधक है। इसी प्रकार आगे सभी छन्दों में 'ल' लघु का 'ग' गुरु का और उनके अतिरिक्त वर्ण अपने गण के बोधक हैं।

पचाल

(त)

जो धीर । सो वीर ।
जो दीन । सो हीन ॥

—मान

मृगेन्द्र

(ज)

कृपालु , दयालु ।
उमेश , रमेश ॥

—मान

मदर

(भ)

गावहिं , रामहि ।
पावहि , धामहि ॥

—गदाधर

कमल

(न)

कमल , नयन ।
शरण , भय न ॥

—मान

विजोहा (विमोहा, जोहा, विज्जोदा)

(र र)

शम्भु को दण्ड दै। राजपुत्री कितै।
टूक द्वै तीन कै। जाहुँ लकाहि लै॥

—रामचन्द्रिका

तिलका (तिल्ला, तिल्लना)

(स स)

हरि को जु भजे। खल संग तजे।
सब काज सरे। भव सिंधु तरे॥

—गदाधर

मथान

(त त)

वाणी कही जान। कीन्हीं न सो कान।
... न। रे बदि कानीन॥

—रामचन्द्रिका

... राम।
...॥

—हरदेव

रमल

(र ल ल)

बाँसुरी सुर । वेधि कै उर ।
साथ लै मन । जातु है वन ॥

—सुमनेस

यमक

(न ल ल)

हरि भजहु । छल तजहु ।
सरन गहु । मगन रहु ॥

६ वर्ण के छन्द—६४

शेषराज (विद्युल्लेखा)

(म म)

श्यामै श्यामै ध्यावै । सो नौ निद्धै पावै ।
जानो साधो सोई । छाँडो माया मोही ॥

—हरदेव

सोमराजी (शखनारी)

(य य)

गुनो एक रूपी, सुनो वेद गावैं ।
महादेव जाको, सदा चित्त लावैं ॥

—रामचन्द्रिका

विज्ञोहा (विमोहा, जोहा, विज्जोहा)

(र र)

शम्भु को दण्ड दै। राजपुत्री कितै।
टूक द्वै तीन कै। जाहुँ लकाहि लै॥

—रामचन्द्रिका

तिलका (तिल्ला, तिल्लना)

(स स)

हरि को जु भजे। खल संग तजे।
सब काज सरे। भव सिंधु तरे॥

—गदाधर

मथान

(त त)

चाणी कही जान। कीन्हीं न सो कान।
अद्यापि आनी न। रे वदि कानीन॥

—रामचन्द्रिका

मालती

(ज ज)

जपो नित नाम। रमापति राम।
कटैं दुख द्वन्द। बढ़ै सुखकंद॥

—हरदेव

मोहन

(स ज)

जन राजवंत । जग योगवंत ।
तिन को उदोत । केहि भाँति होत ॥

—रामचन्द्रिका

अपरमा

(ज स)

दुखी जनन को । सुखी करन को ।
हरी अवतरें । धरा दुख हरें ॥

—मा

शशिवदना (चण्डरसा)

(न य)

शुभ सर शोभै । मुनि मन लोभै ।
सरसिज फूले । अलि रस भूले ॥

—रामचन्द्रिका

७ वर्ण के छन्द—१२८

शीर्षरूप (शिष्या)

(म म ग)

शुद्धात्मा था ज्ञानी था । प्राणों का भी दानी था ।
ऊँचा हिन्दू पानी था । राणा सच्चा मानी था ॥

- मान

मदलेखा

(म स ग)

मैला चित्त न राखे। झूठी बात न भाखे।
सच्चा है तप ये ही। मानो बात सनेही॥

—भान

समानिका

(र ज ग)

देखि देखि कै सभा। विप्र मोहियो प्रभा।
राज-मण्डली लसे। देव-लोक को हँसे॥

—रामचन्द्रिका

कुमार ललिता

(ज स ग)

विरंचि गुण देखै। गिरा गुणनि लेखैं।
अनंत मुख गावैं। विशेषहि न पावैं॥

—रामचन्द्रिका

करहंस (करहंच, वीर वर)

(न स ल)

इक दिवस अंत। भज मन अनंत।
शरण भगवन्त। रहत सब संत॥

—गदाधर

मधुमती

(न न ग)

भव भय हरना। असरन-सरना।
हरि गुरु चरना। निसि दिन ररना॥

—भान

सुवांस (सवासन)

(न ज ल)

सब सुख धामहिं । रट मन रामहिं ।
तज जग कामहि । लहहु अरामहिं ॥

—मा

८ वर्ण के छन्द—२५६

विद्युन्माला

(म म ग ग) ४, ४

मोहै, द्रोहे, कोहै, कामैं । नासै की है शक्ती जामैं ।
राधे-कृष्णा गाओ गाओ । निश्चै साधो मुक्ती पाओ ॥

—मा

मल्लिका (समानी)

(र ज ग ल)

(१)

देश देश के नरेश । शोभिजै सबै सुबेश ।
जानिये न आदि अंत । कौन दास कौन संत ॥

—रामचन्द्रिक

(२)

बोलि यों मराल राज । साजि कै दुहूँ सुकाज ।
माँगि कै विदा विनोद । जाति भो विरंचि कोद ॥

—नैषधकाव्

नगस्वरूपिणी (प्रमाणिका, प्रमाणी)

(ज र ल ग)

(१)

सुनो न ज्ञान कारिका। शुकी पढ़ैं न सारिका।
न होम धूम देखिये। न गाथ बधु पेखिये॥

—केशव

(२)

नमामि भक्त वत्सल। कृपालु शील कोमल।
नमामि ते पदाम्बुज। अकामिना स्वधामदम्॥

—रामचरितमानस

कुमार ललिता† (कुमार लहरी)

(ज स ल ग)

(१)

रटो जु नँद नद को। तजो जु भव फंद को।
हरो जु दुख द्वद को। भजो जुसुखकद को॥

—गदाधर

(२)

भजो जु ब्रजचद को। तजो जु दुख द्वन्द को।
सजो जु सुख कंद को। लहो बहु अनन्द को॥

—कन्हैयालाल

† कोइ कोई 'ज स ग' के क्रम से इसे सात वर्ण का मानते हैं।

(३)

हमें तव वरै, यहै। प्रभुत्व जब तो लहै।
न दीठि यहु धौं परै। सु कौन चरचा करै॥

—गुमान मिश्र

चित्रपदा

(भ भ ग ग)

सीय जहीं पहिराई। रामहिं माल सोहाई।
दुंदुभि देवं बजाये। फूले तहीं बरसाये॥

—रामचन्द्रिका

तुरगम (तुंग)

(न न ग ग)

बहुत बदन जाके। बिबिधि बचन ताके।
बहु भुजयुत जोई। सबल कहिय सोई॥

—रामचन्द्रिका

पद्म (कमल, मान, क्रीड़ा)

(न स ल ग)

(१)

हरि हर ररो ररो। भव-नद तरो तरो।
दुख दल दरो दरो। सुख भल भरो भरो॥

—हरदेव

दुरद

(ज ज ग ग)

भली महराज है है। किजै हरदेव देहै॥
करौ तदबीर सोई। नहीं अब ढील होई॥

—सुजान चरित्र

माणवक (माणव की क्रीड़)

(भ त ल ग) ४, ४

पालक गो विप्रन को। शालक है शत्रुन को।
शत्रु अनी, पच्छिन को। बाज-सिखा दच्छिन को॥

—मान

नराचिका

(त र ल ग)

हो बात सत्य सो कहे। पै स्नेह में सनी रहे।
पाले सदा स्वधर्म को। औ मानवीय-कर्म को॥

—मान

दिगीश (ईश)

(स ज ग ग)

उर में गुपाल भागीं। पद-पद्म प्रेम पागीं।
हर ध्याइ जो अमन्दे। दिग ईस जाहि बन्दे॥

—दास

वितान

(स भ ग ग)

अपनी ही हठ ठाने। पर की बात न माने।
वह है मूरख मानी। निहचै लो यह जानी॥

—मान

९ वर्ण के छन्द—५१२

पाईता

(म भ स)

ताके दोनों कुल गनिये। औ दोनों लोचन मनिये।
जो ते नारी गुण गनियौ। सो हैं लागे श्रुति सुनियो॥

—नैषधकाव्य

बिम्ब

(न स य)

फल अधर बिंब जासो। कहि अधर नाम तासों।
लहत द्युति कौन मूँगा। वरणि जग होत गूँगा॥

—नैषधकाव्य

रतिपद (कमला, कुमुद)

(न न स)

दरस मिलत रवि सों। तपति गहत छवि सो।
परसि परसि हम कों। शशि बढत तम कों॥

—नैषधकाव्य

सारंगिका

(न य स)

यतन करी हौ रचि कै। सुरपति काजै सचि कै।
तेहि पर यों सोचति हौ। तुम न मृषा रोचति हौ॥

—नैषधकाव्य

महालक्ष्मी

(र र र)

जग कै हौं दिली सें करौ। नेसनाजूर वैरी करौं।
नाहि तौ सीस टोपी धरौं। हाल ही जाइ मक्कै मरौं॥

—सुजानचरित्र

मणिबन्ध (मणिमध्या)

(भ म स)

आपुहि राख्यो जो न चहै। कर्म लिख्यो तौ पाइ रहै।
कर्महिं लागै हाथ सोऊ। जो मनि बाँध्यो गाँठि कोऊ॥

—दास

हलमुखी

(र न स) ३, ६

धन्य जन्म निज कहती। प्राण वार तहि रहती।
देखि ग्वारि लहि सुख को। मैन गर्व हर मुख को॥

—दास

भुजग शशिभृता (भुजग शुभ्रता, भुजग शिशुसुता युक्ता)

(न न म) ७, २

दुख पर दुख भी पाओ। पर सत-पथ ही जाओ।
भव-भय-हर को ध्याओ। अनत न चित ले जाओ॥

—मान

१० वर्ण के छन्द—१०२४

संयुत (संयुक्ता)

(स ज ज ग)

(१)

हनुमत लंकहि लाइ कै। पुनि पूँछ सिंधु बुझाइ कै।
शुभ देखि सीतहि पाँ परे। मनि पाइ आनँद जी भरे॥

—रामचन्द्रिका

सारवती

(भ भ भ ग)

लक्ष्मण हाथ हथ्यार धरो। यज्ञ वृथा प्रभु को न करो।
हौं हय को कबहूँ न तजौं। पट्ट लिख्यो सोइ बाँचि लजौं॥

—रामचन्द्रिका

अमृत गति (त्वरित गति)

(न ज न ग) ५, ५

सुमति महा मुनि सुनिये। जग महँ सुक्ख न गुनिये।
मरणहिं जीव न तजहीं। मरि मरि जन्म न भजहीं॥

—रामचन्द्रिका

वामा (सुषमा)

(त य भ ग) २, ८

दीनों-दुखियों से प्रेम करे। सेवा करने का नेम धरे।
आये दिन कष्टों से न डरे। भाखे न कभी यों 'हाय मरे' ॥

—मान

चम्पक माला (रुक्मवती)

(भ म स ग) ५, ५

याचक हैं तेरे हम आये। देखत ही प्यारी फल पाये।
मारग को आयासु वितावैं। कारज को सौ आपु बतावैं ॥

—नैषधकाव्य

कीर्ति

(स स स ग)

अब देव सँदेस न भाखौ। यह दूतकथा धरि राखौ ॥
हम माँगत अंजलि जोरे। यह बोलि रही मुख मोरे ॥

—नैषधकाव्य

मनोरमा (सुंदरी)

(न र ज ग) ६, ४

समय-साधता सुधी वही। समय साध ना कुधी वही।
वचन पालता व्रती वही। वच न पालता व्रती नहीं ॥

—मान

मत्ता

(म भ स ग) ४, ६

मोमें होवे अवगुण कोई। काटो, केशो सुमिरहुँ तोही।
रामा कृष्णा प्रभु कह जोई। होवे ऊँचा सब पर सोही॥

—गदाधर

शुद्ध विराट्

(म स ज ग)

हे शंभो ! भव-यातना हरो। जी में ये शुभ-भावना भरो।
दीनों के हित में लगा रहूँ। जीते जी सब का सगा रहूँ॥

—भान

मयूर सारिणी (मयूरी)

(र ज र ग)

दीनबधु दीनबन्धु रामें। रामचन्द्र रामचन्द्र नामें।
कृष्णचन्द्र, कृष्णचन्द्र-धामें। कीजिये सदा सदा प्रणामें॥

—गदाधर

उपस्थिता

(त ज ज ग) २, ८

वीरा करुणाकर सागर। धीरा कमलापति आगर।
वंशीधर बामन नागर। धाता धन धाम उजागर॥

—गदाधर

पणव

(म न ज ग)

पूर्णानन्दहि हित जो भजै। देवाधीशहि मन से सजै।
कोनै कामहि छिन मे तजै। ताको हो पग पदहा नजै॥

—गदाधर

११ वर्ण के छन्द—२० ४८

शालिनी*

(म त त ग ग) ४ ७

धामै-धामै, रत्न-वेदी सुहावैं।
वेदी-वेदी, भक्त सवाद भावें॥
वादै ही सों, बोध चित्तै प्रकासै।
बोधै पाये, शंभु की मूर्ति भासै॥

—पूर्ण

अभिराम

(न ज र ल ग)

समय विचार बात जो कहै।
स्वजन-समाज दुख जो दहै।
विगत विमोह राग जो रहै॥
विबुध-समाज मान्यता लहै।

—भान

* शालिनी और इन्द्रवज्रा के योग से 'मुक्ति' उपजाति बनता है। उपजाति प्रकरण में देखो।

इन्दिरा (कनक-मंजरी)

(न र र ल ग) ६, ५

(१)

महर नन्द का, पुत्र तू नहीं।
निखिल सृष्टि का, सादि रूप है॥
उदित है हुआ, वृष्णि-वश में।
व्यथित विश्व के, त्राण के लिये॥

(२)

तव सुधा मयी, प्रेम जीवनी।
अघ निवारिणी, क्लेश हारिणी॥
श्रवण सौख्यदा, विश्व तारिणी।
मुदित गा रहे, धीर अग्रणी॥

—श्रीधर पाठक

दोधक (नीलस्वरूपा, बन्धु)

(भ भ भ ग ग)

देखि फिरो सगरो जग मैं हूँ।
जानत हैं मन की गति तैं हूँ॥
देखि परयो न कहूँ प्रभु तो सो।
दीनदयालु, न दीन न मो सो॥

—हरदेव

स्वागता (रागाधर)

(र न भ ग ग)

राज राज दशरत्थ तनै जू।
रामचन्द्र भुवचन्द्र बनै जू॥
त्यों विदेह तुम हू अरु सीता।
ज्यों चकोर तनया शुभ गीता॥

—रामचन्द्रिका

मोटनक (मोटक)

(त ज ज ल ग)

सो हैं घन स्यामल घोर घनें।
मोहैं तिन मे बक पाँति मनें॥
सखावलि पी बहुधा जल स्यों।
मानो तिन को उगिलै बल स्यों॥

—रामचन्द्रिका

अनुकूला

(भ त न ग ग)

पावक पूज्यो समिध सुधारी।
आहुति दीनी सब सुखकारी॥
दै तब कन्या बहु धन दीन्हों।
भाँवरि पारि जगत जस लीन्हों॥

—रामचन्द्रिका

सुमुखी

(त ज ज ल ग)

सब नगरी बहु सोभ रये।
जहँ तहँ मंगलचार ठये।
बरनत हैं कविराज बने।
तन मन बुद्धि विवेक सने ॥

—रामचन्द्रिका

रथोद्धता

(र न र ल ग)

(१)

चित्रकूट तब राम जू तज्यो।
जाय यज्ञ थल अत्रि को भज्यो ॥
राम लक्ष्मण समेत देखियो।
आपनो सफल जन्म लेखियो ॥

—रामचन्द्रिका

(२)

कौशलेन्द्र पदकंज मंजुलौ।
कोमलाम्बुज महेश वंदितौ ॥
जानकी कर सरोज लालितौ।
चिंतकस्यमनभृंग संगिनौ ॥

—रामचरित मानस

भुजंगी

(य य य ल ग)

(१)

बड़ाई न बाँटी पदों के लिये।
कढ़ी तान ली तुकड़ों के लिये॥
समालोचको नम्रता धारिये।
महावीरता यों न विस्तारिये॥

—नाथूराम शङ्कर शर्मा

(२)

नहीं लालसा है विभो! वित्त की।
हमें चेतना चाहिये चित्त की॥
भले ही न दो एक भी सम्पदा।
रहे आत्म-विश्वास पूरा सदा॥

—मैथिलशरण गुप्त

कली (द्दाकलिका)

(भ भ भ ल ग)

शोभत दण्डक की रुचि बनीं।
भाँतिन भाँतिन सुदर घनी॥
सेव बड़े नृप की जनु लसैं।
श्रीफल भूरि भयो जहँ बसैं॥

—रामचन्द्रिका

श्येनिका

(र ज र ल ग)

आठ ओर आठ दीठि दै रह्यौ।
लोकनाथ आश्चर्य वै रह्यो॥
भूलि विश्व कर्म हू सुरावुरी।
राजथान देखि चित्त आतुरी॥

—नैषधकाव्य

विश्वंक माला (धीर)

(त त त ग ग) ६, ५

योद्धा भगे वीर, शत्रुघ्न आये।
कोदण्ड लीन्हें, महा रोष छाये॥
ठाढ़ो तहाँ एक, बालै विलोक्यो।
रोक्यो तहीं जोर, नाराच मोक्यो॥

—रामचन्द्रिका

इन्द्रवज्रा

(त त ज ग ग)

(१)

पाके तुम्हें शेष न और पाना।
हो क्योंकि, सारे सुख का खज़ाना॥
होते तुम्हीं से नर पूर्ण काम।
हे रौप्य-मुद्रे ! तुमको प्रणाम॥

—मैथिलीशरण गुप्त

(२)

तेजस्वियो ! तेज अरी दिखादो ।
सच्छास्त्र विद्या सब को सिखा दो ॥
जो सो रहे हैं उनको जगा दो ।
आलस्य सारा उनका भगा दो ।

—गिरधर शर्मा

उपेन्द्रवज्रा*

(ज त ज ग ग)

(१)

बड़ा कि छोटा कुछ काम कीजै ।
परन्तु पूर्वापर सोच लीजै ॥
बिना विचारे यदि काम होगा ।
कभी न अच्छा परिणाम होगा ॥

—मैथिलीशरण गुप्त

(२)

बलाभिमानी धरणी धनेश ।
कहो कहाँ हैं अब वे जनेश ?
चले गये हैं सब आप आप ।
हुआ न दो ही दिन का प्रताप ॥

—मैथिलीशरण गुप्त

* इन्द्रवज्रा और उपेन्द्रवज्रा के मेल से चौदह उपजाति छन्द बनते हैं, उपजाति प्रकरण में इन्हें देखिये ।

वातोर्मि ×

(म भ त ग ग) ४, ७

राका बोली, शशि से नाथ आओ।
मेरे काले, कच तो गूँथ जाओ॥
फूलों को ला, उनमें ही सजाओ।
मेरे जी में, रस-धारा बहाओ॥

—गिरीश

उपस्थित

(ज स त ग ग) ६, ५

प्रमाद उर में, मैं ही भरूँगा।
प्रसाद मन का, मैं ही हरूँगा॥
विषाद जग में, मैं ही धरूँगा।
विमुक्त उस से, मैं ही करूँगा॥

—गिरीश

पथस्थित

(त ज ज ग ग)

पाखंड न छू हम को गया था।
थे चित्त सनेह-सने हमारे॥

× वातोर्मि और शालिनी के योग से 'द्विज' उपजाति बनता है। उपजाति प्रकरण में देखो।

हैं आज न तौर न वे तरीके।
हा! हा! अब वे दिन ही हवा हैं॥

—मान

भ्रमर विलसिता

(म भ न ल ग) ४, ७

तेरा मेरा, यह सब सपना।
माया को तू, समझ न अपना।
हो जी में हो, भव नद तरना।
तो तू प्यारे, हरिहर ररना॥

—मान

गगन

(स स स ग ग)

वह भी दिन थे जब थे त्यागी।
अब तो हम हैं गहरे रागी॥
मन से शुचिता, समता भागी।
हा! हा! मोह-मयी ममता जागी॥

—मान

शील

(स स स ल ल)

फटके भय पास न रे मन!
घर हो अथवा वन निर्जन।

निज लक्ष न भूल कभी क्षण ।
पर-काज लगो अपना तन ॥

— मान

चपला

(त भ ज ल ग)

साथी न धैर्य यदि हो अपना ।
तो लक्ष्य-सिद्धि समझो सपना ॥
हाँ, कीर्ति प्राप्ति नर वे करते ।
निश्शंक जो कि जग में फिरते ॥

—मान

श्री पति

(भ भ न ग ल)

मोहन हैं जब द्रवित आप ।
मोह न द्रोह न रहत पाप ।
हैं मिटते सब कठिन ताप ।
भूल नहीं लग संकत शाप ।

—मान

१२ वर्ण के छन्द—४०९६

मोदक

(भ भ भ भ)

राज तज्यो धन धाम तज्यो सब ।
नारि तजी सुत सोच तज्यो तब ॥

आपनपौ जु तज्यो जग बंद है।
सत्य न एक तज्यो हरिचंद है॥

—रामचन्द्रिका

तोटक (त्रोटक)

(स स स स)

जय राम सदा सुखधाम हरे।
रघुनायक सायक चाप धरे॥
भव-वारण दारण सिंह प्रभो।
गुण-सागर नागर नाथ विभो॥

—रामचरित मानस

(२)

तप में तनु दाहक चण्ड हुए।
हिम की ऋतु में हिम-खण्ड हुए॥
कुछ भी सुविचार किया न अरे!
तुम आखिर पत्थर ही ठहरे॥

—मैथिलीशरण गुप्त

स्रग्विणी (लक्ष्मीधर, शृंगारिणी, कामनी, मोहन)

(र र र र)

राम आगे चले मध्य सीता चलीं।
बंधु पाछे भये सोभ सों भै भलीं॥

देखि देही सबै कोटिधा कै भनो।
जीव जीवेश के बीच माया मनो॥
—रामचन्द्रिका

तामरस
(न ज ज य)

जब सब वेद पुरान नसैहैं।
जप तप तीरथ हू मिटि जैहैं॥
द्विज सुरभी नहिं कोउ विचारै।
तब जग केवल नाम अधारै॥
—रामचन्द्रिका

प्रमिताक्षरा
(स ज स स)

अब भी समक्ष वह नाथ खड़े।
बढ किन्तु रिक्त यह हाथ पड़े॥
न वियोग है न यह योग सखी।
कह कौन भाग्य मम भोग सखी॥
—साकेत

भुजग प्रयात
(य य य य)
(१)

कहूँ किन्नरी किन्नरी लै बजावैं।
सुरी आसुरी बाँसुरी गीत गावैं॥

कहूँ पद्मिणी पद्मिणी लै पढ़ावैं।
नगी कन्यका पन्नगी को नचावैं॥
—रामचन्द्रिका

(२)

चतुर्वर्ग-धाम चतुर्धाम धन्यम्।
चतुर्धर्म वर्णाश्रमाणा शरण्यम्॥
चतुर्दिक्षु रम्य-स्थली-भूरि पुण्यम्।
भजे-भू शिरो-भूषण भू वरेण्यम्॥
—भारतगीत

इन्द्रवशा*

(त त ज र)

योंही बड़ा हेतु हुए बिना कहीं।
होते बडे लोग कठोर यों नहीं।
वे हेतु भी यों रहते सुगुप्त हैं।
जो अद्रि अम्भोनिधि में प्रलुप्त हैं॥
—चन्द्रदास

वंशस्थविलम्

(ज त ज र)

मुकुन्द चाहें यदुवंश के बने।
रहें सदा या वह गोप वंश के॥

* इन्द्रवशा और वंशस्थ विलम् के मेल से अनेक उपजाति छन्द बनते हैं, उपजाति छन्दों में देखो।

न तो सकेंगे ब्रज-भूमि भूलि वे।
न भूलि देगी ब्रज मेदिनी उन्हें।

—हरिऔध

(२)

बना रहे प्रेम सदा स्वदेश का,
तथा रहे ध्यान सदा स्व वेश का।
बुरा हमारा न प्रभो चरित्र हो,
विचार-धारा अति ही पवित्र हो॥

—मणिराम गुप्त

द्रुतविलंबित (सुंदरी)

(न भ भ र)

(१)

ठुमुकते गिरते पड़ते हुए,
जननि के कर की उँगली गहे।
सदन में चलते जब श्याम थे,
उमड़ता तब हर्ष पयोधि था॥

—प्रिय-प्रवास

(२)

जय रमापति श्री पति श्री विधे।
जगत-जीवन श्री करुणानिधे॥
जन न जानत ताप-त्रयी कहीं?
सतत रक्षत आप खड़े जहाँ॥

—'सिरस'

मोतियदाम

(ज ज ज ज)

(१)

अदेयन की उर आनि अनीति।
निवाहन को सुर पालन रीति॥
सुधारन को जन को अधिकार।
धरयो हरि वामन को अवतार॥

—पूर्ण

(२)

तमाल के ऊपर है बक पाँति।
कि नील शिला पर सत जसाति॥
नक्षत्रनि अंक लिये घनश्याम।
कि श्याम हिये पर मोतियदाम॥

—भिखारी दास

(३)

गिरे चरणों पर थे कपिनाथ।
उठा अपने कर से भुज थाम॥
लगा उरसे उर को कर प्यार।
मिले कपिनायक से सुख धाम॥

'सेव'

कुसुम विचित्रा

(न य न य) ६, ६

जब कविराजा रघुपति देखे।
मन नर-नारायण सम लेखे॥
द्विज वपु कै श्री हनुमत आये।
बहु विधि दै आशिष मन भाये॥

—रामचन्द्रिका

चन्द्रवर्त्म

(र न भ स)

स्नान दान तप जाप जो करियो।
सोधि सोधि उर माँझ जो धरियो॥
जोग जाग हम जा लगि गहियो।
रामचन्द्र सबको फल लहियो॥

—रामचन्द्रिका

वारिधर

(र न भ भ)

राजपुत्रि यक बात सुनौ पुनि।
रामचन्द्र मन माँह कही गुनि॥
राखि दीह जमराज सनी जनु।
जातनानि तन जानत कै मनु॥

—रामचन्द्रिका

गौरी

(त ज ज य)

(१)

तातें ऋषिराज सबै तुम छाँड़ौ।
भूदेव सनाढ्यन के पद माँड़ौ॥
दीन्हों तिनको तुमही बरु रूरो।
चौहूँ युग होय तपोबल पूरो॥

(२)

सुग्रीव, कहा तुमसों रण माँड़ौ।
तोकों अति कायर जानि कै छाँड़ौं॥
बाली सब तो कहँ नाच नचायो।
तौ ह्याँ रन मडन मोसन आयो॥

—रामचन्द्रिका

सारग (मैनावली)

(त त त त)

जो जीव के दान को देत समार।
तौ आपनो जीव नहीं तु उद्धार॥
तू देतु है मोहि को जीव ते बाढि।
हौं देउँ का तोहि दारिद्र सों डाढि॥

—नैषधकाव्य

मोदक

(भ, न, ज, य)

देखहु भरत चमू सजि आये।
जानि अबल हमको उठि धाये॥
हींसत हय बहु वारन गाजे।
दीरघ जहँ तहँ दुंदुभि बाजे॥

—रामचन्द्रिका

मंदाकिनी

(न न र र) ८, ४

कुमुद विमुद देख री भामिनी।
गत सकल विलोक री यामिनी॥
उडु गण उड से गये व्योम से।
फट हृदय गया महा शोक से॥

—गिरीश

मालती (यमुना)

(न ज ज, र,) ७, ५

अहह! यही वह, धर्मभूमि है।
अहह! यही वह, कर्मभूमि है?
अब हम, में, वह, ज्ञान है कहाँ?
अब हम में वह, मान है कहाँ?

—मान

शील

(य य य ज)

उमानाथ सा नाथ कोई न और।
नहीं शान्तिदा है कहीं और ठौर॥
सदानद की है नहीं और मुक्ति।
इन्हीं के भजे से मिले भुक्ति मुक्ति॥

—मान

प्रभा

(न न र र)

मधुरिपु मधु सूदना माधवा।
हरि प्रभु अज नामना सावधा॥
सब जग सुख मे सुनौ यादवा।
तुम सब दुख के अहौ नाधवा॥

—गदाधर

नव मालिती (नव मालिका)

(न ज भ य) ८, ४

रघुपति दीनबन्धु मम स्वामी।
निज पद प्रीति देहु प्रभु नामी॥
हर करि घोर अश अविवेकू।
कब करिहौ हमार सुधि नेकू॥

—गदाधर

प्रियम्वदा

(न भ ज र)

तुरत ही करत मान खडना ।
दनुज नाश कर सन्त मडना ॥
अधिक शोक हर लोक सोहना ।
परम सुदर त्रिलोक मोहना ॥

—गदाधर

उज्वल

(न न भ र)

कमल-नयन पावन राम को ।
जलधि-शयन गोकुल-धाम को ॥
सुगति करन मोहन श्याम को ।
भजन करहु सोहन नाम को ॥

—गदाधर

मधुर गति

(न न स स)

गगन-सघन घन छाय रहे ।
रिमि झिमि जल बरसाय रहे ॥
कलित-ललित-लतिका लहरें ।
मगन-मगन सब ही बहरें ॥

—भान

ललिता

(त भ ज र)

सोहै बसंत सखि आज लाल के।
गोपी मुख लगि गुलाल लाल के॥
बाजै मृदंग धुनि छाय के रही।
गावें नचै सुनि सनै सु मैं कही॥

—गदाधर

मृदुगति

(न न न य)

घन उमडि घुमडि नभ छाये।
बरसत सरसत मन भाये॥
लखियत चहुँ दिसि धुरवा हैं।
बन बन कुहकत मुरवा हैं॥

—भान

तरल नयन

(न न न न) ६, ६

बिघनहरन, भगत सरन।
सरन सुखद, जलद बरन॥
जगत बिपिन, बिपति हरन।
कमल नयन, भजहु चरन॥

—कन्हैयालाल

श्रवण-प्रिय

(न न न र)

सत जन-सतत फलपायगा ।
खल-नर न वह फल पायगा ॥
पर-हित-निरत तन जायगा ।
मर कर अमर बन जायगा ॥

—मान

त्रिलास

(भ न य भ)

जीवन सफल उसी का है बस ।
दे पर-हित अपना जो सर्वस ॥
मान सहित मरना श्रेयस्कर ।
मान रहित नर जीवे ज्यों खर ॥

—मान

रमण

(ज र ज र)

जिसे न ध्यान जाति का न देश का ।
जिसे न भान है स्वदेश-चेप का ॥
महान नीच मातृभूमि भार है ।
पशू समान जिंदगी असार है ॥

—मान

धारी

(ज ज ज य)

मयूर पखा सिर सोभित नीको।
सुभाल सजो भल चंदन टीको॥
सुपीत पटी वन माल लसी है।
भली अधरान लसै बनसी है॥

—मान

नभ

(न य स स)

समर-धनी को सुख क्या ! दुख क्या !!
अमर बने तो जय है, भय क्या ?
नर-वर भागे न कभी रन से।
विचलित होता न कभी पन से॥

—मान

वासना

(न स ज र)

मत सरल शुद्ध जो रहा करे।
दुख अनल बीच क्यों दहा करे॥
सुख भरन अन्न जो दिया करे।
फल परम पुण्य का लिया करे॥

—मान

जलोद्धति गति

(ज स ज स) ६, ६

असार जग को, स सार समझो।
प्रपच लख के, उदास मत हो॥
डिगो न विचलो, चलो सँभल के।
प्रसन्न मन से, स्वधर्म-पथ मे॥

—मान

प्रभासुखसार

(भ भ भ स)

देख घिरे दल बादल दुख के-
वीर नहीं टुक धारज तजते॥
देख रुकावट रचक मग में-
कायर कपित हो चल दल से॥

—मान

द्रुतपदा *

(न भ ज य)

वचन-वीर जग में बहुतेरे।
करम वीर विरल कहुँ हेरे॥
धरम कर्म्म सब है मुख मोडे।
सवन सत्य श्रुति मारग छोड़े॥

—मान

* कोइ कोइ आचार्य 'न भ न य' के क्रम से द्रुतपदा मानते हैं।

रुक्मविचित्रा

(न य स य)

अब न विसारो घनश्याम प्यारे ।
बहुत तुम्हारे बिन हैं दुखारे ॥
दरस बिना है बहु काल बीता ।
तनिक सुनाओ फिर नाथ गीता ॥

—मान

कंठ भूषण

(म य य य)

बोलो बात जो सो सदा सत्य सानी ।
मीठी हो, खरी हो, गठी हो, प्रमानी ।
त्यागी हो न रागी बनो स्वाभिमानी ।
जायें प्राण ही किन्तु जाये न पानी ॥

—मान

श्रीदाम

(भ न न स)

चाह न तनिक धनिक रुख की ।
चाह न सरग-नरग सुख की ॥
चाह न धन-जन निज-पन की ।
चाह फकत हरि-दरसन की ॥

—मान

सुभगपुट (पुट)

(न न म य) ८, ४

बलकल तन पै हा ! वस्त्र धारे ।
वन वन फिरते हैं पुत्र प्यारे ॥
उन बिन अब भी मैं जी रहा हूँ ।
अधम निलज हूँ पापी महा हूँ ॥

—मान

साधु

(न स त ज) ७, ५

रटन जिसे के लागी सिय राम ।
मिलत निहचै वाको हरि धाम ॥
भजन बिन को जाता भव-पार ?
भजन इक है सच्चा सुख-सार ॥

—मान

तारिणी

(न स य स)

शुचि सरल चित्त में शान्ति रहे ।
तन निरुज पुष्ट हो कान्ति रहे ॥
मन अभय और निर्भ्रान्त रहे ।
सुखवलित झोपड़ी प्रान्त रहे ॥

—मान

१३ वर्ण के छन्द—८१९२

मञ्जु भाषणी

(स ज स ज ग)

चुप बैठ राम शुभ नाम लीजिए।
गुण से अतीत गुण गान कीजिए॥
मत वाम दाम पर ध्यान दीजिए।
गत राग द्वेष पय प्रेम पीजिए॥

—गिरीश

कन्द

(य य य य ल)

किते को धमकी धमाधम्म बन्दूक।
किते को गये लूकि के ते गये सूकि॥
किते बीर वै तीर चीरें घनी भीर।
मिले छीर में छीर ज्यों नीर में नीर॥

—विनायक

(२)

फबै फैल कै छूट यों भाल पै बार।
मनो चन्द पै चारसी बाल के तार॥
लसै बीच ठोढी भलो सामरो बिन्दु।
मनो कञ्ज पै सोभजै भौंर को नन्द॥

—हरदेव

तारक

(स स स स ग)

तुम ही जग हौ जग है तुम ही मे।
तुम ही विरची मरजाद दुनी में॥
मरजादहि छोड़त जानत जाको।
तब ही अवतार धरो तुम ताको॥

—रामचन्द्रिका

कलहस (सिंहिनी, सिंहनाद, नन्दिनी)

(स ज स स ग)

हति इन्द्रजीत कहँ लक्ष्मण आये।
हँसि रामचन्द्र बहुधा उर लाए॥
सुनि मित्र पुत्र सुभ सोदर मेरे।
कहि कौन कौन सुमिरौं गुन तेरे॥

—रामचन्द्रिका

पकज वाटिका (कज अवलि, पंकावली, एकावली)

(भ न ज ज ल)

सूरज चरण विभीषण के अति।
आपुहि भरत पखारि महामति॥
दुदुभि धुनि करि कै बहु भेवनि।
पुष्प बरषि हरषे दिवि देवनि॥

—रामचन्द्रिका

माया

(म त य स ग) ४, ६

लीला ही सो, बासव जी में अनुरागौ।
तीनों लोकै, पालत नीके सुर पागौ॥
जो जो चाहो, सो तुम बासौं सब लीजो।
कीज मेरी, ओर कृपा सो सर भीजो॥

—नैषधकाव्य

विलासी

(म त म म ग) ५, ३, ५

कैसे भूलेंगी, लगी जो, गासी सी बातें।
जी में शालें हैं, अभी भी, जो की थीं घातें॥
सच्चा मानी ही, लगाता, प्राणों की बाजी।
मीठा पानी ही, कराता, है हाँ-जी, हाँ-जी॥

—मान

चचरीकावली

(य म र र ग) ६, ७

हर माधौ यादौ, बामना पूतनारी।
प्रभू कृष्णा, विष्णा, कस के प्राण हारी॥
विभू रामा सीता, दास के सुक्ख कारी।
कला शोभा धारी, कूबरी दीन तारी॥

—गदाधर

राधा

(र त म य ग) ८, ५

भूल जाता जो दिये को, पुण्य सो पाता।
डूब जाता है उसीका, जो फिरे गाता॥
मातृ-भाषा मातृ-भू से, है जिन्हे नाता।
धन्य हैं वे गण्य है वे, मान्य हैं भ्राता॥

—मान

मनोरमा (राग)

(र ज र ज ग)

हैं महान मूढ ही चलें कुपथ में।
बुद्धिमान जो चलें सदा सुपथ में॥
वीर्यवान जान जो डरें न युद्ध से।
मित्र हैं वही मिलें जो चित्त शुद्ध से॥

—मान

प्रभावती

(त भ स ज ग) ८, ९

माधौ हरी, धरणि धरी कृपा करी।
यादौ दया करण अघासुरी अरी॥
वंशीधरी, तन-मन गोपिका हरी।
कीन्ही भली, गिरधर कुमरी वरी॥

—गदाधर

रुचिरा

(जभसजग) ४, ६

भजौ भजौ, मन ! अघ ओघ भञ्जने ।
रटौ रटौ, मन ! दुख दोष गञ्जने ॥
कहौ कहौ, मन ! हरि नेत्र-कञ्जने ।
गहौ गहौ, मन ! तुम भक्त-रञ्जने ॥

—गदाधर

चण्डी

(तनस सग)

जय जग-जननि हिमालय-कन्या ।
जयति जयति जय शक्ति सु-धन्या ॥
कलुष कुमति मद मत्सर खण्डी ।
जयति जयति जन तारणि चण्डी ॥

—भिखारीदास

चन्द्ररेखा

(नसररग) ६, ७

बुध वह लखे, देश को काल को जो ।
शठ निज तजे, चाल को ढालको सो ॥
सदय जन ही, दीन को मानते हैं ।
निरदय नहीं, दर्द को जानते हैं ॥

—मान

चन्द्रिका

(न न त त ग) ७, ६

कुरव कलरवौ हू करे बोलि कै।
द्विरद गति हरैं, मद ही डोलि कै॥
दशन द्युति लजीली करै दामिनी।
हसनि सन जितै, चन्द्रिका भामिनी॥

—भिखारीदास

पुष्पमाला

(न न र र ग) ९, ४

मन क्रम-वच-से बने, राम का जो।
निसि दिन जप भी करे, नाम का जो॥
भव निधि चट पार हो जायगा सो।
परम-सुखद मोक्ष भी, पायगा सो॥

—मान

मध्य

(न न न न ग)

धरम करम कछु बनत नहीं।
पर-हित महँ मन लगत नहीं॥
हरि-हर गुरु पद भजत नहीं।
वह नर भव-निधि तरत नहीं॥

—मान

रमाविलास

(र र र र ग)

अम्बिके ! अन्नपूर्णे ! उमे ! कालिका हे !
दुष्ट की घालिका, सृष्टि की पालिका हे !
चण्डिके ! शैलजे ! देवि ! दुर्गे भवानी !
'मान' के 'मान' को रक्ष हे शुभ रानी !!

—मान

चपकली

(ज ज ज ज ग) ५, ८

करे न कभी, नर काम निकाम को।
भजे नित ही, मनमोहन श्याम को।।
मिले न कलेश, उसे फिर नाम को।
बिना श्रम सो, पहुँच हरि धाम को।।

— मान

वेला

(न य र र ग) ६, ७

समझ सके हैं, प्रेम का तत्व कोई।
बस कि पतगे, मीन हैं दीन दोई।।
स्व-तन दिये पै, एक है वार देता।
स्व घर छुटे ही, दूसरा प्राण देता।।

—मान

केसरी

(य य र र ग) ६, ७

करो काम ऐसे, देश के लाभ के हों।
खड़े गर्व से हो, सभ्य ससार आगे॥
पढ़ो मातृ भाषा वेष भूषा न भूलो।
भला क्या रखा है, व्यर्थ आडम्बरो मे॥

—मान

विलेप

(न न न ज ल)

अति सदय हृदय मन मोहन।
गत मद-मन रिपु पर कोह न।
शुचि सहज चरित अति पावन।
नर-रतन, जगत-मन-भावन॥

—मान

पाटीर

(स न न स ग)

कहना सठ सन मरम न जी का।
रहना सदय हृदय सँग नीका।
लगता खल सँग अपयश टीका।
बिन दौलत जग समझहु फीका॥

—मान

१४ वर्ण के छन्द—१६३८४

वसंत तिलका (वसंत तिलक, सिंहोन्नता)

(त भ ज ज ग ग)

सारे विहंग नभमण्डल में गये हैं।
भौंरे रसाल मुकुलों पर जा बसे हैं॥
प्यारे तड़ाग ! तव क्षीण दशा हुए हा ?
दीनातिदीन यह मीन अहो ! करे क्या ?

—कन्हैयालाल पोद्दार

तरणि

(त र स र ल ग) ६, ८

देखे गये न वीर हटें, ठान ठान के।
आगे बढ़ें अधीर नहीं, तान तान के॥
बोलें सदैव बात बड़े, छान-छान के।
हैं कर्मवीर योग्य सदा, 'मान' मान के॥

—मान

चक्र (धन विरति)

(भ न न न ल ग)

जा वन मृगपति रव भयकर है।
पौन सुतपत बहत सर सर है॥
घूमत फिरत निकर निशिचर हैं।
ता वन फिरत लखन सिय रघु हैं॥

—समसम

मनोरमा (मनोरम)

(स स स स ल ल)

हम हैं दसरत्थ महीपति के सुत।
सुभ राम सुलच्छन नामन सजुत॥
यह सासन दै पठये नृप कानन।
मुनि पालहु घालहु राक्षस के गन॥

—रामचन्द्रिका

हरिलीला (मुकुन्द)

(त भ ज ज ग ल) ८, ६

फूली लवग लवली लतिका विलोल।
भूले जहाँ भ्रमर विभ्रम मत्त डोल॥
बोलैं सुहस शुक कोकिल केकिराज।
मानो बसत भट बोलत युद्ध काज॥

—रामचन्द्रिका

इन्दु वदना

(भ ज स न ग ग)

गो सुतनि लीलिन अघासुर अघानो।
बालकनि साक लगि कान्ह अनखानो॥
लाल चख लाल मुख कै भृकुटि बाँकी।
पैठि मुख मारि किय देवनि निसाँकी॥

—समनेस

प्रहरणि कालिका

(न न भ न ल ग) ७, ७

दशरथ-सुत को, सुमिरन करिये।
बहु जप तप में, भटकि न मरिये॥
विरद विदित है, जिन चरनन को।
प्रहरन कलि काटन दुख गन को॥

—भिखारीदास

चारु (सुखदा)

(त य स त ल ल) ७, ७

केसौ हरि गोपाल, सु जै जै श्यामघन।
केसी बक चानूर, निपाती वीर रन॥
राधावर श्री कृष्ण, सु राखो आप पन।
गोपीपति गोविंद, हरौ जू पाप तन॥

—भिखारीदास

मदनमयक

(र र ज र ल ग)

राम का नाम ले, न भूल कृष्ण नाम को।
लोभ को त्याग दे, विरोध क्रोध काम को॥
शम्भु की शक्ति की, उपासना किया करे।
प्रेम से नेम से, सुसंग भी किया करे॥

—श्रीमाली

अपराजिता

(न न र स ल ग) ७, ७

रघुवर सर सैन, रावन की हई।
छन महिं महि मुड रुडन सों छई॥
हर गन बहु मुड-माल बनावहीं।
रुधिर पियत प्रेत मण्डल गावहीं॥

—समनेस

हंसश्रेणी

(म भ न य ग ग)

फोरो भाँडो हरि महरि छरी लै धाई।
काँपे केसों अँग अँग भरि आँखें आईं॥
जो मा जो हो सुत मुख भय भीनो दीनो।
सो ढीलों हाथ उठत गहि आली लीनो॥

—समनेस

अश्व (अनन्द)

(ज र ज र ल ग)

पियो नृसिंह रक्त पेट देत फारि कै।
लपेटि मेद गात आँत ग्रीव धारि कै॥
प्रताप ज्वाल माल आसमान लौं लगी।
सिकोरि नासिका मुदे मुखै रमा भगी॥

—समनेस

नागराज

(न न न न ल ल)

हरि नग पर गिरिवर तकि तकि।
इक रहहिं अचल अँग जकि जकि॥
इक कहत भरत गर थकि थकि।
इक उठत सुरपतिहिं बकि बकि॥

—समनेस

वासन्ती

(म त न म ग ग) ६, ८

वाणी द्वारा प्रेम प्रणय की हाला पीते।
वाणी द्वारा कोप-अनल की ज्वाला पीते॥
वाणी द्वारा शक्ति, गठन को भी पाते हैं।
वाणी द्वारा 'मान', परम मानी पाते हैं॥

—मान

मजरी (वसुधा, पथा)

(स ज स य ल ग) ५, ९

द्विजराज हैं, न अथ वेद को मानते।
यहि पालते, न नृप-नीति को जानते॥
मन चाहते, सहज ख्याति हो नाम की।
दिन रात है, सनक प्राप्ति हो दाम की॥

—मान

रेवा (लक्ष्मी)

(म स त न ग ग) ८, ६

वाणी से पर नेत्रों की, सरनि[1] न आया।
कानों में पड़ मूढ़ों के, मन न समाया॥
जाने जो जड जीवों में, अविदित माया।
देखे सो त्रिगुणातीता, त्रिभुवन काया॥

—ज्वालाराम नागर 'विलक्षण'

चन्द्रोरस

(म भ न य ल ग) ४, १०

भीनी भीनी, सुमन-सुरभि आई जहाँ।
बौरी बौरी, मधुप-अवलि धाई वहाँ॥
ज्यो-ज्यो होठों, हँस हँस वह फूली कली।
त्यो-त्यों डालो, झुक झुक कर भूले अली॥

—ज्वालाराम नागर 'विलक्षण'

नदी

(न न त ज ग ग) ७, ७

कर युग जिनमें, स्वर्ण था कान्ति पाता।
लख मृदुल पना, सून[2] भी था लजाता॥
विधि वश उनकी, आज हैं सम्पदाएँ।
कठिन तर पड़ीं, लौह की शृङ्खलाएँ॥

—ज्वालाराम नागर 'विलक्षण'

---

१ मार्ग। २ पुष्प।

१५ वर्ण के छन्द

चामर

(र ज र ज र)

(१)

बोलिये न झूठ ईठि मूढ पै न कीजिये।
दीजिये जु वस्तु हाथ भूलि हू न लीजिये॥
नेहु तोरिये न देहु दुख मन्त्रि मित्र को।
यत्र तत्र जाहु पै पत्याहु जैं अमित्र को॥

—रामचन्द्रिका

(२)

वेद मन्त्र तन्त्र शोधि अस्त्र शस्त्र दै भले।
रामचन्द्र लक्ष्मनै सुविप्र छिप्र लै चले॥
लोभ छोभ मोह गर्व काम कामना हुई।
नींद भूख प्यास त्रास वासना सबै गई॥

—रामचन्द्रिका

मालिनी

(न न म य य)

(१)

विकल अति क्षुधा से देखि के पुत्र प्यारा।
जननि हृदय से है छूटती दुग्ध धारा॥

लखकर कु दशा त्यों दीन दु खी जनों को।
सहज प्रकट होती है दया सज्जनों की॥
—लक्ष्मीधर वाजपेयी

(२)

विलसित उर में है जो सदा देवता लौं।
वह निज- उर में है ठौर भी क्यों न देता॥
नित वह कलपाता है मुझे कान्त हो क्यो ?
जिस बिन कलपाते है नहीं प्राण मेरे॥
—'हरिऔध'

निसिपाल (निशिपालिका)

(भ ज स न र)

(१)

गान बिन मान बिन हास बिन जीवहीं।
तप्त नहिं खाय जल सीत नहिं पीवहीं॥
तेल तजि खेल तजि खाट तजि सोवहीं।
सीत जल न्हाय नहिं उष्ण जल जोवहीं॥

(२)

खाय मधुरान्न नहिं पाय पनही धरैं।
काय मन वाच सब धर्म करिवो करैं॥
कृच्छ्र उपवास सब इन्द्रियन जीत हीं।
पुत्र सिख लीन तन जौ लगि अतीत हीं॥
—रामचन्द्रिका

सुप्रिया (शशिकला, माला, चन्द्रावती, मणिगुण, शरभ)

(न न न न स) ६, ६

कहुँ द्विजगण मिलि सुख श्रुति पढहीं।
कहुँ हरि हरि हर हर रट रढ हीं॥
कहुँ मृगशिशु मृगपति पय पिय हीं।
कहुँ मुनिगण चितवत हरि हिय हीं॥

—रामचन्द्रिका

भ्रमरावली (नलिनी, मनहरण)

(स स स म स)

तरहीं भहराइ भजे रग हैं सरसो।
बहु सोरनि साजत हैं मिलि कै इर सों॥
लगि मारुत चचल पकज सुदर सो।
सर मानहुँ भूपति को बरजै कर सों॥

—नैपधकाव्य

मनहस (मानसहस, रणहस)

(स ज ज भ र)

तप आगि में तनु होमि कै सब सत हैं।
सुर लोक के फल लेन को बिलसत हैं॥
सुरलोक सो तुम ओर आवत धाइ सों।
तुम ताहि क्यों न चहौ कहो केहि भाइ सो॥

—नैपधकाव्य

(७)

अलि जोग सीखन की नहीं परवाह है।
अब भोग भूषन को हमें नहिं चाह है॥
बलि बार बारहि माँगती विधि सों यहै।
कित हूँ रहैं नँदलाल आनँद सो रहैं॥

—समनेस

सारंगी

(म म म म म) ८, ७

देखो रे देखो रे कान्हा, देखी देखा धावो जू।
कालिंदी में कूद्यो कालीनागै नाथ्यो लावो जू॥
नच्चैं बाला नच्चैं ग्वाला, नच्चैं कान्हाँ के संगी।
बज्जै भेरू रूदंगी तम्बूरा चंगी सारंगी॥

—भिखारीदास

प्रभद्रिका

(न ज भ ज र)

रघुवर आज मातु पितु छाँडि के गये।
अवधपुरी में दुख द्वंद आय के छये॥
जगत कहै भले कुयश कैकई लये।
हम सब शोक के विपिन आज ते भये॥

—गदाधर

चित्रा

(म म म य य) ८, ७

फूले-फूले फूले वारी, सेज मे जो विहारै।
सीतै धूपे डाभै काँटे, में सु क्यों पाँव धारै॥

सोचै भाखै रोवै झखै, कौशल्या औ सुमित्रा।
कैसे सैहैं दुखै सीता, कोमलांगी विचित्रा॥

—भिखारीदास

विपिन तिलका

(न स न र र)

डुलत नहिं गात नहिं बोलती चौंक ही।
सुरति तन की न गति जाति है ना कही॥
अनमिष सुनैन छवि साँवरी छै रही।
निरखि सिय राम कहँ चित्र सी ह्वै रही॥

—समनेस

चन्द्रलेखा

(म र म य य) ७, ८

राधा भूले न जानो, यों है लवन्या न मेरी।
जेहा तेहा विहारी, सी तौ प्रभा है घनेरी॥
भौहैं ऐसी कमानै, हैं नैन मो कंज देखो।
नासा ऐसो सुआतुण्डै आस्य[1] सो चन्द्र लेखो॥

—भिखारीदास

ऋषभ

(स य स स य) ६, ६

मन में कभी भी न रखो, छल छिद्र भाई।
सपने पड़ीं वस्तु कभी, न छुओ पराई॥

---

१ मुख।

करते रहो काम भले, रुचि पूर्ण प्यारे।
ग्गम ठीक हो आप खडे अपने सहारे॥

—मान

चन्द्रकान्ता

(र र म स य) ७, ८

मार्ग काटों भरा है, छूटे सब साथ वाले।
घोर काली निशा है, झञ्झानिल भी झकोरे॥
हिंस्र व्याघ्रादि भी हैं, सारे वन-बीच डोले।
मौत का सामना है, हे मोहन आ बचाओ॥

—

नल*

(न न र म र)

सुजन वचन सत्य, मीठे प्यारे बोलते।
श्रवण सु-मन बीच, मिश्री मानो घोलते॥
सदय हृदय वीर, पक्के होते बात के।
सहन करते घाव, भारी वज्राघात के॥

—

---

* इसकी गति कुछ कुछ 'मिताक्षरी' से मिलती है। वा
समयुक्तकों में मिताक्षरी को देखो।

१६ वर्ण के छन्द—६५५३६

नराच (पच चामर, नागराज)

(ज र ज र ज ग)

जुवा न खेलिए कहूँ जुवान वेद रच्छिए।
अमित्र भूमि माहिं जैं अभक्ष भक्ष भक्षिए॥
करौ न मन्त्र मूढ़ सों न गूढ मन्त्र खोलिए।
सुपुत्र होहु जैं हठी मठीन सों न बोलिए॥

—रामचन्द्रिका

(२)

त्रिलोकि लोल कुण्डले, प्रभा कपोल पै बनी।
मुखारविन्द पै अमद, अलिका फबी घनी॥
गवै सु-राग रागिनी, मृदंग बीन बाजहीं।
कलिंद नंदिनी समीप, नन्दलाल राजहीं॥

—हरदेव

विशेषक (नील, लीला, अश्वगति)

(भ भ भ भ भ ग)

साधु कथा कथिये दिन केशव दास जहाँ।
विग्रह केवल है मन को दिन मान तहाँ॥
पावन वास सदा ऋषि को सुख को बरषै।
को बरणै कविताहि विलोकत जी हरषै॥

—रामचन्द्रिका

वाणिनि

(न ज भ ज र ग)

रघुबर बान काटि सिर रावनै गिराये।
छुधित पिसाच झुंड बहु रुंड मास खाये॥
उगिलत जात एक एक खात सीस नाये।
लखन गये जे कीस चख मूँदि भाजि आये॥

—समने

चकिता

(भ स म त न ग) ८, ८

कै हर जग नासै कै, टकोरो धनु धुनि कै।
कै सुरपति के गाजे, बेई लैं धनु पुनि कै॥
आवतु न मनै एकौ, सकै यों सब गुनि कै।
काँपत ब्रज के बासी, केसी को रव सुनि कै॥

—समनेस

सुखसार

(भ त य ज र ल) ६, ५, ५

कोकिल की कूक, भली आम्र की, विसाल डार।
नेह सने चातक, हैं पी कहाँ, रहे पुकार॥
पावस को पौन, बहै मद सी, परै फुहार।
बागन के बीच, परे झूलना, खरी बहार॥

—मान

वाणी दास

(न य म म स ग) ८, ८

कर लकुटी लै धाई, सारी भूली अटपाई।
थर थर देही काँपै, आँखों में है डर छाई॥
निय कर नोई बाँधे, देखो री सूध कन्हाई।
ब्रज सिगरे सो जीते, मा सों एको न बसाई॥

—समनेस

१७ वर्ण के छन्द–१३१०७२

मन्दाक्रान्ता ✓

(म भ न त त ग ग) ४, ६, ७

(१)

-आँखें हैं जिधर फिरतीं, चाहती श्याम को हैं।
नो को भी मुरलि रव की, आज लौं लगी है।
ई मेरे हृदय तल को, पैठ के जो निलोकै।
पावेगा लसित उस में, कान्ति प्यारी उन्हीं की॥

—प्रियप्रवास-

(२)

री न्यारी प्रभु पद रता कान्त चिन्ता उपेता।
ई जावे परम मधुरा मानवी प्रीति पूता॥
द्भावों से विलस सरसे सारभूता दिखावे।
वे सारे रुचिर रस से सिक्त साहित्य सत्ता॥

—हरिऔध

शिखरिणी

(य म न स भ ल ग) ६, ११

(१)

कुचालों ने मारे, मनुज मतवाले कर दिये।
कुपथों में सारे, विकट कटु-भाषी भर दिये॥
हठीले होने को, हठ न अगुओं की मति हरे।
हमारे रोने को, सुनकर कृपा शंकर करे॥

—नाथूराम 'शंकर' शर्मा

(२)

हिमांशू चन्दा सों, कुसुमशर तो सो कहत क्यों।
नहीं साँचे दोऊ, इन गुनन मोसे जनन कों॥
खरी छोड़े ज्वाला, वह किरन पाला सँग धरी।
तुहू वज्राकारी, निज सुमन के बानन करे॥

—अभिज्ञान शकुन्तला नाटक

पृथ्वी

(ज स ज स य ल ग) ८, ६

(१)

अगस्त ऋषिराज जू, वचन एक मेरो सुनो।
प्रशस्त सब भाँति भूतल सुदेश जी में गुनो॥
सनीर तरु-खण्ड, मण्डित समृद्ध शोभा धरे।
तहाँ हम निवास की विलम पर्णशाला करैं॥

—रामचन्द्रिका

(२)

समीर अति शीतला सुखद मन्द ऐसी चले।
मतंग-मद से भरे गमन झूमते ज्यों करे॥
सुवासित सरोज यों स्व मुख खोल यों थोड़े हिले।
नये शिशु, पढ़े यथा तनिक घूमते घूमते॥
—गोविंददास

रूपकान्ता (भालचन्द्र)

(ज र ज र ज ग ल)

अशेष पुन्य पाप के कलाप आपने बहाय।
विदेहराज ज्यों सदेह भक्त राम को कहाय॥
लहै सुभुक्ति लोक लोक अंत मुक्ति होहि ताहि।
कहै सुनै पढ़ै गुनै जु रामचन्द्र चन्द्रिकाहि॥
—रामचन्द्रिका

मालाधर

(न स ज स य ल ग) ६, ८

वचन सुनिकै तहाँ कनक हंस मोहो महा।
सरस नहिं दास यों पिक नवीन बाणी कहा॥
वदन लखि लाज सों नृप-कुमारि जानी जहीं।
मुदित मन ह्वै तहीं, चतुर चारु-बाणी कही॥
—नैषधकाव्य

हारिणी (द्रोहारिणी)

(म भ न म य ल ग) ४, ६, ७

मेधा देवी, सुचित करनी, आनन्द विस्तारिणी ।
प्रायश्चित्तो, वहु जनम को, दण्डार्ध में टारिणी ॥
दोषै खण्डी, दुरित हरणी, सताप सहारिणी ।
राधा माधो, चरित चरचा, सद्रोह द्रोहारिणी ॥

—भिखारीदास

हरिणी

(न स म र स ल ग) ६, ४, ७

लजित करता, जे हैं अभोज खजन मीन के ।
वसत निज जे, ही में गोपाल लाल प्रवीन के ॥
फिरत बन में, वे तौ पाले, परे पशु हीन के ।
त्रिय दृगन से, कैसे नैना, कहो हरिणीन के ॥

—भिखारीदास

वशपत्र पतिता

(भ र न भ न ल ग) १२, ५

दीन दयाल वश कुल तारण, भय हरना ।
मोद प्रदान कस बक मारण, सुख करना ॥
माधव सत दीन- जन कारण, गिरि धरना ।
श्रीपति चक्रपाणि मणि धारण, भजु चरना ॥

—गदाधर

भाराक्रान्ता

(म भ न र स ल ग) ४, ६, ७

नीकी लागैं, सरस कविता, अलङ्कृत सूनियों।
सोहैं है ज्यों, विधु वदनि साज बाज विहूनियों॥
नाहीं भावै, अरस कबहूँ, सुधी न एकौ घरी।
भाराक्रान्ता अभरननि, ज्यों विभूषित पूतरी॥

—दास

तरंग

(स भ स भ भ ग ग) ५, ५, ७

उनकी मीठी प्यार भरी वे बातें भूलूँगी कैसे?
रस की प्यासी मैं विष के प्याले को छूलूँगी कैसे?
श्रवणों में गूँजा करतीं वे रोकूँगी आली कैसे?
मधु ही देतीं जो उनको मानूँगी मैं व्याली कैसे?

—गिरीश

मंजीरा

(म म भ त य ग ग) ६, ८

ऐसी क्या बातें हैं री कह, क्यों तू मुदमत्ता ऐसी।
फूली फूली भूली होकर, भूली रस मग्ना जैसी॥
मेघों सी शोभावाले वनमाली कर लाली पायी।
क्या जो प्यारे फलों के मिस, तेरे मग लाली छायी॥

१८ वर्ण के छन्द—२६२१४४

चचरी (चरचरी; विधु-प्रिया)

(र स ज ज भ र) ८, १०

छुटि गोल कपोल कुतल, स्वेद सोहत, विन्दु है।
स्याम वारिज से वड़े दृग पूर आनन इन्दु है॥
गुच्छ कान मयूर पच्छ किरीट दच्छिन नै रह्यौ।
आजु यों व्रजराज जोहत जन्म को फल मैं लह्यौ॥

—समनेस

हीरक (हीर)

(भ स न ज न र) १०, ८

पंडित गण मंडित गुण, दंडित मति देखिये।
क्षत्रिय वर धर्म प्रवर, क्रुद्ध समर लेखिये॥
वैश्य सहित सत्य रहित, पाप प्रगट मानिये।
शूद्र सकति विप्र भगति, जीव जगत जानिये॥

—केशव

महामोदकारी (क्रीड़ा चक्र)

(य य य य य य)

हरे कृष्ण केसौ कृपासिंधु माधौ मुकुन्दो मुरारी।
हृपीकेश केशीरिपो नन्दनन्दा धरा चक्र धारी॥
प्रभो प्राणदाता परब्रह्म विष्णो वली कैटभारी।
हरौ जू हरौ वेदना पूतना प्राणहारी हमारी॥

—भिखारील

मजीर

(म म भ म म म म) ६, ६

मोरगौरी आली मरा मन, या वृन्दावन सोभा देखे।
देखे रीझेगी तोहू अति, मैं ही भावत रेखा रेखे॥
एरी कान्हाजू को निर्तन, कोऊ चित्त न राखै धीरा।
जोटी जोटा नचै ग्वालिनी, बज्जैं झालरि औ मजीरा॥

—दास

नन्दन

(न ज भ ज र र) ११, ७

मनु मुनि मो कह्यो चहत जो, दरयो विथा के गनै।
तजि सब आसरै जगत को, करैं एही तू धनै॥
भव भ्रम को हनै भगति सों, सनै तनै औ मनै।
जसुमति नद ने गन्डस्यन्दने करैं वदनै॥

—दास

नाराच (महामालिका)

(न न र र र र) ६, ६

हरि गिरधर कोकिला, कठधारी महारूप तू।
त्रिभुवन सुखदा महा, दैत्यमारी बडो भूप तू॥
विपति दहन तू बली, नासकारी सुधा रूप तू।
पतित पुरुष औंर पापीन को धर्म का यूप तू॥

कुसुमित लतावेल्लिता

(म त न य य य) ५, ६, ७

जै जै गोविंदा, यदुपति हरी, माधवो दीन रागी।
जै जै गोपाला, त्रिभुवनपती, सावधा भूरि भागी॥
जै जै श्रीधामा, जगत अयना, मत के चित्त पागी।
जै जै आनदा, हितकर दया, कीजिये मोह लागी॥

—गदाधर

सिंह विस्फूर्जिता

(म म भ म य य) ५, ६, ७

भक्तो के प्यारे, आरे! रखवारे, देवकी के दुलारे।
पापी सहारे, ससार-महारे, शख चक्रादि धारे॥
तेरी है माया, वर्षों दुख पाया, काल ने हाय घेरा।
हे शोभाशाली, दे दे वनमाली, श्रीपदो मे बसेरा॥

—ज्वालाराम नागर 'विलक्षण'

चित्रलेखा

(म भ न य य य) ४, ७, ७

आयी वेला विरह दुखमयी प्रेम की वाटिका मे।
दोनों प्रेमी प्रतिक्षण अति ही उन्मने हो रहे थे॥
कोई भी तो कुछ कह न सका कठ था रुद्ध ऐसा।
चित्रों-जैसे अचल दृग किये देखते ही रहे वे॥

—हिन्दी पद्य रचना

अश्वगति (तीव्र)

(भ भ भ भ भ स) ८, १०

माधव गोकुलचद, गदाधर पावन निरता।
केशव पूरन धाम, हरीहर दूषन हरता॥
दीनन के प्रतिपाल, दया चित भावन धरता।
जो सुमिरे तव नाम, भला वह क्यो दुख भरता॥

—गदाधर

त्रिपुरारि

(न य न य न य) ६, ६, ६

कल हियरा मैं, गजमनि दामे, जनु उडु मामैं।
पियर पगा मे, लसत ललामे, अति अभिरामे॥
मुख ससि भामैं, दृग रसना मैं, छवि सुखधामैं।
करि मन भौरैं, चखनि चकोरैं दरसन स्यामैं॥

—समनेस

१६ वर्ण के छन्द—५२४२८८

शार्दूल विक्रीड़ित

(१)

(म स ज स त त ग) १२, ७

फूले कंज समान मंजु दृगता, थी मत्तता कारिणी।
सोने सी कमनीय-कान्ति तन की, थी दृष्टि उन्मेषिनी॥

राधा की मुसकान की मधुरता, थी मुग्धता-मूरि सी
काली-कुंचित-लम्बमान-अलकें, थी मानसोन्मादिनी।

—प्रियप्र

(२)

आ बैठी उर मोह जन्य-जड़ता, विद्या विदा हो गई।
पाई कायरता मलीन मन को, हा! वीरता खो गई॥
जागी दीन दशा दरिद्रपन की, श्री सम्पदा सो गई।
माया शंकर की हँसाय हमको, रुद्रा बनी रो गई॥

—नाथूराम 'शंकर' श

छाया

(य म न स त त ग) ६, ६, ७

अरी मेरी प्यारी, सजनि रविजे पी की कथा तो कहो।
कभी बीती बातें, हृदय उनका भी बेधती हैं अहो॥
बड़े निर्मोही हैं, न छन भर को, आते यहाँ श्याम हैं।
यहाँ खाना सोना, सकल बिसरा, आठों भरे याम हैं॥

— गिर

मणिमाल

(स ज ज भ र स ल) १२, ७

हम क्या रहे कब? क्या हुए अब? है नहीं कुछ भान।
किस ओर सब हैं जा रहे इसका नहीं कुछ ज्ञान॥
अब भी रहे यदि ऊँघते बस, मान लो अवसान।
सँभलें, बढ़े यदि चाहते जग जीवितों-बिच 'मान'॥

—'मा

शम्भु

(स त य भ म म ग) ५, ७, ७,

त्रिशिरा के खण्डन जै, भूमण्डन, केसी कंसा के काला ।
वनगोचारी, गिरि के धारी हरि, जै माधौ श्री गोपाला ॥
गणिका के तारण गीधो वारन, मैं तो हूँ चेरी तेरी ।
सुन दीनानाथ दया के सागर, भौ बाधा खोवो मेरी ॥
—हरदेव

रसाल

(भ न ज भ ज ज ल) ६, १०

मोहन मदन गुपाल, राम प्रभु शोक विदारन ।
सोहन परम कृपाल, दीन-जन आप उधारन ॥
प्रीतम सुजन दयाल, केशि बक दानव मारन ।
पूरण करुण सुजान, दीन दुख दारिद टारन ॥
—गदाधर

चन्द्रमाला

(न न न ज न न ल) ११, ८

रघुबर नर हरि भजिये, तजि सब घर पुर ।
चरण शरण गहि रहिये, तिहि छबि रखि उर ॥
जगत जनित भय मिटि हैं, यह समझहु लखि ।
जनम करम सब सरि हैं, करहु भगति सखि ॥
—गिरवर सहाय

मेघस्फूर्जिता

(य म न स र र ग) ६ ६, ७

हरे रामा कृष्णा, सुजन सुखदा, राम आनदकारी।
कृपा धारी ज्ञाता, भव-भय-हरी, दीन के दुःख टारी ॥
रमाधीशा त्राता, जगमति हितू, सत के शोक हारी।
दयासिन्धू मेरे, सुजन चित से, दीजिये पाप जारी ॥
—गदाधर

२० वर्ण के छन्द—१०४८५७६

गीतिका (गीत मुनिशेखर)

(स ज ज भ र स त ग) १२, ८

कुश मुद्रिका समिधै श्रुवा कुश, औ कमडल को लिये।
कटि मूल श्रोननि तर्कसी भृगुलात-सी दरसै हिये ॥
धनु बान तिक्त कुठार केशव, मेखला मृग चर्म स्यों।
रघुवीर को यह देखिये रसवीर सात्विक धर्म स्यों ॥
—रामचन्द्रिक

दण्डिका

(र ज र ज र ज ग ल)

टार के अपार धार वार को सुधार कै गिरिन्द्रि पान।
ग्वाल बाल जान कै अधीन हाल टाल कै सुरेन्द्रमान ॥
केशि कस कदना कृपालु दीन वदना हरो जु दोख।
गोप गाय पाल जू दयालु नन्दलाल जू सुदेहु मोख ॥
—हरदे

सुवदना (सर्ववदना)

(म र भ न य भ ल ग) ७, ७, ६

पूजा कीजै यशोदा, हरि हलधर को, मो सो सुनति हौ।
चाँधी मारो वृथा ही, इन कहँ अपनो, जायो गुनति हौ॥
पालै मारै सजावै, सकल जग यहै, है दैत्य कदनै।
याके जाके बखानै, करत सरस्वती स्यो सर्व वदनै॥

—दास

सुधा (शोभा)

(य म न न त त ग ग) ६, ७, ७

बसै शभू माथे, विमल शशि कला, पेलि ह्वाँते कढी है।
मरे हू प्राणी को, अमर करति है, साँचु या ते बढ़ी है॥
कहै याको पानी, गुन गनत न को, हास जान्यो न जाको।
सबै सीरो सोतो, सुरसरि महि आँ, स्वच्छ साँचो सुधा को॥

—दास

धवल

(न न न ज न न ल ग) ११, ९

रघुकुल रवि रघुबर को, वपुप निरखि हरपे।
भरत पुलक अति सिगरे, नयन सलिल बरसे॥
प्रिय तर पिय अँग सुपमा, पट हठ हग परसे।
निज सुकृत प्रथम तनु की, तनु धर जनु दरसे॥

—गदाधर

रमणक

(भ भ भ भ भ स ल ग) १२, ८

जो तिय लै हरि गो अरि बंधुहि, लंका दीन्ह बखानि है।
कै कुबरी सबरी अमरी गति, गीधे दीस न मानि है॥
देत सुदामहिं संकित श्री नहि लीन्हों श्रीपति पानि है।
रे मन मंद ! भजं नंदनंदहि, को ऐसो जग-दानि है॥

—समनेस

२१ वर्ण के छन्द—

स्नग्धरा

(म र भ न य य य) ७, ७, ७

(१)

हे दुर्गे, विश्वधात्री, जननि, भगवती हे शिवे, हे भवानी !
आर्ये, कल्याणि, वाणी, भव-भय हरणी, चण्डि त्रैलोक्य रानी !
पाके भी हाय ! माता, हम सब तुम-सी, ईश्वरी शक्तिशाली !
होंगे संसार में क्या, न अब फिर सुखी, तोड़ दुःखार्तिजाली ?

—मैथिलीशरण गुप्त

(२)

हिंसा, आलस्य, ईर्ष्या, कलह, रुज, घृणा, फूट, चिन्ता, विषाद,
हो जावें लोप सारे व्यसन, अघ, व्यथा, मोह, माया, प्रमाद।
काम-क्रोधादि, तृष्णा तज, जगत करे धर्म-स्वातन्त्र्य-पान,
पावे संसार सारे सुख, नित करते शान्ति संगीत गान॥

—लोचनप्रसाद पाण्डेय

नरेन्द्र (समुच्चय)

(भ र न न ज ज य) १३, ८

भाल विशाल पीन इभ इव भुज, काम सरानन भौंहैं।
लाजत देखि लाल नव जेलरुह भ्राजत नैन जु सौंहैं॥
पादप चीर काम तरुधर जनु, विश्व मनोरथ दाता।
देव अदेव सेव्य सरसिज पद, भूरि कृपा जन धाता॥
—गदाधर

मन विश्राम

(भ भ भ भ भ न य) १२, ६

मंजु लतानि वितान तरे घन, राजत रुचिर अखारे।
कान्ह कृपा सब काम देहै तरु, हेरत सुर तरु हारे॥
सिद्ध वधू, अँगराग सुगंधित, सोहत सुर सर न्यारे।
मंदर मेरुहि आदि महा गिरि, गोवरधन पर वारे।
—समनेस

सुखवितान

(भ भ भ त न भ स) ११, १०

मंजुल पानिप पानि भरो है, छबि लहरै लहरति है।
लोचन वारिज फूलि रहे हैं, निहँसनि सौरभ मति है॥
कुंचित केस अली अवली त्यों, धुनि मुरली रव तति है।
मोहन आनन इन्दु सरै में, मगन रहै अलि मति है॥
—समनेस

कविमयूर मुदकर

(भ भ भ भ भ भ र) १२, ६,

नील घटा घन सी तन की दुति, विज्जु घटा पट पीयरे।
वै धनु लौं वनमाल रही वक, पाँति मनों मुकता लरें॥
ज्यो घहराति बजै मुरली बरसै रस बूँद सु हीयरे।
पावस सों सुन भावन आवत, ताप भरे हियरा हरे॥

—समनेस

२२ वर्ण के छन्द—४१९४३०४

हसी

(म म त न न न स ग) ८, १४

श्री को चाही औरै दीनों, अतिथिन पर अति करुण करी है।
इच्छा ही सों भोगै सागौ, नयन सहस सब सिधि सिधरी है॥
तेरी बातें मीठी मीठी, सुनि सुनि तरल सुचित गति तेरी।
तीनौ लोकै पालौ नीकै, धनि धनि धनि हरि मति तेरी॥

—नैपधकाव्य

भद्रक

(भ र न र न र न ग) १०, १२

राम गुपाल दीन कुशला; हरे परम पावना भज मना।
दीनदयालु कृष्ण भय हा, बली धरम धारना दुखहना॥
पाप विदार केशि बकहा, घनी परम सुदरा नरतना।
प्रेम प्रतीत नेम हित दा, सुखी करन पाप काटहु घना॥

—गदाधर

मोद

(भ भ भ भ भ म स ग)

गोकुल-नायक जै सुखदायक गोविंद गोपीप्रान अधारा।
कंस-विहंडन जै अघ खंडन जै जय श्री स्वामी करतारा॥
स्याम सरोरुह लोचन सुंदर श्रीपति सोभा धाम अपारा।
माधव जादव वंश विभूषन दानौ दारन देव उदारा॥

—भिखारीलाल

मदिरा* (चकोर)

(भ भ भ भ भ भ भ ग)

(१)

सिंधु तर्यौ उनको बनरा तुम पै धनु रेख गई न तरी।
बाँदर बाँधत सो न बँध्यो उन वारिधि बाँधि के बाट करी॥
श्री रघुनाथ प्रताप की बात तुम्हें दसकंठ न जानि परी।
तेलहु तूलहु पूँछ जरी न जरी, जरि लंक जराइ जरी॥

—केशव

(२)

किंचित कोप के कारण सों जिहि, आनन ओप अनूपम सो।
गुंजित सिंजनि को धनु लै जुग छोरनि मंजु टकोरत जो॥
चंचल पंच शिखानि किये वरसावत सैन पै बान विभो।
चूइ रह्यो रन-रंग महा यह बालक वीर बतावहु को॥

—उत्तर रामचरित नाटक

---

* बाईस से छब्बीस वर्ण तक के गणबद्ध छन्द प्राय सवैया ही कहलाते हैं।

कविमयूर मुदकर

(भ भ भ भ भ भ र) १२, ६

नील घटा घन सी तन की दुति, विज्जु घटा पट पीयरे।
वै धनु लौं बनमाल रही वक, पाँति मनों मुकता लरे॥
ज्यो घहराति बजै मुरली बरसै रस बूँद सु हीयरे।
पावस सों सुन भावन आवत, ताप भरे हियरा हरे॥

—समनेस

२२ वर्ण के छन्द—४१९४३०४

हसी

(म म त न न न स ग) ८, १४

श्री को चाहौ औरै दीनो, अतिथिन पर अति करुण करी है।
इच्छा ही सों भोगै सागौ, नयन सहस सब सिधि सिधरी है॥
तेरी बातें मीठी मीठी, सुनि सुनि तरल सुचित गति तेरी।
तीनौं लोकै पालौ नीकै, धनि धनि धनि हरि मति तेरी॥

—नैषधकाव्य

भद्रक

(भ र न र न र न ग) १०, १२

राम गुपाल दीन कुशला, हरे परम पावना भज मना।
दीनदयालु कृष्ण भय हा, बली धरम धारना दुखहना॥
पाप विदार केशि बकहा, घनी परम सुंदरा नरतना।
प्रेम प्रतीत नेम हित दा, सुखो करन पाप काटहु घना॥

—गदाधर

अद्रितनया (अश्व ललित)

(न ज भ ज भ ज भ ल ग) ११, १२

घट घट में तुही बसति है, तुही बसति है स्वरूप मति के।
तुअ महिमा अरी रहित है, सदा हृदय में त्रिलोक पति के।
निज जन को बिना भजन हू, कलेस हननी निधानि हनिनी।
जय जय श्री हिमाद्रि-तनया, महेश घरनी गनेश जननी॥

— दास

चकोर

(भ भ भ भ भ भ भ ग ल)

जो कोउ दूर सो आवं थके, तिन के दुख दूर करे ततकाल।
है निज शीतल छाँह मनोहर हेतु बिना सुख देत कमाल॥
कौन तिहारी कहै महिमा जन सीदन जो लखि होत निहाल।
पाहन हूँ सों हनै तिन को तुम, देत अमीफल धन्य रसाल॥

—जनार्दन 'झा'

२४ वर्ण के छन्द—१६७७७२१६

गंगोदक (गंगाधर, लक्ष्मी, खंजन)

(र र र र र र र र)

मेघ मंदाकिनी चारु सौदामिनी रूप रूरे लसैं देहधारी मनो।
भूरि भागीरथी भारती हंसजा अंश के हैं मनो, भाग भारे भनो॥
देवराजा लिये देवरानी मनो पुत्र संयुक्त भूलोक में सोहियो।
पक्ष द्वै सन्धि सन्ध्या सँधी है मनो लक्षिये स्वच्छ प्रत्यक्ष हीं मोहियो॥

—रामचन्द्रिका

२३ वर्ण के छन्द—८३८८६०८

सुमुखी (मल्लिका, मानिनी)

(ज ज ज ज ज ज ज ल ग)

हिये वनमाल रसाल धरे, सिर मोर किरीट महा लसिवौ।
कसे कटि पीत पटी लकुटी कर आनन पै मुरली बसिबौ।
कलिन्दिनि तीर खड़े बलवीर सुबालन की गहि बाँह सबौ।
सदा हमरे हिय मदिर मे यहि बानक सों करिये बसिवौ॥
—हरदेव

मत्तगयद (मालती, इन्दव)

(भ भ भ भ भ भ भ ग ग)

(१)

हाथ गहे हैं कुठार कठोर जटा सी लसैं जहँ जोति की ज्वाला।
काँधे निषग है बाँये जटा कटि चीर कसे तन पै मृगछाला॥
हाथ मे बान कलाई पै सोहत डोलत पावन अक्ष की माला।
राजत हैं इक सग मिले जनु शान्ति सरूप औ वेष कराला॥
—लाला सीताराम 'भूप'

(२)

किंचित कोप के कारण मो जिहि, आनन ओप अनूपम सो है।
गुजित सिञ्जनि को धनु लै जुग छोरनि मजु टकोरत जो है।
चचल पच शिखानि किये बरसावत सैन पै बान बिमोहै।
चूड़ रह्यो रन रग महा यह बालक वीर बतावहु को है॥
—उत्तर-रामचरित-नाटक

अद्रितनया (अश्व ललित)

(न ज भ ज भ ज भ ल ग) ११, १२

घट घट में तुही वसति है, तुही वसति है स्वरूप मति के।
तुअ महिमा अरी रहित है, सदा हृदय में त्रिलोक पति के।
निज जन को विना भजन हू, कलेस हननी विथानि हनिनी।
जय जय श्री हिमाद्रि-तनया, महेश घरनी गनेश जननी॥

—दास

चकोर

(भ भ भ भ भ भ भ ग ल)

जो कोउ दूर सों आय थके, तिन के दुख दूर करें ततकाल।
दै निज शीतल छाँह मनोहर हेतु बिना सुख देत कमाल॥
कौन तिहारी कहै महिमा जन सीदन जो लखि होत निहाल।
पाहन हूँ सों हन तिन को तुम, देत अमीफल धन्य रसाल॥

—जनार्दन 'झा'

२४ वर्ण के छन्द—१६७७७२१६

गंगोदक (गंगाधर, लक्ष्मी, खंजन)

(र र र र र र र र)

मेघ मंदाकिनी चारु सौदामिनी रूप रूरे लसै देहधारी मनो।
भूरि भागीरथी भारती हंसजा अंश के हैं मनो, भाग भारे भनो॥
देवराजा लिये देवरानी मनो पुत्र संयुक्त भूलोक में सोहियो।
पक्ष द्वै सन्धि सन्ध्या सँधी है मनो लक्षिये स्वच्छ प्रत्यक्ष ही मोहियो॥

—रामचन्द्रिका

मुक्तहरा

(ज ज ज ज ज ज ज ज)

सिया रघुनदन की उनहारि गयो यह बाल महा सुखदाय।
मनो प्रतिबिम्बित है यहि माहि रही उनकी दुति आकृति छाय॥
मिलै उनसों यहि को सब भाँति बिनैमय बोल सुशील सुभाय।
वृथा चित चचल क्यों मन देव, कुमारग में भटक्यो इत आय॥
—उत्तर रामचरित नाटक

वाम (मजरी, मकरद, माधवी,)

(ज ज ज ज ज ज ज य)

विनै सिसुता सों सुहावन चारु लसै महि मे अति तेज निकाई।
लखै जिह सूक्ष्म देखनहार परै न अजानहिं रच लखाई॥
विमोह हरै मन मो वलवान रहै तप सों जिय मे थिरताई।
यथा लघु चुम्बक खण्ड स्व ओर कुधातुहिं खेंचतु है वरि आई॥
—उत्तर-रामचरित नाटक

तन्वी

(भ त न स भ भ न य)

बोलत कैसे, भृगुपति सुनिये सो कहिये तन मन बनि आवै।
आदि बडे हो बडपन रखिये, जाहित तूँ सब जग जस पावै॥
चदन हू मे, अति घन घिसिये, आगि उठै यह गुनि सब लीजै।
हैहय मारो, नृप जन सँहरे,सो यश लै किन युग युग जीजै॥
—रामचन्द्रिका

अरसात (आलसा)

(भ ७+र)

(१)

लाज धरौ सिव जू सों लरौ सब सैयद सेख पठाय पठाय कै।
'भूषन' ह्याँ गढ-कोटन हारे उहाँ तुम क्यों मठ तोरे रिसाय कै॥
हिन्दुन के पति सों न बसात सतावत हिन्दु गरीबन पाय कै।
लीजै कलंक न दिल्लि के बालम आलम आलमगीर कहाय कै॥
—भूषण

(२)

जा थल कीन्हें बिहार अनेकन ता थल काँकरी बैठि चुन्यों करैं।
जा रसना तें करी बहु बातनि ता रसना तें चरित्र गुन्यों करैं॥
'आलम' जौन से कुंजन में करी केलि तहाँ अब सीस धुन्यों करैं।
नैननि में जो सदा बसते तिनकी अब कान कहानी सुन्यों करैं॥
—आलम

किरीट

(भ ८)

बालि बली न बच्यौ पर खोरिहि क्यों बचिहौ तुम आपनि खोरिहि।
जा लगि छीर समुद्र मथ्यौ कहि कैसे न बाँधिहै बारिध थोरहि॥
श्री रघुनाथ गनौ असमर्थ न देखि बिना रथ हाथिन घोरहि।
तोरयो सरासन संकर को जेहि सोऽब कहा तुव लंक न तोरहि॥
—केशव

दुर्मिल (चन्द्रकला)

(स ८)

(१)

अति हेय परिग्रह को समझा जप यज्ञ ही के अभिमानी रहे।
यश फैल गया महि-मण्डल में निगमागम के गुरु ज्ञानी रहे॥
धन पै नहिं बेच दिया मन को तन प्राण दिये वह दानी रहे।
अब पूर्वजों के वह कृत्य कहाँ कविता रहे राम कहानी रहे॥
—सनेही

(२)

महिमा उमड़े लघुता न लड़े जड़ता जकड़े न चराचर को।
शठता सटके मुदिता मटके प्रतिभा भटके न समादर को॥
विकसे विमला शुभ कर्म-कला पकड़े कमला श्रम के कर को।
दिन फेर पिता वर दे सविता कर दे कविता कवि शंकर को॥
—नाथूराम 'शंकर' शर्मा

(३)

बन राम रसायन की रसिका, रसना रसियों की हुई सफला।
अवगाहन मानस में कर के, जन मानस का मल सारा टला॥
बने पावन भाव की भूमि भली, हुआ भावुक भावुकता का भला।
कविता करके तुलसी न लसे, कविता लसी पा तुलसी की कला॥
—हरिऔध

महा भुजंग प्रयात

(य ८)

करो संत को संग त्यागो विकारो,
मुरो मोह सों कोह सो जो नकारो।
कहो सत्य को झूठ को ना उचारो,
दया राखिये जो महा पुण्य सारो॥
कृपासिंधु श्रीराम संसार नाथ,
सदा प्रेम से नाम को लै पुकारो।
कटै कोटि बाधा लहै मोद सारो,
अनायास भौसिंधु के जाव पारो॥

—गोस्वामी साधो गिरि

२५ वर्ण के छन्द—३३५५४४३२

सुंदरी (मल्ली, सुखदानी)

(स ८ + ग)

हम दीन दरिद्र हुताशन में, दिन रात पड़े दहते रहते हैं।
बिन मेल विरोध महानद में, मन बोहित से बहते रहते हैं।
कवि 'शंकर'! काल कुशासन की, फटकार कड़ी सहते रहते हैं।
पर भारत के गत गौरव की, अनुभूत कथा कहते रहते हैं॥

—नाथूराम 'शंकर' शर्मा

अरविन्द

(स ८ + ल)

फटकारि कै दूर भगावत है, खल काक उलूकन को सब काल ।
फल उन्नति हेतु उपाय घने, रचि प्रान समान करै प्रतिपाल ।
जनसीदन जो कछु पाक्यो गिरै, फल पाय तिन्हें अति होत निहाल ।
धनि है एहि बाग को माली अहो, जिन सेवै सुजीवन सींचि रसाल ॥

—जनार्दन 'झा'

लवगलता

(ज ८ + ल)

चढीं प्रति मंदिर सोभ बढी तरुणी अवलोकन को रघुनन्दनु ।
मनों गृह दीपति देह धरे सु किधौं गृह देवि विमोहति हैं मनु ।
किधौं कुल देवि दिपै अति केशव कै पुर देविन को हुलस्यों गनु ।
जहीं सु तहीं यहि भाँति लसैं दिवि देविन कों मद घालति हैं मनु ॥

— रामचन्द्रिका

२६ वर्ण के छन्द—६७१०८८६४

सुखद (किशोर, कुंदलता)

(स ८+ल ल) १२, १४

रतनहू सम तीनहुँ लोकनि को बल, जो नहिं आँखिन के तर लावत ।
अति उद्धत धीर गवी सो मनौ, अचला को चले बुह धीर नवावत

निज बालक नैस ही में गिरि के सम गौरवता की छटा छिटकावत।
तपधारी किधौं यह दर्प लसै, अथवा वर वीरता को मद आवत॥

—उत्तर-रामचरित नाटक

महामजीर

(स ८+ल ग)

नव दारुन वा अपमान सों तू, निहचै द्ग नीरहिं ढारति होइगी।
सिसु होन समै पै सिये बन में, कहुँ बेहद पीडा सों आरति होइगी॥
घिरि हाय अचानक सिंहनि सों, किमि बेबस धीरज धारति होइगी।
करिकें सुधि मेरी डरी हिय में, कहुँ तातहिं तात पुकारति होइगी॥

—उत्तर-रामचरित नाटक

उपजाति वृत्त

इन्द्रवज्रा (त त ज ग ग) और उपेन्द्रवज्रा (ज त ज ग ग) के मेल से सोलह वृत्त बनते हैं। इनमें इन्द्रवज्रा और उपेन्द्रवज्रा को छोड शेष चौदह उपजाति वृत्त कहलाते हैं। यहाँ प्रस्तार सहित उनके उदाहरण दिये जाते हैं.—

प्रस्तार.*

क्रम-संख्या	रूप	मूलवृत्तके संकेताक्षर	नाम उपजाति	क्रम संख्या	रूप	मूलवृत्तके संकेताक्षर	नाम उपजाति
१	ऽ ऽ ऽ ऽ[1]	इ इ इ इ	इन्द्रवज्रा	९	ऽ ऽ ऽ ।	इ इ इ उ	बाला
२	। ऽ ऽ ऽ	उ इ इ इ	कीर्ति	१०	। ऽ ऽ ।	उ इ इ उ	आर्द्रा
३	ऽ । ऽ ऽ	इ उ इ इ	वाणी	११	ऽ । ऽ ।	इ उ इ उ	भद्रा
४	। । ऽ ऽ	उ उ इ इ	माला	१२	। । ऽ ।	उ उ इ उ	प्रेमा
५	ऽ ऽ । ऽ	इ इ उ इ	शाला	१३	ऽ ऽ । ।	इ इ उ उ	रामा
६	। ऽ । ऽ	उ इ इ उ	हसी	१४	। ऽ । ।	उ इ उ उ	ऋद्धि
७	ऽ । । ऽ	इ उ उ इ	माया	१५	ऽ । । ।	इ उ उ उ	सिद्धि
८	। । । ऽ	उ उ उ इ	जाया	१६	। । । ।[2]	उ उ उ उ	उपेन्द्रवज्रा[3]

* प्रस्तार के प्रत्येक रूप में आये हुए गुरु लघु के चारों चिन्हों में से हर एक अपने मूल वृत्त का सूचक है। गुरु चिन्ह इन्द्रवज्रा का और लघु उपेन्द्रवज्रा का द्योतक है। 'इ' से इन्द्रवज्रा और 'उ' से उपेन्द्रवजा का बोध होता है, जैसे —। ऽ ऽ ऽ इससे यह समझना चाहिए कि इस रूप वाले उपजाति का पहला चरण उपेन्द्रवज्रा का और शेष तीन चरण इन्द्रवज्रा के होंगे। १ यह रूप मूलवृत्त इन्द्रवज्रा का है। २ यह रूप मूलवृत्त उपेन्द्रवज्रा का है। ३ इन्द्रवज्रा के चरण का आदि वर्ण लघु होने पर वह उपेन्द्रवज्रा का चरण बनजाता है।

१. कीर्ति (। ऽ ऽ ऽ)

उ इ इ इ

(१)

दयादि जो सद्गुण विश्व में है। वे भी तुम्हीं से मिलते हमें हैं ॥
हे पंथ ! कर्मण्य, उदार धीर। होते तुम्हीं से हम शूर वीर ॥
—मैथिलीशरण गुप्त

(२)

नहीं करेगी वह खूब जो लों। देगी न रंभा फल मिष्ट तौ लों॥
भूलो न माली ! यह किम्वदन्ती। "त्रास विना नैव गुण श्रेयन्ति"
—मैथिलीशरण गुप्त

२. वाणी (ऽ । ऽ ऽ)

इ उ इ इ

होता न जो जन्म कहीं तुम्हारा। अकार्य होता अति ही हमारा।
संताप, हे पंथ ! विना तुम्हारे। पाते अनेकों हम लोग सारे ॥
—मैथिलीशरण गुप्त

३. माला (।। ऽ ऽ)

उ उ इ इ

तजो निरी भोजन भट्टता को। स्वदेश को शीश सभी झुकाओ ॥
हे ब्राह्मणो ! "हैं हम अग्र जन्मा"। संसार को आज यही बता दो ॥
—गिरिधर शर्मा

४. शाला (ऽऽ।ऽ)

इ इ उ इ

जो जीर्ण होने पर भी अपार। त्यागे न, हे प्र थ ! परोपकार॥
बिना तुम्हारे अति धन्य धन्य। है कौन ऐसा जगबीच अन्य॥
—मैथिलीशरण गुप्त

५. हंसी (।ऽ।ऽ)

उ इ उ इ

जहाँ हुए व्यास मुनि-प्रधान, रामादि राजा अति कीर्तिमान।
जो थी जगत्पूजित धन्य भूमि, वही हमारी यह आर्य-भूमि॥
—महावीरप्रसाद द्विवेदी

६. माया (ऽ॥ऽ)

इ उ उ इ

(१)

श्रीमान, धीमान, वही यशस्वी। वही सुसम्पन्न वही मनस्वी॥
परोपकारी नर-रत्न जो है। स्वर्गीय है, जीवन मुक्त सो है॥
—भान

(२)

यस्यास्ति वित्त सनर कुलीन। सपडित, सश्रुतवान गुणज्ञ॥
सएव वक्ता सचदर्शनीय। सर्व्वेगुणः काचनमाश्रयन्ति॥

७ जाया (।।।ऽ)

उ उ उ इ

गिने हुए सज्जन वृन्द का तो ; कभी कभी मैं करता सु संग।
परन्तु है पुस्तक मित्र ऐसा, होता कभी जो मुझसे न न्यारा ॥

—गिरधर शर्मा

८. बाला (ऽऽऽ।)

इ इ इ उ

वीरागना भारत भामिनी थीं, वीर-प्रसू भी कुल कामिनी थीं।
जो थी जगत्पूजित वीर-भूमि, वही हमारी यह आर्य भूमि ॥

—महावीरप्रसाद द्विवेदी

९. आर्द्रा (।ऽऽ।)

उ इ इ उ

सुजान जो हैं अति धैर्य वाले, उद्देश्य से भ्रष्ट कभी न होते।
प्राणान्त चाहे उनका भले हो, अवश्य पूरी करते प्रतिज्ञा ॥

—गोविंददास

१०. भद्रा (ऽ।ऽ।)

इ उ इ उ

सद्धर्म का मार्ग तुम्हीं बताते, तुम्हीं अघो से जग मे बचाते।
हे ग्रंथ, विद्वान तुम्हीं बनाते, तुम्हीं दुखों मे इसको छुड़ाते ॥

—मैथिलीशरण गुप्त

(२)

हे क्षत्रियो ! क्षत्रियता तुम्हारी, छिपी नहीं है जन-ताप हारी।
मालिन्य सारा उसका उड़ा दो; अनैक्य का मूल सभी मिटा दो ॥

—गिरधर शर्मा

११. प्रेमा (। । ऽ ।)

त उ इ उ

जहाँ सभी ये निज धर्म धारी, स्वदेश का भी अभिमान भारी।
जो थी जगत्पूजित पूज्य-भूमि, वही हमारी यह आर्य भूमि ॥

—महावीरप्रसाद द्विवेदी

१२. रामा (ऽ ऽ । ।)

इ इ उ उ

हे मौनिते ! मगल-कारिणी तू, शीलेश्वरी शान्ति-विहारिणी तू।
विरोध विद्वेप-निवारिणी तू, विपाक्त वाणी विप हारिणी तू ॥

—सत्कविदास

१३. ऋद्धि (। ऽ । ।)

उ इ उ उ

सदैव हे चातक-सूनु ! जी से, आशा लगाना घनश्याम ही से।
न भूल जाना यह वंश-सन्था, "महाजनो येन गत. सपन्था ॥"

—मैथिलीशरण गुप्त

१४. सिद्धि या बुद्धि (ऽ।।।)

इ उ उ उ

तू जान के भी अनल प्रदीप, पतंग ! जाता उस के समीप।
अहो ! नहीं है इस में अशुद्धि, "विनाश काले विपरीत बुद्धि ॥"

—मैथिलीशरण गुप्त

द्विज

(म त त ग ग) + (म भ त ग ग) ४, ७

शालिनी और वातोर्मि के मेल से 'द्विज' उपजाति बनता है —

वीरात्मा है धीर जो निमित्त। न्यायी है श्रीमान है सत्यवक्ता।
धर्मात्मा है सुधी जो उदार। सो सच्चा है, नर भू रत्न सार[१] ॥

मुक्ति (त त ज ग ग)+(म त त ग ग)

इन्द्रवज्रा और शालिनी[२] के मेल से 'मुक्ति' उपजाति बनता है —

स्वर्गीय आनन्द स्वतन्त्रता है।
मानी को तो नर्क है दासता ही॥
कैसी ही हे नाथ दो यातनाएँ।
छीनो ना स्वाधीनता हाँ किसी की॥

—मान

---

१ इस वृत्त का चौथा चरण वातोर्मि का शेष तीन शालिनी वृत्त के हैं।

२ इस उपजाति का पहला चरण इन्द्रवज्रा का और शेष शालिनी के हैं।

माधव[1]

(ज त ज र) + (त त ज र)

वशस्थ विलम् और इन्द्रवशा के मेल से 'माधव' उपजाति बनता है —

दया[3] मया छू जिसको नहीं गई,
पाषाण जी का नर क्रूर निर्दई।
है ढोर ही पुच्छ विषाण हीन है,
है भार भू का खल दीन हीन है॥

—मान

---

१ श्री प० लोचनप्रसाद जी पाण्डेय ने अपने स्वर्गीय बालक के स्मरणार्थ इस उपजाति वृत्त का नाम 'माधव' रखा है।

२ जिस तरह इन्द्रवज्रा और उपेन्द्रवज्रा के मेल से चौदह उपजाति बन जाते हैं उसी तरह इन वृत्तों के मेल से भी अनेक उपजाति बन सकते हैं। उदाहरण में दिये गये उपजाति का पहला चरण 'वशस्थ विलम्' का और शेष तीन इन्द्रवशा के हैं।

उपजाति सवैया

१. मत्तगयंद *

इसका केवल तीसरा चरण सुंदरी सवैया का है और शेष मत्तगयंद के चरण हैं —

(१)

गर्भ के अर्भक काटन को पटुधार कुठार कराल है जाको।
सोई हों बूझत राज सभा धनु को दल्यो ? हौं दलि हौं बल ताको ॥
लघु आनन उत्तर देत बडो लरि है, मरि है, करि है कछु साको।
गोरो गरूर गुमान भरो कहौ कौसिक छोटो सो ढोटो है काको ?

—गोस्वामी तुलसीदास

(२)

या लकुटी अरु कामरिया पर राज तिहूँ पुर को तजि डारौं।
आठहु सिद्धि नवो निधि को सुख नंद की गाय चराय बिसारौं॥
रसखानि कबौं इन आँखिन सों ब्रज के बनबाग तड़ाग निहारौं।
कोटिन हूँ कलधौत के धाम करीर के कुंजन ऊपर वारौं॥

—रसखानि

---

* किसी उपजाति सवैया में जिस मूल छन्द के चरण अधिक हों, उसी नाम से उसे उपजाति कहना चाहिए और यदि दो दो चरण दो-दो मूल छन्दों के हों तो दोनों नामों से उपजाति सवैया कहना चाहिए।

२ मदिरा

इसका तीसरा चरण दुर्मिल सवैया का है और शेष चरण मदिरा के हैं—

सिंधु तरयो उन को बनरा तुम पै धनु रेख गई न तरी।
बानर बाँधन सो न बँध्यो उन वारिधि बाँधि कै बाट करी॥
अज हूँ रघुनाथ प्रताप की बात तुम्हे दसकठ न जानि परी।
तेलनि तूलनि पूँछ जरी न जरी जरी लंक जराइ जरी॥

—केशव

३ दुर्मिल

इसका पहला चरण मदिरा सवैया का और शेष तीनों दुर्मिल के हैं—

(१)

भारत में बन ! पावन तू ही तपस्वियों का तप आश्रम था।
जग तत्व की खोज मे लग्न जहाँ ऋषियों ने अभग्न किया श्रम था॥
जब प्राकृत विश्व का विभ्रम था और सात्विक जीवन का क्रम था।
महिमा वन-वास की थी तब और प्रभाव पवित्र अनूपम था॥

(२)

चारु हिमाचल आँचल में, एक साल विसालन कौ वन है।
मृदु मर्मर शील झरैं जल-स्रोत हैं पर्वत ओट है निर्जन है॥
लिपटे हैं लता द्रुम, गान मे लीन प्रवीन विहगन कौ गन है।
भटक्यौ तहाँ रावरो भूल्यौ फिरै, मद बावरौ सौ अलि को मन है॥

—श्रीधर पाठक

वर्णिक दण्डक *

गण-बद्ध ‡

चण्ड वृष्टि प्रपात

(न न + र ७)

चरण शरण हौ सदा ताहि कीनो
कृपासिंधु गोपाल गोविंद दामोदरो।
सदय हृदय ह्वै हमें पालि है
आपनो जानिके सोई विश्वेश विश्वंभरो॥

---

* दण्डक का शब्दार्थ है—'दण्ड देने वाला'। इन छन्दों के चरण इतने इतने लम्बे होते हैं कि पढ़ते समय दम टूटने लगती है। इसी से इनका नाम दण्डक रक्खा गया है।

‡ वर्णिक दण्डकों के दो भेद हैं—गण बद्ध और मुक्तक। जिन दण्डकों की वर्ण संख्या गण क्रम अथवा गुरु लघु क्रमानुसार होती है वे गणबद्ध अथवा साधारण दण्डक कहलाते हैं। और जो दण्डक गण-क्रम अथवा गुरु लघु क्रम से मुक्त हैं वे मुक्तक कहलाते हैं। इनमें वर्णों की नियत संख्या का होना ही मुख्य है। कहीं कहीं बीच में और चरणान्त में गुरु-लघु का क्रम इन में भी पाया जाता है पर पूरे चरण में नहीं।

सुयश विदित जासु संसार के बीच में
सर्वदा ईस है देव देवेश को।
भजन करिय चित्त में ताहि को नित्य ही
दानि है सिद्धि को लोक लोकेश को॥
—दास

सुधाधर

(भ ४+त ३×भ २) १२, १५

कुंजर की जब टेर सुनी तव,
कीनो बिलम्बो न एकौ घरी जु गदाधर।
गीध अजामिल और गणिका द्विज—
नारी तरी जू रह्यो है यहाँ जस भू पर॥
धारि लियो गिरि पानिनि ऊपर,
गोपी गुवालो बचाए सबै करुणाकर।
त्यों अब दोप दवानल ने बलि,
राखो हमें हूँ दया के निधान सुनो हर॥
—काव्य कुसुमाकर

मत्त मातग लीलाकर

(र ६ या इस से अधिक)

योग जाना नहीं यज्ञ दाना नहीं,
वेद माना नहीं या कलो माँहिं मीता कहूँ[१]।
ब्रह्मचारी नहीं दण्डधारी नहीं,
कर्मकारी नहीं है कहा आगमै जो छहूँ।

१ यह ६ रगण का छन्द है।

सच्चिदानद आनद के कद को,
छाँड़ि कैरे मतीमन्द भूलो फिरै ना कहूँ।
याहि तै हौं कहौं ध्याय ले,
जानकी नाह को गावहीं जाहि सानद वेदा चहूँ॥

सिंह विक्रीड़

(य ९ अथवा इस से अधिक)

यकै आतमा आन दूजो न देखै,
अही जीह लौं और दोषै न जीहै चलावै[1]।
न रोवै न गाव किये काल कर्मै,
सबै सोक औ मोद पावै यहै वेद गावै।
सुआनैन पोषै सरीरै विकारै-
विनासै, सुनीरीति धारै, न चित्तै चलावै।
यहै सिद्धि नाहीं न है भक्ति माहीं,
सदा ही दसौ वेष धारै धरा ताहि ध्यावै॥
—समनेस

कुसुम स्तवक

(स ८ अथवा इस से अधिक)

विधना विधि नाना हमें दुख देहु,
न देहु कुवास मलीनन के गन में[2]।
मिलें मीत तो हौं मिलै वे जिनकी,
रति हो गति हो रस रीति कवीनन में।

---

१ यह ६ यगण का छन्द है। २ यह ८ सगण का छन्द है।

वरु घोर तें घोर घनेरे सहौं-

दुख, टेक रहे अपनी यह जीवन में ॥

मन को मिले मान' कहौं मन की,

न तो गोए रहौ सु सदा मन की मन में ॥

—'मान'

त्रिभंगी

(न ६ + स स भ म स ग) १६, १८

सजल जलद तनु लसत विमल तनु,

श्रमकन त्यों झलको है उँमगो है बुन्द मनो है

भुव युग मटकनि फिर फिर लटकनि,

अनमिषि नैननि जो है हरषो ह्वै है मनमोहै।

पगि पगि पुनि पुनि खिनखिन सुनिसुनि,

मृदु मृदु ताल मृदंगी मुरचंगी झाँझ उपंगी।

बरहि बरहि अरि अमित कलनि कीर,

नचत अहीरन संगी बहु रंगी लाल त्रिभंगी ॥

--दास

अशोक पुष्प-मंजरी*

(ग ल इच्छानुसार)

पीत झीन झँगुली लसे बसे सो हीय बीच,

गोकुलेश लाडिलो सुनंद नंद।

---

* यह अशोकमंजरी ग ल के क्रम से २८ वर्णों का है।

नैन बीच श्याममूर्त्ति, कान बीच वेणु नाद,
गूँजता रहे सदा सुमंद-मंद।
नाम और चित्त बीच हो कभी न रंच बीच,
यों रहे लगाय ज्यों चकोर चंद॥
राम-कृष्ण राम कृष्ण राम कृष्ण ध्यान गान,
चित्त में रहे बसा सदा अनंद॥
—भान

नीलचक्र †

(ग ल के क्रम से ३० वर्ण)

जानि कै समै भुवाल राम राज साज साज,
ता समै अकाज काज कैकयी जु कीन।
भूपते हराय चैन राम सीय बंधु युक्त,
बोल के पठाय वेग कानने सु दीन।
ह्वै रह्यो विलाप को कलाप सो सुन्यो न जाय,
राय प्राण भी प्रयाण पुत्र के विहीन।
आय के भरत्थ ह्वै विहाल कै नृपाल कर्म,
सोच चित्रकूट गौन हेत नेम लीन॥
—काव्य सुधाकर

सुधानिधि‡

(ग ल के क्रम से ३२ वर्ण)

का करै समाधि साधि का करै विराग जाग,
का करै अनेक जोग भोग हू करै सुकाह।

† नील चक्र अशोक-मंजरी का ही एक भेद है।
‡ सुधानिधि भी अशोक-मंजरी का ही एक भेद है।

का करे समस्त वेद औ पुरान सास्त्र देखि,
कोटि जन्म लौं पढ़े मिले तऊ कछू न थाह।
राज्य लै कहा करै सुरेस औ नरेस ह्वै न,
चाहिए कहूँ सु दुःख होत लोकलाज माह।
सात-द्वीप खण्ड-नौ त्रिलोक सम्पदा अपार,
लै कहा सु कीजिये मिलैं जु आय सीयनाह॥

—काव्य सुधाकर

महीधर *

(ल ग के क्रम से २८ वर्ण)

धरी बिशाल पाग है जनौ भरी पराग है,
मनो हिमांशु जाग है सुधा किये।
सुवर्ण गुच्छ हाथ है सुमोर पच्छ माथ है,
रमा जु सुच्छ साथ है बसो हिये।
अनाथ नाथ तात है मनोज पुंज गात है,
सदा हमें सुहात है भलो जिये।
सदैव चक्रपाणि है अधार मानि जानि है,
भरोस आस आनि है हृदै पिये॥

—गदाधर

* ल ग क्रम वाले २८ वर्णों से प्राय बत्तीस वर्णों तक के छन्द अनगशेखर के अन्तर्गत प्रचलित हैं। महीधर एक तरह से अनग-शेखर का ही भेद है। ३२ वर्णों से अधिक के भी अनग शेखर छन्द हो सकते हैं पर उनमें लघु गुरु के जोड़े रहने आवश्यक हैं अर्थात् लघु गुरु के क्रम से वर्ण सख्या सम रहनी आवश्यक है।

अनंग शेखर (द्विनराच, महानराचिका)

(ल ग के क्रम से इच्छित वर्ण)

(१)

गरजि सिंहनाद लौं निनाद मेघनाद वीर,
क्रुद्ध मान सान सौं कृसानु वान छड्डिय ।
लखी अपार तेज धार लच्छनी कुमार वारि,
वान सौं अपार धार वर्षि ज्वाल गंडिय ।
उड़ाय मेघमाल कौं उताल रच्छपाल बाल,
पौन बान अस्त्र घाल कीस जाल दड्डियं ।
भयो न होत होयगो न ज्यो अमान इन्द्रजीत,
रामचन्द्र बन्धु सौं कराल युद्ध मड्डिय ॥

—लक्ष्मण शतक

(२)

सदा कृपानिधान हौ, कहा कहौं सुजान हौ,
अमानि दानमान हौ, समानि काहि दीजिये ।
रसाल सिंधु प्रीति के, भरे खरे प्रतीति के,
निकेत नीति रीति के, सुदृष्टि देख लीजिये ।
टकी लगी निहारियै सु आप त्यों निहारियै,
समीप ह्वै निहारिये उमग रंग भीजिये ।
पयोद मोद छाइये, बिनोद को बढ़ाइये,
विलंब छाँड़ि आइये किधौं बुलाय लीजिये ॥

वसुधाधरे

(स ९ + ल ल)

तजि मान अहे बलि मानि कह्यो करिये–
तनु चारु सिंगार, रचौ सुभ चन्दन।
सज हार मनोहर फूलनि के उर पै,
अति श्वेत दुकूल सम्हार सुछन्दन।
अपने मुख चारु सुधानिधि की कर सों,
मुख सौतिन के करिये अरविन्दन।
चलिये यमुना तट मंजुल कुञ्जन में,
जहँ रास सुचारु रच्यो नँद नंदन॥

—हरदेव

कलाधर

नील चक्र छन्द के चरणान्त में एक गुरु बढ़ा देने से कलाधर छन्द होता है—

जाय के भरत्थ चित्रकूट राम पास वेगि,
हाथ जोरि दीन ह्वै सुप्रेम ते विनै करी।
सीय तात मात कौशिला वशिष्ठ आदि पूज्य,
लोक वेद प्रीति नीति की सुरीति ही धरी।
जान भूप वैन धर्मपाल राम ह्वै सकोच,
धीर दै गँभीर बंधु की गलानि है हरी।
पादुका दई पठाय औध को समाज साज,
देख नेह राम सीय के हिये कृपा भरी॥

—काव्य कुसुमाकर

मुक्तक ○

अनियमित दण्डकों

सोलह और चौदह के विराम से तीस वर्ण का अनियमित दण्डक छन्द होता है। इसके चरणान्त में प्राय गुरु अथवा मगण रहता है —

(१)

जाके चूड़ा मे जो बाँकी गुम्फित कपाल-माल,
रक्कत अररर तहाँ गग वारी।
विज्जु छटा तुल्य जो ललाट लोचन की ज्योति,
वासों मिलि जगमगै तासु प्रभा प्यारी।

○ मुक्तक प्राय लय प्रधान होते है। लय ठीक ठीक रखने के लिए सम पद के बाद सम-पद और विषय पद के बाद विषम पद रखने चाहिए। पद से तात्पर्य है विभक्ति सहित शब्द; जैसे —रामहि, मोहि, आदि वर्णों वाले सम पद कहलाते हैं।

ध्वनि का निर्णय छन्द के प्रथम चरण के आद्यष्टक म ही कर लेना चाहिए। आगे का क्रम उसी के अनुसार ठीक रखने से लय ठीक रहती है। मुक्तकों मे यति आठ आठ वर्णों पर होनी चाहिए और यदि ऐसा न हो सके तो मनहरणादि में सोलह, पन्द्रह आदि पर लगाना भी ठीक है।

† महाकवि 'देव' ने ३० वर्ण से लेकर ३३ वर्ण तक के मुक्तक दण्डकों को अनियमित दण्डक भी कहा है क्यों कि गण क्रम और गुरु लघु आदि का कोई नियम इन पर लागू नहीं होता।

कोमल सु-केतकी कली को कोर ताको जहँ,
भ्रम होत चारु बाल चन्द्र को निहारी।
ऐसे चन्द्रमौलि के भुजंग वल्लरी सों चन्दु,
बँधे, जटाजूट हरैं विपति तुम्हारी॥

(२)

आनँद सों नन्दीगन मुरज बजावैं, सुनि-
आवै मानि गरज कुमार मोर प्यारो।
तिह डर फनहिं सिकोर भाजि प्रविसत,
जिन सूँडि रन्ध्र माहिं बासुकी विचारो।
चिंघरत तासों, शिव ताण्डव में, गुंजें दिसि,
मद लोभ भौंर-पुंज डोलैं मतवारो।
यहि सों डुलाइवौ स्वसीस गननायक कौ,
होहि सब भाँति सों सहायक तुम्हारो॥
—कविरत्न सत्यनरायण

मनहरण * (मनहर, घनाक्षरी)

इस छन्द के प्रत्येक चरण में सोलह और पन्द्रह के विराम से इकतीस वर्ण होते हैं और चरणान्त मे कम से कम अन्त्य वर्ण अवश्य गुरु रहता है—

* आगे एक नोट में बतलाया जा चुका है कि मुक्तक दण्डकों की लय ठीक रखने के लिए सम के बाद सम और विषम के बाद विषम पद रखने चाहिएँ। घनाक्षरी के शब्द बिठाने के कुछ नियम 'रत्नाकर' जी

(१)

बोधि बुधि बिधि के कमण्डल उठावत हीं,
धाक सुर धुनी की धसी यों घट घट मैं।
कहै 'रतनाकर' सुरासुर ससंक सबै,
बिबस बिलोकत लिखे से चित्र-पट मैं।
लोकपाल दौरन दसौ दिसि हहरि लागे,
हरि लागे हेरन सुपात बरबट मैं।
खसन गिरीस लागे, त्रसन नदीस लागे
ईस लागे कसन फनीस कटि-तट में॥

—रत्नाकर

ने लिखे हैं वे यहाँ उद्धृत किये जाते हैं। विस्तार भय से उन नियमों के अनुसार उदाहरण नहीं दिये जा सकते।

नियम

१ मुक्तक दण्डकों (घनाक्षरी आदि) के आदि में तथा चार, आठ, बारह, सोलह, बीस चौबीस और अट्ठाईस वर्णों के पश्चात् यदि कोइ शब्द आरंभ हो तो उस के आदि में जगण (।ऽ।) तथा रगण (ऽ।ऽ) न पड़ने पावें। साथ ही यह भी ध्यान रहे कि ऐसे शब्द के आरंभ में यगण (।ऽऽ) और मगण (ऽऽऽ) के आ जाने से भी लय मध्यम श्रेणी की होजाती है।

२ यदि कोइ शब्द पाँच, नव तेरह, सत्रह, इक्कीस, पचीस, अथवा उन्तीस अक्षर पर समाप्त हो तो उस शब्द के अन्त में लघु गुरु (।ऽ) पड़ने चाहिएँ और यदि गुरु-गुरु (ऽऽ) अर्थात दो गुरु

(२१)

चलो है सुवीर धीर-अमद-हँकारे देत,
अगू दहकारे देत दानव ही घर के।
गयो 'ललितेश' तहाँ बैठो दानवेश- जहाँ,
दपति निहारे एक-एकै नन भर के।
लक परो सोर, चहूँ ओर खोर, खोरन मे,
केसरी-किसोर फेर आइगो निंदरिके।
तारा पति पूतं तारा पति सम देस, तहाँ,
तारा इव-मुँदै नन तारा-तमीचर के॥

—ललितेश

उस के अन्त में पड़ें तो - यद्यपि उस की गति सर्वथा तो नष्ट नहीं होती पर मध्यम श्रेणी की जरूर हो जाती है।

३ पाँच, नव, तरह, सत्रह, इक्कीस, पचीस तथा उन्तीस वर्णों के बाद जो शब्द आवे वह यदि एक ही वर्ण का हो तो चाहे लघु हो चाहे गुरु परन्तु यदि एक अक्षर से अधिक का हो तो उस के आदि में लघु होना चाहिए।

४ दो, छ, दस, चोदह, अट्ठारह, बाइस तथा छब्बीस वर्णों के बाद यदि कोई शब्द आवे तो उसके आदि में जगण (ऽ। ऽ) तगण (ऽ ऽ।), मगण (ऽ ऽ ऽ) तथा यगण (। ऽ ऽ) मध्यम गति के होते हैं।

५ तीन, सात, ग्यारह, पन्द्रह, उन्नीस, तेईस तथा सत्ताईस अक्षरों के बाद जो शब्द आवे और एक अक्षर से अधिक का हो तो

(३)

देखत ही आसु ताहि काल के हवाले करों,
बाज के समान त्यों कपोत सो पकरिहौं।
सग 'रामनारायन' जग को विरचि आवैं,
याही रग भूमि बीच कीच सो कचरिहौं।
मोचि हौं गुरू की सोच आपनी न राखों पोच,
भाखो प्रण पारि भौन फेरि पाँव धरिहौं।
नीलकठ जू को जिन तोरो है कोदड चड,
ताके भुजदड आज खड खड करिहौं॥

—रामनारायण दास 'अवधूत'

(४)

चीखते थे हाथी हय हींसते थे बार बार,
वैरियो में रल्ला सुन हल्ला पड जाता था।
कट्ट कट्ट रुण्ड मुण्ड झुण्ड झट मारते थे,
झट्ट पट्ट वीरता का झण्डा गड जाता था।
हेकडो की हेकडी दवाके दुम भागती थी,
मुगलो का सारा मद मान झड जाता था।
लेकर स्वतत्रता की तेज तलवार जब,
प्रणवीर प्रवल प्रताप अड जाता था॥

—हरिशकर शर्मा

उसके आरभ में लघु गुरु (। ऽ) का होना आवश्यक है। पर यदि एक ही अक्षर का शब्द हो तो उसके लिए कुछ नियम नहीं है।

—कविकौमुदी से उद्धत

(५)

देते हैं दिखाई सब दृश्य अभिराम यहाँ,
सुषमा सभी की सुधि श्याम की दिलाती है।
फूली फली सुरभित रुचिर द्रुमालियों से,
सुरभि उन्हीं की दिव्य देह की ही आती है।
सुयश उन्हीं का शुक सारिका सुनाती सदा,
कूक कूक कोकिला उन्हीं का गुण गाती है।
हरी भरी दृग सुखदाई मन-भाई मंजु,
यह व्रजमेदिनी उन्हीं की कहलाती है॥

—ठाकुर गोपालशरणसिंह

(६)

हाँसी बिन हेत माँहि दीसति बतीसी कछु,
निकसी मनो है पाँति ओछी कलिकान की।
बोलन चहत बात टूटी सी निकसि जति,
लागति अनूठी मीठी बानी तुतलान की।
गोद तें न प्यारो और भावे मन कोई ठाँव,
दौरि दौरि बैठें छोड़ि भूमि अँगनानि की।
धन्य धन्य वे हैं नर मैले जो करत गात,
कनियाँ लगाय धूरि ऐसे सुवनान की॥

—राजा लक्ष्मणसिंह

(७)

सुनसान कानन भयावह है चारो ओर,
दूर दूर साथी सभी हो रहे हमारे हैं।

काँटे बिखरे हैं कहाँ जावें जहाँ पावें ठौर,
छूट रहे पैरों से रुधिर के फुहारे हैं।
आ गया कराल रात्रिकाल हैं अकेले यहाँ,
हिंस्र-जन्तुओं के चिन्ह जा रहे निहारे हैं।
किस को पुकारें यहाँ रोकर अरण्य-बीच,
चाहे जो करो शरण्य ! शरण तुम्हारे हैं॥
—सियाराम शरण गुप्त

रूप घनाक्षरी

इस छन्द के प्रत्येक चरण में सोलह सोलह के विराम से बत्तीस वर्ण होते हैं और चरणान्त में गुरु लघु अथवा लघु रहता है† —

(१)

गोरे गोरे पायँन सों कढि रही मंद मंद,
पायल औ घुँघुरू की रसभरी झनकार।
कर बीच कंकन औ कटि बीच किंकिनी हू,
खनकि उठति संग पूरी करि बार बार।
धारि जो सितार हाथ पास पास चलो जात,
आँगुरी चलाय रह्यो भूमि झनकारि तार।
तीर धरि ताहु अलबेली मृदु-तान छाँडि,
गाय उठीं गीत यह अंग गति अनुसार॥
—रामचन्द्र शुक्ल (बुद्ध चरित)

† कहीं कहीं चरणान्त में गुरु भी पाया जाता है, जैसा कि पद्माकर के उदाहरण में दिये हुए तीसरे छन्द से स्पष्ट है।

सॉंवरे सलोने कान्ह मेघन हराये देति,
कामिनी दबाये देति दामिनि की दमकनि ॥
—ललित

कृपाण* (किरपान)

इस छन्द के प्रत्येक चरण में आठ, आठ, आठ और आठ के विराम से बत्तीस वर्ण होते हैं। प्रत्येक अष्टक के अन्त्य वर्ण सानुप्रास होते हैं और चरणान्त में गुरु-लघु रहता है—

चली है के विकराल, महाकाल हू को काल,
किये दोऊ दृग लाल, धाइ रन समुहान।
जहाँ क्रुद्ध है महान, युद्ध करि घमसान,
लोथि लोथि पै लदान, तडपै ज्यों तड़िलान।
जहाँ ज्वाला कोट भान, के समान दरसान,
जीव जन्तु अकुलान, भूमि लागी थहरान।
तहाँ लागे लहरान, निसिचर हू परान,
वहाँ कालिका रिसान, झुकि झारी किरपान॥
—जानकी समर

विजया

आठ, आठ, आठ, आठ के विराम से बत्तीस वर्ण का छन्द होता है। चरणान्त में लघु गुरु अथवा नगण रहता है। ‡

* यह छन्द प्रायः वीर रस में प्रयुक्त होता है। इस छन्द के चरणान्त में 'नगण' अधिक कर्ण-प्रिय लगता है।

‡ इस छन्द में सम सम के अतिरिक्त दो विषमों के बीच सम पद भी होता है।

हीन फल फलि निम्न फल सम आँख तासु,
रैन दिन आँसु भरा सघसम बरसत ।
दु मह वियोग आगि हृदय दहत 'भूप'
धूम-सम साँस तासु आठ ने- भरसत ।
बैठि मुख हाथ धरि लटकि लगाके लट
बार बार कोमल कपोल तासु परसत ।
मेर मुख कञ्ज तासु साँवन अँ री बीच,
मेघ बस छीन जोति चन्द सम दरसत ।

—अवधवासी लाला सीताराम 'भूप'

देव घनाक्षरी

इस छन्द के प्रत्येक चरण में आठ, आठ, आठ और नव के विराम से तेतीस वर्ण होते हैं और चरणान्त में नगण रहता है।—

झिल्ली झनकारैं पिक, चातक पुकारैं बन,
मोरनि गुहारैं उठैं, जुगनू चमकि चमकि ।
घोर घन कारे भारे, धुरवा धुरारे धाय,
धूमनि मचाव नाचैं, दामिनी दमकि दमकि ॥
झूकनि बयारि बहै, लूकनि लगावै अंग,
हूकनि भभूकनि की, उर मैं खमकि खमकि ।
कैसे करि राखौं प्राण, प्यारे जसवंत बिना,
नान्हीं नान्हीं बूँद झरैं, मेघवा झमकि झमकि ॥

—जसवन्तसिंह

---

*चरणान्त में 'नगण' का दो बार आना कर्ण प्रिय लगता है।

सॉवरे सलोने कान्ह मेघन हराये देति,
कामिनी दबाये देति दामिनि की दमकनि ॥
—ललित

कृपाण* (किरपान)

इस छन्द के प्रत्येक चरण में आठ, आठ, आठ और आठ के विराम से बत्तीस वर्ण होते हैं । प्रत्येक अष्टक के अन्त्य वर्ण सानुप्रास होते हैं और चरणान्त में गुरु-लघु रहता है—

चली है के विकराल, महाकाल हू को काल,
किये दोऊ द्दग लाल, धाइ रन समुहान ।
जहाँ क्रुद्ध है महान, युद्ध करि घमसान,
लोथि लोथि पै लदान, तडणी ज्यों तडितान ।
जहाँ ज्वाला कोट भान, के समान दरसान,
जीव जन्तु अकुलान, भूमि लागी थहरान ।
तहाँ लागे लहरान, निसिचर हू परान,
वहाँ कालिका रिसान, झुकि झारी किरपान ॥
—जानकी समर

विजया

आठ, आठ, आठ, आठ के विराम से बत्तीस वर्ण का छन्द होता है। चरणान्त मे लघु गुरु अथवा नगण रहता है। ‡

---

* यह छन्द प्राय वीर रस म प्रयुक्त होता है । इस छन्द के चरणान्त में 'नरार' अधिक कर्ण-प्रिय लगता है ।

‡ इस छन्द में सम सम के अतिरिक्त दो विदमों के बीच सम पद भी होता है ।

हीर फूल फूलि भिन्न फल सम शोभित तासु,
रैन दिन आँसु मघा जलसम बरसत।
दुसह वियोग आगि हृदय जरत 'नृप'
धूम-सम साँस तासु ओठ माहँ झरसत।
बैठि मुख हाथ धरि लटकि लगाये लट,
बार बार कोमल कपोल तासु परसत।
मेघ मुख कंज तासु साँवन अँधेरी बीच,
मेघ बस छीन जोति चन्द सम दरसत।
—अजभाषी लाला सीताराम 'नृप'

देव घनाक्षरी

इस छन्द के प्रत्येक चरण में आठ, आठ, आठ और नव के विराम से तेतीस वर्ण होते हैं और चरणान्त में नगण रहता है*—

झिल्ली झनकारैं पिक, चातक पुकारैं बन,
मोरनि गुहारैं उठै, जुगनू चमकि चमकि।
घोर घन कारे भारे, धुरवा धुरारे धाय,
धूमनि मचाव नाचैं, दामिनी दमकि दमकि॥
झूकनि बयारि बहै, लूकनि लगावै अंग,
हूकनि भभूकनि की, उर में खमकि खमकि।
कैसे करि राखौं प्राण, प्यारे जसवन्त बिना,
नान्हीं नान्हीं बूँद झरैं, मघवा झमकि झमकि॥
—जसवन्तसिंह

*चरणान्त में 'नगण' का दो बार आना कर्ण प्रिय लगता है।

सॉंवरे सलोने कान्ह मेघन हराये देति,
कामिनी दबाये देति दामिनि की दमकनि ॥
—ललित

कृपाण* (किरपान)

इस छन्द के प्रत्येक चरण में आठ, आठ, आठ और आठ के विराम से बत्तीस वर्ण होते हैं । प्रत्येक अष्टक के अन्त्य वर्ण सानुप्रास होते हैं और चरणान्त में गुरु-लघु रहता है—

चली है के विकराल, महाकाल हू को काल,
किये दोऊ दृग लाल, धाइ रन समुहान।
जहाँ क्रुद्ध है महान, युद्ध करि घमसान,
लोथि लोथि पै लदान, तड़पी ज्यों तड़ितान।
जहाँ ज्वाला कोट भान, के समान दरसान,
जीव जन्तु अकुलान, भूमि लागी थहरान।
तहाँ लागे लहरान, निसिचर हू परान,
वहाँ कालिका रिसान, झुकि झारी किरपान ॥
—जानकी समर

विजया

आठ, आठ, आठ, आठ के विराम से बत्तीस वर्ण का छन्द होता है। चरणान्त में लघु गुरु अथवा नगण रहता है। ‡

* यह छन्द प्राय वीर रस म प्रयुक्त होता है । इस छन्द के चरणान्त म 'नगर' अधिक कर्ण-प्रिय लगता है ।

‡ इस छन्द में सम सम के अतिरिक्त दो विदमों के बीच सम पद भी होता है ।

हीर फल फलि बिम्ब फल सम आनन तासु,
रैन दिन आँसु मुक्ता खसम बरसत।
दु सह वियोग आगि हृदय जरत 'भूप'
धूम मम साँस तासु नाठ बार भरम्मत।
बैठि मुख हाथ धरि लटकि लटकि लट,
बार-बार कोमल कपोल तासु परसत।
मेघ मुख कंज तासु साँवन भौंरी बीच,
मेघ बस छीन जोति चन्द मम बरसत।
—अवधवासी लाला सीताराम 'भूप'

देव घनाक्षरी[1]

इस छन्द के प्रत्येक चरण में आठ, आठ, आठ और नव के विराम से तेंतीस वर्ण होते हैं और चरणान्त में नगण रहता है—

झिल्ली झनकारैं पिक, चातक पुकारैं वन,
मोरनि गुहारैं उठै, जुगनू चमकि चमकि।
घोर घन कारे भारे, धुरवा धुरारे धाय,
धूमनि मचाव नाचैं, दामिनी दमकि दमकि॥
झूकनि बयारि बहै, लूकनि लगावै अंग,
हूकनि भभूकनि की, उर में खमकि खमकि।
कैसे करि राखौं प्राण, प्यारे जसवन्त बिना,
नान्हीं नान्हीं बूँद झरैं, मेघवा झमकि झमकि॥
—जसवन्तसिंह

[1]चरणान्त में 'नगण' का दो बार आना कर्णप्रिय लगता है।

अनुष्टुप्*

इस छन्द के प्रत्येक चरण में आठ वर्ण होते हैं। पहले और तीसरे चरण का आठवाँ वर्ण तो अवश्य ही गुरु होता है और सातवाँ वर्ण सदा लघु रहता है। यदि आठवाँ वर्ण गुरु रहता है तो छन्द अधिक प्रिय लगता है।×

(१)

देखो आही गया लोगो, ग्रीष्मकाल भयावना।
संताप नित्य देते ये, मित्र भी शत्रु हो गये॥

—अम्बिकादत्त 'व्यास'

(२)

स्वस्तिवाद विरक्तों का, और ही कुछ वस्तु है।
वाक्यों में उनके होता, ईश का एवमस्तु है॥

—मैथिलीशरण गुप्त

(३)

अपनाके किसी को यों, छोड़ना ठीक है नहीं।
जोड़ के गहरा नाता, तोड़ना ठीक है नहीं॥

—मैथिलीशरण गुप्त

---

* यह छन्द गण क्रम पर पूरा पूरा नहीं ठहरता। इसी से इसे मुक्तक माना गया है।

× भानुजी इस छन्द का लक्षण इस तरह बतलाते हैं कि इसके प्रत्येक चरण में पाँचवाँ वर्ण लघु और छठा गुरु रहता है और सम (दूसरे-चौथे) चरणों में सातवाँ वर्ण लघु रहता है।

पयार *

इस छन्द के प्रत्येक चरण में चौदह वर्ण होते हैं। प्रायः चरणान्त का वर्ण लघु रहता है —

(१)

विकच कमल कमनीय कलाधर।
मद मद आन्दोलित मलय पवन॥
तरल तरग माला संकुल जलधि।
परम आनन्द मय नन्दन-कानन॥

(२)

सघ शक्ति इस युग का है मुख्य धर्म।
जाति सगठन इस काल का है तत्र॥
सर्वत्र एकीकरण का है घोर नाद।
सहयोग आज कल का है महामत्र॥

(३)

किन्तु हम आज भी हैं प्रतिकूल गति।
आज भी विभिन्नता ही मे हैं हम रत॥
बची खुची रही सही जो थी सघ शक्ति।
छिन्न भिन्न, हो रही है वह भी सतत॥

---

* यह छद बँगला का है। अब हिन्दी में भी यह छन्द व्यवहृत होने लगा है। प्रत्येक शब्द के अन्त्य अकारान्त वर्ण को स स्वर पढ़ने से लय मधुर हो जाती है। बँगला में अकारान्त वर्ण का स स्वर ही उच्चारण होता है।

अनुष्टुप्*

इस छन्द के प्रत्येक चरण में आठ वर्ण होते हैं। पहले और तीसरे चरण का आठवाँ वर्ण तो अवश्य ही गुरु होता है और सातवाँ वर्ण सदा लघु रहता है। यदि आठवाँ वर्ण गुरु रहता है तो छन्द अधिक प्रिय लगता है।×

(१)

देखो आही गया लोगो, ग्रीष्मकाल भयावना।
सताप नित्य देते ये, मित्र भी शत्रु हो गये॥

—अम्बिकादत्त 'व्यास'

(२)

स्वस्तिवाद विरक्तों का, और ही कुछ वस्तु है।
वाक्यो मे उनके होता, ईश का एवमस्तु है॥

—मैथिलीशरण गुप्त

(३)

अपनाके किसी को यों, छोडना ठीक है नही।
जोड के गहरा नाता, तोडना ठीक है नहीं॥

—मैथिलीशरण गुप्त

---

* यह छन्द गण क्रम पर पूरा पूरा नहीं ठहरता। इसी से इसे मुक्तक माना गया है।

× भानुजी इस छन्द का लक्षण इस तरह बतलाते हैं कि इसके प्रत्येक चरण में पाँचवाँ वर्ण लघु और छटा गुरु रहता है और सम (दूसरे-चौथे) चरणों में सातवाँ वर्ण लघु रहता है।

पयार *

इस छन्द के प्रत्येक चरण में चौदह वर्ण होते हैं। प्रायः चरणान्त का वर्ण लघु रहता है —

(१)

विकच कमल कमनीय कलाधर।
मद मद आन्दोलित मलय पवन॥
तरल तरग माला सकुल जलधि।
परम आनन्द मय नन्दन-कानन॥

(२)

सघ-शक्ति इस युग का है मुख्य धर्म।
जाति संगठन इस काल का है तत्र॥
सर्वत्र एकीकरण का है घोर नाद।
सहयोग आज कल का है महामत्र॥

(३)

किन्तु हम आज भी हैं प्रतिकूल गति।
आज भी विभिन्नता ही में हैं हम रत॥
बची खुची रही सही जो थी सघ शक्ति।
छिन्न भिन्न, हो रही है वह भी सतत॥

* यह छद बँगला का है। अब हिन्दी में भी यह छन्द व्यवहृत होने लगा है। प्रत्येक शब्द के अन्त्य अकारान्त वर्ण को स-स्वर पढ़ने से लय मधुर हो जाती है। बँगला में अकारान्त वर्ण का स-स्वर ही उच्चारण होता है।

(४)

जातीय सभाएँ जाति जाति के समाज।
नाना जातियों के भिन्न भिन्न पाठागार॥
जिस भाँति सचालित हो रहे हैं आज।
सहकारिता का कर देवेंगे संहार॥

(५)

काव्यता को कैसे प्राप्त होगा वह काव्य।
जिस काव्य से न होवे जातीय-उत्थान॥
वह कविता है कभी कविता ही नहीं।
जिस कविता में न हो जातीयता-तान॥

—'हरिऔध'

मिताक्षरी* (प्रियाल)

इस छन्द का प्रत्येक चरण पन्द्रह या सोलह वर्ण का होता है। पन्द्रह वर्ण वाले छन्द के चरणान्त में एक गुरु अवश्य रहता है और सोलह वर्ण वाले छन्द के चरणान्त में गुरु लघु रहता है —

---

* इस छन्द का पन्द्रह वर्ण वाला चरण मनहरण के चरण का उत्तरार्द्ध और सोलह वर्ण का रूपघनाक्षरी के चरण का आधा होता है।

इस छन्द में तुकान्त और अतुकान्त दोनों ही तरह से रचना की जा सकती है। क्षेत्र विस्तृत है। गति के लिए भी स्वतन्त्रता है। जहाँ अर्थ की पूर्णता हो अथवा श्वास पतन हो वहाँ यति दी जा सकती है।

(१)

आर्यवंश-भूषण शिवाजी महाराज के—
पूज्य चरणों में, इस दासी जेबुन्निसा के,
भक्ति युत शतशः प्रणाम अंगीकृत हों।

—हृदयेश

(२)

चलता चिरानुचर वायु था वसंत का
सुस्वर से, देवी के पदाब्ज-परिमल की
आशा कर। चारों ओर शोभित थे फूल यों-
रत्न ज्यों धनाधिप के धन्य धनागार में।

—'मधुप'

इसी तरह चरण रखने की भी स्वतंत्रता है। तीन, पाँच, आठ आदि कितने ही चरण रख सकते हो। ऊपर कई उदाहरण देकर ये बातें स्पष्ट कर दी गई हैं।

घनाक्षरी शब्दों के होते हुए इस की रचना का हेतु यही है कि घनाक्षरी के चारों चरणों के अन्तर्गत एक बात पूरी कर देने की पुरानी प्रथा है। इस छन्द में धारावाहिक ढंग से विषय का वर्णन कितने ही चरणों में किया जा सकता है।

वास्तव में यह ढंग बँगला से लिया गया है। वहाँ इस तरह का चौदह वर्णों का छन्द है। बँगला में 'ने', 'से' आदि विभक्तियों के लिए अलग वर्ण नहीं होते। बँगला के ढंग पर हिन्दी में रचना के लिए पन्द्रह और सोलह वर्णों का यही छन्द उपयुक्त हो सकता है। 'मधुप' जी ने इस छन्द की सृष्टि की है। और वीरांगना, मेघनाद वध आदि बंगला काव्य ग्रन्थों का इसी छन्द में अनुवाद किया है।

(३)

मन मन सोचता था बैठ अपराह्न में,
आशैशव जीवन की कितनी कथाएँ मैं,
विश्व-मूढ क्रीड़ा, सुख-दुःख लौट फेर त्यों,
जीवन का असंतोष, असम्पूर्ण आशाएँ,
मर्त्य मानवों की अन्त रहित दरिद्रता।

—मुंशी अजमेरी

(४)

थाह लेना चाहता कपोत ज्यों गगन की,
मन में ही किन्तु रह जाती चाह मन की,
त्यों ही उन की मैं व्यर्थ थाह लेना चाहता,
मानो पूर्ण पारावार को हूँ अवगाहता।

—रायकृष्ण दास

(५)

सालता उसी को है कि लगता जिसे है शेल,
दूसरो का रोदन है लौकिक रुदन खेल।
एक का है लक्ष्य होता अन्य के हिये का तीर।
"जिसे न बिवाँई फटी जाने क्या पराई पीर?"

—'मधुप'

अर्द्ध-सम

गण-वद्ध*

सुंदरी

इसके विषम (पहले-तीसरे) चरणों में 'स स ज ग' के क्रम से दस-दस वर्ण और सम (दूसरे-चौथे) चरणों में 'स भ र ल ग' के क्रम से ग्यारह ग्यारह वर्ण रहते हैं —

चिरकाल रसाल ही रहा। जिस भावज्ञ कवीन्द्र का कहा।
जय हो उस कालिदास की। कविता केलि कलाविलास की।
—साकेत

वेगवती

इस छन्द के विषम (पहले-तीसरे) चरणों में 'स स स ग' के क्रम से दस-दस वर्ण और सम (दूसरे चौथे) चरणों में 'भ भ भ ग ग' के क्रम से ग्यारह-ग्यारह वर्ण रहते हैं —

गिरिजापति मो मन भायो। नारद शारद पार न पायो।
कर जोर आधीन अभागे। ठाढ भये वर दायक आगे।
—गदाधर

पुष्पिताग्रा (चित्र)

इस छन्द के विषम चरणों में 'न न र य' के क्रम से बारह-बारह वर्ण और सम चरणों में 'न ज ज र ग' के क्रम से तेरह तेरह वर्ण रहते हैं —

* अर्द्ध-सम छन्दों का चलन बहुत कम है। इसी से यहाँ थोड़े से उदाहरण दे दिये गये हैं।

परिपतति पयोनिधौ पतंग। सरसिरुहामुदरेषु मत्त भृंग।
उपवन तरु कोटरे विहंगं। तरुणि जनेषु शनैः शनैरनंग॥
—भोज और कालिदास

अम्बर

इसके विषम चरणों में 'ज ज ज ल ग' के क्रम से ग्यारह ग्यारह और सम चरणों में 'भ भ भ ग' के क्रम से दस-दस वर्ण रहते हैं —

सिखी तिय को! जन की तिय को?, मूरिको? पायल भेद करी।
तपी कहि काहि रमा पियको? को वर मौन जपै जु हरी?॥
—समनेस

अपर चक्र

इसके विषम चरणों में 'न न र ल ग' के क्रम से ग्यारह ग्यारह वर्ण और सम चरणों में 'न ज ज र' के क्रम से बारह बारह वर्ण रहते हैं,—

अँसुवनि नहिं तोरती, लली, सखिहूँ न जान कहा दुखै किये।
लहिय खबरि नैहरो भली, पिय परभातहि ते हिये लिये॥
—समनेस

द्रुतमध्यक

इसके विषम चरणों में 'भ भ भ ग ग' के क्रम से ग्यारह ग्यारह वर्ण और सम चरणों में 'न ज ज य' के क्रम से बारह बारह वर्ण होते हैं:—

कौतुक आज कियो बनमाली। जल बिच कूदि परेउ सुनि आली।
नाथि फनिन्दिहि तोपि फनिन्दी। प्रगट भयो दुत मध्य कलिन्दी ॥

—दास

उपचित्रक

इसके विषम चरणों मे 'स स स ल ग' के क्रम से ग्यारह-ग्यारह वर्ण और सम चरणों में 'भ भ भ ग ग' के क्रम से। ग्यारह ग्यारह वर्ण होते हैं —

न उठे कर जासु सलाम कों। बात कहै मिल उत्तर नाहीं।
न करो दुख मानव जानि कै। मित्र सु है उप चित्रक माहीं ॥

— दास

किरीटमुख *

इसके विषम में आठ भगण और सम चरणो मे आठ सगण रहते हैं —

मा मन गो जकि त्यो हियरो न विलोकि सकै चरु सों वदनै बर।
सरि सिंधु बनै हरि बाघ करी मृग व्याल सुरी सुर जाल तके।
मानव दानव गोकुल किन्नर वानर भूधर भूचर खेचर।
व्रज ग्वारि गुवारिनि आपनपौ नँदलाल विलोकत भीति चके ॥

—समनेस

---

* अनेक सवैयों के मेल से इस तरह अर्द्ध सम छन्द बन सकते हैं।

अर्द्धसम मुक्तक

विरहा

इस छन्द के विषम (पहले तीसरे) चरणों में सोलह-सोलह और सम (दूसरे-चौथे) चरणों में दस-दस वर्ण रहते हैं। सम चरणो के अन्त में गुरु-लघु अथवा जगण रहता है:—

(१)

जनम जनम कर पुनवाँक फर मोरे गवरि गुसाँइनि जू हेरि।
मैया ओर करवा मैं माँगों यहै बरवा जे, कीजे बलबिरवा की चेरि॥

—बलवीर

(२)

आज बरसाइत रगरवा मचावो जिन, नहकै झगरवा उठाय।
अपनों ही बरवा मैं पूजौं बलबिरवा पी, बरवा पूजन तू ही जाय॥

—बलवीर

---

* मोरहे बरन पर करि बिसराम जामें, बहुरि बरन दसलाय।
छबिस अछरिया के रचत चरन जाके, बिरहा सो छँदवा कहाय॥
गुरु लघु कर कछु नियम करहिं नहिं, पद अंत गुरु-लघु होय।
चार हू चरन करि कोई कवि बिरचहिं, दुइ पद कर कवि कोइ॥

—कन्हैयालाल मिश्र

यह छन्द पुरबी भोजपुरिया भाषा के लिए बहुत उपयुक्त है।

विषम

जो वर्ण वृत्त न तो सम ही हैं और न अर्द्धसम ही, वही विषम कहलाते हैं।

गणबद्ध (साधारण)

उद्गता (उदाता)

इस छन्द के पहले चरण में 'स ज स ल' दूसरे मे 'न स ज ग' तीसरे मे भ न ज ल और चौथे में 'स ज स ज ग' का क्रम रहता है —

कहि काम वाम दिन मास । सत कहि कहैं मनोज ई।
सभु सु तिय कहि वानहि । त्रिपुरै हनो को केहि सो रतीस ई॥

—समनेस

सौरभक (सौरभ)

इस छन्द के पहले चरण मे 'स ज स ल' दूसरे मे 'न स ज ग' तीसरे में 'र न भ ग' और चौथे में 'स ज स ज ग' का क्रम रहता है —

जड कौन को कहत वेद । जगत जन रक को सही।
कौन नारि पति नेम लिये । कहि ज्ञान काहि जग हीन मानही॥

—समनेस

मजु माधवी *

इस छन्द के पहले चरण मे इन्द्रवशा के, दूसरे में इन्द्रवज्रा

---

* भानु जी ऐसे छन्दों को जो उपजातियो के मेल से बनते हैं और जिनके विषम चरणों में बारह और सम चरणों में ग्यारह वर्ण

के, तीसरे में वंशस्थविलम् के और चौथे में उपेन्द्र-वज्रा के चरण रहते हैं।

मैंने कहा आज निकुंज शून्य है।
सूनी पड़ी हैं, व्रज वीथिकाएँ॥
न कूल में श्री यमुना निकुंज में।
कभी किसी ने घनश्याम देखे?

—श्रीवर

आपीड़ *

इस छन्द के पहले चरण मे आठ, दूसरे मे बारह तीसरे में सोलह और चौथे में बीस वर्ण रहते हैं और प्रत्येक चरण के अन्त के दो वर्ण गुरु और शेष सब लघु रहते हैं —

प्रभु असुर सु हर्त्ता।
जग विदित पुनि जगत भर्त्ता।
दनुज-कुल अरि जग हित धरम धर्त्ता।
अस प्रभु कहँ सरवस तज भज भव-दुख हर्त्ता॥

—गदाधर

होते हैं मंजु माधवी को अर्द्धसम वृत्त मानते हैं। परन्तु जब ऐसे छन्दों के चारों चरणों के गण भिन्न भिन्न हैं तो उन्हें अर्द्धसम मानना ठीक नहीं जँचता। इसी से हम इसे मंजु माधवी नाम से गणबद्ध विषम में रख रहे हैं। श्रीवर जी ने उपजाति छन्दों के मेल से ऐसे और भी अनेक छन्द रचे हैं।

विषम छन्दों का चलन अभी हिन्दी में नाम को ही है। इसी से यहाँ केवल दिग्दर्शन मात्र कराया गया है।

* इसे भी गण-बद्ध ही समझना चाहिए। ऐसे ही और भी अनेक छन्द हैं

विषम-मुक्तक

विषम मुक्तकों का चलन अभी तक हिन्दी में नहीं के बराबर ही है। भानुजी ने 'अनगक्रीडा' और 'सौम्यशिखा' नाम के छन्दों को विषम मुक्तकों में माना है। पर अनगक्रीड़ा के पहले दल में सब वर्ण गुरु होते हैं दूसरे दल में सब वर्ण लघु होते हैं। अत: इसे गणवद्ध ही मानना ठीक है। अधिक स्पष्टता के लिए हम यहाँ अनगक्रीडा को उदाहरण स्वरूप रखते हैं —

आठौ यामा शभू गावै।
सद्भक्ती तैं मुक्ती पावै॥
सिख मम धरि हिय भ्रम सब तजि कर।
भज नर हर हर हर हर हर हर॥

—छन्द प्रभाकर

सौम्यशिखा इसका बिलकुल उलटा है उसका उदाहरण देने की आवश्यकता नहीं है।

हाँ मरहठी में अभग और ओवी नाम से विषम-मुक्तकों में रचना होती है। उदहरणार्थ हम एक ओवी छन्द देते हैं —

ओवी

इसके पहले चरण में आठ, दूसरे में नव, तीसरे में दस और चौथे में चार वर्ण हैं —

आता वदू कवीश्वर। जे शब्द सृष्टी चे ईश्वर।
नाहीं तरीं है परमेश्वर। वदावे ते॥

—समर्थ गुरु रामदास

वर्णिक-मिलिन्दपाद

प्रमाणिका-मिलिन्दपाद

सुधार धर्म कर्म को। बिसार दो अधर्म को॥
बढाय वेलि प्रीति को। कथा सुनीति रीति को॥
सुना करो अनेक से।
मिलो महेश एक से॥

—नाथूराम 'शंकर' शर्मा

भुजगी-मिलिन्दपाद

(१)

अरे ओ अजन्मा ? कहाँ तू नहीं। न कोई ठिकाना जहाँ तू नहीं॥
किसी ने तुझे ठीक जाना नहीं। इसी से यथा तथ्य माना नहीं॥
शिखा सत्य की झूठ ने काटली।
न विज्ञान फूला न विद्या फली॥

—नाथूराम 'शकर' शर्मा

(२)

यहीं स्वर्ग चाहे बना लीजिए। यहीं नारकी सृष्टियाँ कीजिए॥
नहीं कौन सी साधना है यहाँ ? वहीं सिद्धि है साधना है जहाँ॥
महा-साधना क्षेत्र ससार है।
मनुष्यत्व ही मुक्ति का द्वार है॥

—मैथिलीशरण गुप्त

त्रोटक-मिलिन्दपाद

(१)

मत भेद भयानक पाप रहा। बिन प्रेम न मेल मिलाप रहा॥
अभिमान अधोमुख ठेल रहा। अधमाधम ढोंग ढकेल रहा॥
सुख-जीवन का मग तंग हुआ।
बस भारत का रस भंग हुआ॥

—नाथूराम 'शंकर' शर्मा

(२)

जल तुल्य निरंतर स्वच्छ रहो। प्रबलानल ज्यों अविरुद्ध रहो॥
पवनोपम सत्कृति शील रहो। अवनीतलवद् धृतिशील रहो॥
करलो नभ सा शुचि जीवन को।
नर हो, न निराश करो मन को॥

—मैथिली शरण गुप्त

द्रुतविलम्बित-मिलिन्दपाद

यदि अभीष्ट तुम्हें निज सत्व है। प्रिय तुम्हें यदि मान महत्व है॥
यदि तुम्हें रखना निज नाम है। जगत में करना कुछ काम है॥
मनुज ! तो श्रम से न डरो, उठो।
पुरुष हो, पुरुषार्थ करो, उठो॥

—मैथिलीशरण गुप्त

स्रग्विणी-मिलिन्दपाद

(१)

दूर क्यों भागते हो भले कर्म से? क्यों घृणा हो गई है तुम्हें धर्म से?
शून्य ही हो गये नीति के मर्म से, शीश तो भी झुका है नहीं शर्म से॥

ताप-सताप से नित्य रोते रहो,
क्यों जगोगे, अभी देश! सोते रहो॥

(२)

ज्ञान से मान से, शक्ति से, हीन हो, दान से, ध्यान से, भक्ति से, हीन हो॥
आलसी भी महामूढ़! प्राचीन हो, सोच देखो सभी से तुम्हीं दीन हो॥
अग को आँसुओं से भिगोते रहो।
क्यों जगोगे, अभी देश! सोते रहो॥

—रामचरित उपाध्याय

भुजगप्रयात-मिलिन्दपाद

अजन्मा न आरम्भ तेरा हुआ है। किसी से नहीं जन्म मेरा हुआ है॥
रहैगा सदा अत, तेरा न होगा। किसी काल में नाश मेरा न होगा॥
खिलाड़ी खुला खेल तेरा रहैगा।
मिटेगा नहीं मेल मेरा रहैगा॥

—नाथूराम 'शकर' शर्मा

पचाचामर-मिलिन्दपाद

चलो अभीष्ट मार्ग मे सहर्ष खेलते हुए,
विपत्ति विघ्न जो पड़ें उन्हें ढकेलते हुए।
घटे न हेल मेल हाँ बढ़े न भिन्नता कभी,
अतर्क एक पथ के सतर्क पथ हों सभी।
तभी समर्थ भाव है कि तारता हुआ तरे।
वही मनुष्य है कि जो मनुष्य के लिए मरे॥

—मैथिलीशरण गुप्त

तीसरा उल्लास

प्रत्ययों की आवश्यकता

प्राय कहा जाता है कि छन्द रचना के नियमों के साथ प्रत्ययों के जानने की क्या आवश्यकता है ? यह तो गणित का विषय है, गणित का चमत्कार है । इस विषय मे माथापच्ची करना निरी दिमागी कसरत करना है क्योंकि छन्द रचना में इसकी आवश्यकता ही नहीं पड़ती । यह कहना ठीक उसी तरह का है कि गणित के सिद्धान्त हमें जानने की क्या आवश्यकता है क्योंकि रोजमर्रा के कामों में तो उसकी जरूरत ही नहीं पड़ती ।

सच बात यह है कि छन्द शास्त्र भी एक प्रकार से विज्ञान का अग है और विज्ञान का मूलाधार गणित है । हम पहले बतला आये हैं कि छन्द रचना के मूल सिद्धान्त गुरु लघु और गणों की गणना पर निर्भर हैं । छद शास्त्र के दशाक्षरों का चमत्कार गणित मूलक है । गणित के चमत्कार के द्योतक प्रत्यय हैं, अत हम यहाँ सक्षेप मे प्रत्ययों की चर्चा करते हैं ।

प्रत्यय

जिन के द्वारा छन्दो के प्रकार, सख्या तथा उन के शुद्धा शुद्ध आदि का सम्यक ज्ञान होता है उन्हे 'प्रत्यय' कहते हैं।

प्रस्तार, सूची, नष्ट, उद्दिष्ट, पाताल, मेरु, खण्डमेरु, पताका और मर्कटी ये नव प्रत्यय हैं। कोई कोई विद्वान् सख्या, नाम का भी दसवाँ प्रत्यय मानते हैं। इन मे प्रस्तार, नष्ट, उद्दिष्ट, मेरु, पताका और मर्कटी इन छ प्रत्ययो का जानना वहुत जरूरी है।

१. प्रस्तार

मात्रिक अथवा वर्णिक प्रत्येक छन्द के भेद तथा रूप जानने की रीति को 'प्रस्तार' कहते हैं।

प्रस्तार की रीति

मात्रिक

१ यदि मात्राओं की सख्या सम हो तो पहली पक्ति में उन मात्राओं की निश्चित सख्या के सब गुरु रूप रखो और यदि विषम सख्या हो तो पहली पक्ति के आदि में बाएँ छोर पर एक लघु चिन्ह रख कर उस लघु के आगे शेष मात्राओं के सब गुरु चिन्ह रखो।

२ दूसरी पक्ति जो पहली पक्ति के नीचे होगी उस के रूप इस प्रकार रखो कि बाएँ छोर से पहली पक्ति के पहले गुरु के नीचे लघु चिन्ह रखो और फिर इस लघु चिन्ह की दाहिनी ओर पहली पक्ति के शेप सब रूप ज्यो के त्यों उतार लो । अब दूसरी पक्ति के इन रूपों की मात्राएँ गिनकर देखो कि मात्राओं की निश्चित सख्या में कितनी मात्राओं की कमी है । जितनी मात्राओं की कमी रहे, इस दूसरी पक्ति के बाएँ छोर वाले लघु चिन्ह के बाईं ओर गुरु चिन्हों द्वारा पूर्ति करो । और यदि देखो कि बाईं ओर रखे जाने वाले रूपों की सख्या विपम है तो इस सख्या से जितने गुरु बन सकें उतने गुरु रूप उस बाएँ छोर वाले लघु चिन्ह के बाईं ओर रखो और अन्त मे बाएँ छोर पर एक लघु रख दो।

३ अब तीसरी पक्ति जो दूसरी पक्ति के नीचे होगी उसे भी दूसरी पक्ति की तरह ही भरो। अर्थात् दूसरी पक्ति के भरने में उस (दूसरी पक्ति) का जो सबध पहली पक्ति से रहा वही सबध इस तीसरी पक्ति का, इसके भरने में दूसरी पक्ति से रहेगा। इसी प्रकार चौथी, पाँचवी आदि पक्तियों के रूप रखते जाओ। अन्तिम पक्ति में निश्चित सख्या के सब लघु रूप आजावेंगे जो *प्रस्तार का अन्तिम रूप रहेगा।*

उदाहरण—४ (विपम) और ६ (सम) मात्रा वाले छन्दों के जितने रूप हो सकते हैं वे प्रस्तार द्वारा दिखाते हैं—

५ मात्राओं के रूप *		६ मात्राओं के रूप	
रूप	क्रम संख्या	रूप	क्रम संख्या
।ऽऽ	१	ऽऽऽ	१
ऽ।ऽ	२	।।ऽऽ	२
।।।ऽ	३	।ऽ।ऽ	३
ऽऽ।	४	ऽ।।ऽ	४
।।ऽ।	५	।।।।ऽ	५
।ऽ।।	६	।ऽऽ।	६
ऽ।।।	७	ऽ।ऽ।	७
।।।।।	८	।।।ऽ।	८
		ऽऽ।।	९
		।।ऽ।।	१०
		।ऽ।।।	११
		ऽ।।।।	१२
		।।।।।।	१३

* मात्रिक-छन्दों के प्रस्तार का पहला रूप रखने के लिए ध्यान रहे कि निश्चित संख्या में दो का भाग दे ले। जितने अंक भजनफल में आवें उतने गुरु चिन्ह लगावे और जो शेष रहे उसके बजाय एक लघु चिन्ह अन्त में बाँई ओर रखदे। गुरु बनाने का आगे भी यही ढग है कि संख्या में दो का भाग देता जाय जितना भजनफल मिलता जाय उतने गुरु चिन्ह रखता जाय, जो १ शेष रहेगा उसके बजाय लघु चिन्ह रखे।

इस तरह प्रस्तार द्वारा ज्ञात हो गया कि ५ मात्रा वाले छन्दों के रूप ८ और छ मात्रा वाले छन्दों के रूप १३ होंगे।

वर्णिक

१- जितने वर्णों का प्रस्तार करना हो पहली पक्ति में उतने ही गुरु चिन्ह रख दो। प्रस्तार का यह पहला रूप होगा।

२ दूसरी पक्ति जो पहली पक्ति के नीचे होगी उसके रूप इस प्रकार रखो कि पहली पक्ति के बाएँ छोर के गुरु के नीचे लघु चिन्ह रखो और फिर इस लघु चिन्ह की दाहिनी ओर पहली पक्ति के शेष रूप ज्यों के त्यों उतार लो। यह दूसरा रूप होगा।

३ अब तीसरी पक्ति जो दूसरी पक्ति के नीचे होगी उसे इस प्रकार भरो कि दूसरी पक्ति के बाएँ छोर वाले गुरु के नीचे लघु चिन्ह रखो और इस लघु चिन्ह की दाहिनी ओर दूसरी पक्ति के शेष सब रूप ज्यों के त्यों रखो। अब देखो कि वर्णों की निश्चित सख्या में कितने वर्णो की कमी है। जितने वर्णों की कमी हो उतने ही गुरु चिन्ह इस तीसरी पक्ति के बाएँ छोर वाले लघु चिन्ह के बाईं ओर रख दो। यह तीसरा रूप होगा। आगे के चौथे पाँचवें आदि शेष रूप इस तीसरी पक्ति के ढग पर ही वहाँ तक भरते जाओ जहाँ तक कि सब लघु रूप आ जावें। यह सब लघु रूप ही प्रस्तार का अन्तिम रूप होगा।

उदाहरण—३ (विषम) और ४ (सम) वर्ण वाले छन्दों के सब रूप प्रस्तार द्वारा दिखाओ।

३ वर्णों के रूप

रूप	क्रमसंख्या
S S S	१
I S S	२
S I S	३
I I S	४
S S I	५
I S I	६
S I I	७
I I I	८

४ वर्णों के रूप

रूप	क्रमसंख्या
S S S S	१
I S S S	२
S I S S	३
I I S S	४
S S I S	५
I S I S	६
S I I S	७
I I I S	८
S S S I	९
I S S I	१०
S I S I	११
I I S I	१२
S S I I	१३
I S I I	१४
S I I I	१५
I I I I	१६

३ वर्ण वाले छन्दों के रूप ८ और ४ वर्ण वाले छन्दों के रूप १६ होंगे।

प्रस्तारों का प्रभाव

प्रस्तार द्वारा अनेक नये छन्द बनाने में सहायता मिलती है। मात्रिक छन्दों के लिए प्रस्तार जानना उतना आवश्यक नहीं है जितना कि वर्ण वृत्तों के लिए आवश्यक है क्योंकि वर्णिक छन्दों में केवल वर्णों का ही क्रम देखा जाता है। जो भेद प्रस्तार का होगा वही छन्द के चारों चरणों में रहेगा परन्तु मात्रिक छन्द के चारों चरणों के प्रस्तार रूप भिन्न भिन्न होते हैं। उसके लिए तो गति और मात्राओं की पूर्ण संख्या होना ही काफी है।

२. संख्या ×

बिना प्रस्तार किये किसी छन्द के रूपों की गिनती बतलाने की रीति को 'संख्या' कहते हैं।

मात्रिक-संख्या जानने की रीति

१ जितनी मात्राओं के प्रस्तार के रूपों की संख्या निकालनी हो उतनी ही संख्या में दोहरी पंक्ति में कोठे बनालो।

२ पहली पंक्ति के कोठों में क्रम संख्या अर्थात् निश्चित मात्राओं की संख्या रख लो। अब दूसरी पंक्ति के कोठों में रूप के अंक इस प्रकार भरो कि पहले कोठे में १ का अंक, दूसरे

× कोई कोई संख्या को सूची भी कहते हैं। वास्तव में यह भेदांक

कोठे में २ का अक और तीसरे कोठे में ३ का अक रखो। अब आगे के कोठों की पूर्ति इस प्रकार करो कि खाली कोठे के पास के बाईं ओर वाले दो दो कोठों के अक जोड़ते जाओ। और क्रमश आगे के कोठों में रखते जाओ। बस मात्रिक रूपाक निकल आवेंगे। जिस क्रम-सख्या के कोठे के नीचे वाले कोठे में जो रूपाक रखा है वही अक उतनी मात्राओं के छन्दों के रूप बतलाता है।

उदाहरण—विना प्रस्तार किये बतलाओ कि ५ तथा ६ मात्राओं वाले छन्दों की भेद-सख्या अथवा रूपों की सख्या क्या होगी ?

क्रम सख्या	१	२	३	४	५	६
सूची के अक	१	२	३	५	८	१३

सूची अंक से स्पष्ट हो गया कि ५ मात्रा वाले छन्दों के रूपों की सख्या ८ और ६ मात्रा वाले छन्दों के रूपों की सख्या १३ होगी।

वर्णिक सख्या जानने की रीति

१ जितने वर्णों के प्रस्तार के रूपों की सख्या निकालनी हो उतनी ही सख्या में दोहरी पक्ति में कोठे बनाओ।

२ पहली पक्ति के कोठों में क्रमश वर्ण-सख्या रखलो। अब दूसरी पक्ति के कोठों में सख्याक इस प्रकार भरो कि

पहले कोठे में २ का अक रखो । आगे के कोठे इस प्रकार भरो कि हर खाली कोठे के पास वाले बाई ओर के कोठे के अक का दूना करो और खाली कोठे में रखते जाओ। बस वर्णिक रूपाक निकल आवेंगे । अब देखो कि जिस क्रम-सख्या वाले कोठे के नीचे वाले कोठे में जो रूपाक रखा है वही, अक उतने वर्णों के छन्दों के रूप बतलाता है।

उदाहरण—बिना प्रस्तार किये बतलाओ कि ४ तथा ५ वर्णों वाले छन्दों के कितने रूप होंगे ?

क्रम सख्या	१	२	३	४	५
सूची के अक	२	४	८	१६	३२

४ वर्णों के छन्दों के रूपों की सख्या १६ और ५ वर्णों के छन्दो की सख्या ३२ होगी।

३. सूची *

जिस नियम अथवा काँटे से हम प्रस्तार के शुद्धा शुद्ध की जाँच करते हैं उसे 'सूची' कहते हैं । इस से ज्ञात हो जाता है कि अमुक मात्रिक या वर्णिक प्रस्तार में कितने आदि लघु, अन्त लघु आदि हैं।

मात्रिक सूची जानने की रीति

१ जितनी मात्राओं की सूची निकालनी हो उतनी ही सख्या में कोठे बना लो और इन में क्रमश मात्राओं की क्रम सख्या रख दो । यह पहली पक्ति हुई ।

२ अब इस पहली पक्ति के ऊपर दूसरी पक्ति रूपाकों की रखो जिस मे क्रमश रूपाकों की सख्या रख दो।

३ अब दूसरी पक्ति के ऊपर बाएँ छोर के पहले कोठे को छोड कर शेप कोठों के ऊपर कोठे बनाओ यह तीसरी पक्ति होगी। इस तीसरी पंक्ति में दाहिने छोर से पहले कोठे में रूपाक शब्द लिखो, दूसरे में आदि लघु और अन्त लघु, तीसरे में आदि गुरु, अन्त गुरु तथा आद्यन्त लघु, चौथे में आदि लघु तथा अन्त गुरु, आदि गुरु तथा अन्त लघु और पाँचवें * मे आद्यन्त गुरु शब्द लिख दो। बस मात्रिक सूची तैयार हो गई।

इस सूची का अर्थ यह हुआ कि तीसरी पक्ति मे दाहिने छोर वाले कोठे का 'रूपांक' शब्द बतला रहा है कि इतनी मात्राओं के रूपाक उतने होंगे जितने उसके नीचे के दूसरी पक्ति के कोठे मे अक रखे हैं। और इस 'रूपाक' शब्द वाले कोठे के बाई ओर के कोठों के शब्द यह बतला रहे हैं कि उसके नीचे वाले दूसरी पक्ति के कोठों में निश्चित मात्रा वाले छन्दों के

* प्रत्येक छन्द का प्रस्तार करने पर उसके रूपों की अधिक से अधिक (१) आदि लघु अन्त लघु, (२) आदि-गुरु अन्त गुरु और आद्यन्त लघु, (३) आदि लघु तथा अन्त गुरु और आदि गुरु तथा अन्त लघु और आद्यन्त गुरु ये ही रूप हो सकते हैं जिन के लिए तीसरी पक्ति में पाँच ही कोठे पर्याप्त हैं।

जो रूपाक रखे हुए हैं उन रूपाकों मे इतने, आदि, लघु, इतने अन्त लघु, इतने आदि गुरु, इतने अत गुरु और इतने आद्यन्त लघु आदि होंगे।

उदाहरण—६ मात्राओ वाले छन्द में रूपो की सख्या क्या होगी ? और इन रूपों में आदि लघु, अन्त लघु, आदि गुरु, अन्त गुरु, आद्यन्त लघु, आदि लघु और अन्त गुरु, आदि गुरु और अन्त लघु तथा आद्यन्त गुरुओं की सख्या क्या होगी ?

तीसरी पक्ति		आद्यन्त गुरु	आदि लघु तथाअन्तगुरु आदि गुरु त था अन्तलघु	आदिगुरु अन्त गुरु आद्यन्त लघु	आदिलघु अन्त लघु	रूपाक
दूसरीपक्ति	१	२	३	५	८	१३
पहलीपक्ति	१	७	३	४	५	६

६ मात्राओं के प्रस्तार में रूपों की सख्या १३ होगी। इन में आठ रूपो के आदि में लघु तथा आठ रूपों के अन्त में लघु ५ रूपों के आदि में गुरु, पॉच रूपों के अन्त में गुरु तथा पॉच रूपों के आद्यन्त में लघु, तीन रूपो के आदि मे लघु तथा अन्त में गुरु, तीन रूपों के आदि मे गुरु तथा अन्त में लघु और दो रूपों के आद्यन्त में गुरु चिन्ह होंगे। ❀

❀ ६ मात्राओं का प्रस्तार देखो।

वर्णिक सूची जानने की रीति

१ जितने वर्णों की सूची निकालनी हो उतने कोठे बनालो और उनमें निश्चित वर्णों की क्रमसंख्या रख दो। यह पहली पंक्ति होगी।

२ पहली पंक्ति के ऊपर इस पंक्ति के कोठों से एक कोठा अधिक बनाकर दूसरी पंक्ति बनादो ध्यान रहे कि अधिक कोठा बाएँ छोर पर रहेगा। अब बाएँ छोर से पहले कोठे में १ का अंक लिखकर शेष कोठों में क्रमश उन वर्णों के रूपांक रख दो।

३ अब दूसरी पंक्ति के ऊपर बाँए छोर के दो कोठों को छोड़ कर शेष कोठों के ऊपर कोठे बनाओ† यह तीसरी पंक्ति होगी। इस तीसरी पंक्ति में दाहिने छोर से पहले कोठे मे 'रूपांक' शब्द लिखो। दूसरे में आदि लघु, अन्तलघु, आदिगुरु, अन्तगुरु और तीसरे कोठे में आद्यन्तलघु, आदिलघु तथा अन्तगुरु, आदिगुरु तथा अन्तलघु और आद्यन्तगुरु शब्द लिख दो। बस वर्णिक सूची तैयार हो गई।

---

† प्रत्येक छन्द का प्रस्तार करने पर उसके रूपों की अधिक से अधिक १ आदि लघु, अन्तलघु आदिगुरु, अन्तगुरु २ आद्यन्त लघु, आद्यन्त-गुरु, आदिलघु तथा अन्तगुरु, आदिगुरु तथा अन्तलघु यही रूप हो सकते है। जिनके लिए रूपांक सहित तीन कोठे पर्याप्त हैं।

उदाहरण—४ वर्णों के प्रस्तार की सूची बताओ। अर्थात् बताओ कि ४ वर्णों के प्रस्तार में रूपों की सख्या क्या होगी? और इन रूपों मे आदिलघु, अन्तलघु, आदिगुरु, अन्तगुरु, आद्यन्तलघु आदिलघु तथा अन्तगुरु आदिगुरु तथा अन्तलघु और आद्यन्त गुरुओ की सख्या क्या होगी?

			आद्यन्तलघु, आद्यन्तगुरु, आदिलघु तथा अतगुरु आदि गुरु तथा अतलघु	आदिलघु, अतलघु आदिगुरु, अन्तगुरु,	रूपाक
दूसरी पक्ति	१	२	४	८	१६
पहिली पक्ति		१	२	३	४

४ वर्णों के प्रस्तार मे रूपो की सख्या १६ होगी। इनमें आठ रूपों के आदि मे लघु, आठ रूपों के अन्त में लघु, आठ रूपो के आदि मे गुरु आठ रूपों के अन्त में गुरु, चार रूपों के आद्यन्त मे लघु, चार रूपो के आद्यन्त मे गुरु, चार रूपों के आदि में लघु तथा अत में गुरु, और चार रूपो के आदि मे गुरु तथा अत में लघु चिन्ह होंगे। †

† ४ वर्णों का प्रस्तार देखो।

४. नष्ट

बिना प्रस्तार किये ही किसी मात्रिक अथवा वर्णिक प्रस्तार के किसी भी रूप के जान लेने की रीति को 'नष्ट' कहते हैं।

मात्रिक-नष्ट की रीति

१ जितनी मात्राओं का कोई रूप पूछा गया हो उनकी मात्राओं के बराबर लघु चिन्ह रख कर बाईं ओर से क्रमश उन लघु चिन्हों पर उतनी ही मात्राओं के रूपों की सख्या लिख दो। क्रिया की यह पहली पंक्ति होगी।

२ अब निश्चित मात्राओं के रूपाक मे से प्रश्नाक को घटादो। अब शेष बचे हुए अक में से अन्तिम रूपाक के बाँई ओर के हरएक रूपांक को घटाने का प्रयत्न करो। जो रूपाक घट जाय उसके नीचे गुरु चिन्ह रखो। अब घटाये जाने पर जो अक शेप बचे उसमें से बाईं ओर के किसी और रूपाक के घटाने का प्रयत्न करो। जो रूपांक घटता जाय उसके लघु चिन्ह के नीचे गुरु चिन्ह रखते जाओ। यह क्रिया तब तक करते रहो जब तक शेषाक बिल्कुल न घट जाय। जो रूपाक शेपाकों में से नहीं घट सके हैं उनके लघु के नीचे लघु चिन्ह ही रखो। क्रिया की यह दूसरी पक्ति होगी।

३ अब तीसरी पक्ति में गुरु लघु चिन्ह इस प्रकार रखो कि दूसरी पक्ति में जिस रूपाक के नीचे गुरु चिन्ह रखा है, तीसरी पक्ति में भी उसके नीचे गुरु चिन्ह ही रख दो पर दूसरी

पंक्ति में उस गुरु चिन्ह के दाहिने जो पहला लघु हो उसे तीसरी पंक्ति में न रखो* और आगे यदि लघु चिन्ह हो तो उन्हे ज्यों का त्यों तीसरी पक्ति में रख दो। बस तीसरी पक्ति-वाला ही अभीष्ट रूप होगा।

उदाहरण—६ मात्राओं के प्रस्तार में सातवाँ रूप क्या होगा ?

	१	२	३	५	८	१३ रूपांक
पहली पक्ति	।	।	।	।	।	।
दूसरी पक्ति	ऽ	।	।	ऽ	।	।
तीसरी पक्ति	ऽ		।	ऽ		।

अभीष्ट रूप ऽ । ऽ । होगा

हल—६ मात्राओं का रूपांक १३ है उसमें से प्रश्नांक ७ घटाने पर शेषांक ६ रहा। ६ में से ८ घट नहीं सका इसके नीचे लघु चिन्ह ही रखा। आगे चल कर ५ घट गया। इसके नीचे गुरु चिन्ह रख दिया। ६ में से ५ घटने पर शेष १ रहा। १ में से रूपांक १ ही घट सका उसके नीचे भी गुरु चिन्ह रख दिया। जो २, ३, ८ अंक नहीं घट सके उनके नीचे ज्यों के त्यों

*ऐसा इसलिए किया जाता है कि अभीष्ट गुरु अपने आगे वाले लघु की सहायता से ही गुरु बन सका है।

लघु चिन्ह रख दिये। अब गुरु चिन्ह के आगे वाले २ और ८ के नीचे रखे हुए पहले लघु लोप कर दिए, तो अभीष्ट रूप ऽ । ऽ । आगया।

वर्णिक-नष्ट की रीति

१ जितने वर्णों का कोई रूप पूछा गया हो उतने ही लघु चिन्ह रखो फिर वर्णिक रूपाकों के प्रत्येक अक को आधा करके इन अको को बाई ओर से क्रमश लघु चिन्हों के ऊपर रखो। क्रिया की यह पहली पक्ति होगी।

२ पहले निश्चित रूपों के रूपाक में से प्रश्नाक को घटा दो। अब लघु चिन्हों पर रखे हुए अको को दाहिनी ओर से बाईं ओर को क्रमश बचे हुए शेषाक में से उसी तरह घटाने की क्रिया करो जिस तरह मात्रिक में की है। जो जो अक घटता जाय उसके लघु चिन्ह के नीचे गुरु चिन्ह रखते जाओ। और जो अक न घट सकें उनके लघु चिन्हों के नीचे ज्यो के त्यों लघु चिन्ह रख दो। क्रिया की यह दूसरी पक्ति होगी और यही प्रस्तार का अभीष्ट रूप होगा।

उदाहरण—६ वर्णों के प्रस्तार में ७ वाँ रूप कैसा होगा?

	१	२	४	८	१६	३२
पहली पक्ति	।	।	।	।	।	।
दूसरी पक्ति	ऽ	।	।	ऽ	ऽ	ऽ

६ वर्णों के प्रस्तार में ७ वाँ रूप ऽ । । ऽ ऽ ऽ होगा।

हल—६ वर्णों का रूपाक ६४ है और प्रश्नाक ७ है। अत नियमानुसार ६४ में से सात घटाने पर ५७ शेपाक रहा। पहली पक्ति के लघु चिन्हों पर दाहिने छोर से रखा हुआ अक ३२ है इसे ५७ शेपाक में से घटाने पर २५ शेप रहा। २५ मे से १६ घटाने पर ९ रहा, ६ में से ८ घटाने पर १ रहा। इस १ मे से ४ और २ नहीं घट सकते १ को घटाया तो शेष कुछ नहीं रहा। शेपाकों में से ३२, १६, ८ और १ अक घट सके हैं इनके नीचे गुरु चिन्ह रख दिये, और शेष २, ४ के नीचे लघु ज्यों के त्यो रख दिये। बस दूसरी पक्ति वाला ऽ।।ऽऽऽ यह अभीष्ट रूप निकल आया।

५. उद्दिष्ट

विना प्रस्तार किये ही मात्रिक अथवा वर्णिक प्रस्तार के किसी भी रूप की स्थान-सख्या जान लेने की रीति को 'उद्दिष्ट' कहते हैं।

मात्रिक-उद्दिष्ट की रीति

१ दिये हुए रूप को ज्यों का त्यों रख लो। अब बाएँ छोर से इस रूप के गुरु चिन्हों के पहले ऊपर फिर नीचे और लघु चिन्हों के केवल ऊपर ही निश्चित मात्राओं के रूपांक क्रमश रख दो।

२ अब गुरु चिन्हो के ऊपर रखे हुए रूपाको को जोड लो और निश्चित मात्राओं के रूपाक में से—जो दिये हुए रूप के

दाहिनी ओर से अन्तिम चिन्ह के ऊपर या नीचे होगा—इस जोड को घटा दो। शेषांक दिये हुए रूप की अभीष्ट संख्या होगी।

उदाहरण—६ मात्राओं के प्रस्तार का ऽ । ऽ । यह कौनसा रूप है ?

१	३	५	१३
ऽ	।	ऽ	।
२		८	

हल— १ से ६ मात्राओं तक क्रमश: रूपांक १, २, ३, ५, ८ और १३ हैं। दिये हुए रूप के बाईं ओर के गुरु चिन्ह के ऊपर १ और नीचे २ का अंक रखा। इस गुरु के आगे वाले लघु पर ३, और गुरु के ऊपर ५ तथा नीचे ८ रखा और अन्तिम चिन्ह के ऊपर १३ रखा।

अब गुरु चिन्हों के शीर्षांकों को जोड़ने पर (१+५) अर्थात् ६ मिला। इसे ६ मात्राओं के रूपांक १३ में से घटाया तो ७ शेषांक रहा। बस यही शेषांक दिये हुए रूप की संख्या है।

इस तरह स्पष्ट हो गया कि ६ मात्राओं का ऽ । ऽ । यह ७ वाँ रूप है।*

---

* ६ मात्राओं का प्रस्तार देखो।

६. पाताल

जिस रीति से दी हुई मात्राओं के रूपों की संख्या, सर्व लघु, सर्व गुरु, मात्रा और वर्णों की संख्या जानी जाय उस रीति को मात्रिक तथा जिस रीति से इनके सिवाय लघ्वादि, लघ्वन्त, गुर्वादि और गुर्वन्तों की भी संख्या जानी जाय उस रीति को वर्णिक पाताल कहते हैं।

मात्रिक-पाताल की रीति

१ पाँच पंक्तियों में उतने कोठे बनाओ कि जितनी मात्राओं का छन्द है।

२ पहली पंक्ति के कोठों में दिये हुए छन्द की क्रम-संख्याएँ रख दो।

३ दूसरी पंक्ति के कोठों में संख्या (सूची) की रीत्यानुसार क्रमशः दिये हुए छन्द के रूपांक रखदो।

४ लघु तथा गुरुओं की संख्या बताने वाली तीसरी पंक्ति के कोठों में इस प्रकार अंक भरो कि बाएँ छोर के कोठे में १ का अंक तथा इसके दाहिनी ओर वाले कोठे में २ का अंक रखदो। अब आगे के खाली कोठे इस प्रकार भरो कि खाली कोठे के बाईं ओर जो पहला कोठा हो उसके अंक में उसी के ऊपर

वाले कोठे के रूपाक को जोड़ो और इस जोड में इसी कोठे के बाईं ओर वाले पास के कोठे के अक को भी जोडलो इस तरह जो योगफल मिलता जाय उसे क्रमश खाली कोठो में रखते जाओ। बस इस तरह गुरु, लघुओ की अभीष्ट सख्या निकल आवेगी। उन सख्याओं के समझने का ढग यह है कि इस तीसरी पक्ति के कोठों मे जो अक जिस क्रम सख्या वाले अक के नीचे है वह उतनी ही मात्राओं के छन्द की लघु सख्याओं का व धक है। और लघुओं की सख्या बताने वाले अक के बाईं ओर वाले कोठे का अक उसी लघु सख्या के ऊपर वाले क्रम-सख्या के गुरुओं की सख्या का बोधक है।

५ प्रत्येक क्रम सख्या के लघु-गुरु अकों को जोडकर उसी क्रमसख्या के नीचे चौथी पक्ति के कोठों मे क्रमश रखते जाओ। बस दिये हुए छन्द के वर्णों की सख्या ज्ञात होजायगी।

६ प्रत्येक छन्द की रूप-सख्या को उसी क्रम सख्या से गुणा करो और गुणनफल को उसी क्रम सख्या के नीचे वाले पाँचवीं पक्ति के कोठों मे क्रमश रखते जाओ। अथवा छन्द के सर्व गुरुओं के दूने में उसी छन्द के लघुओं को जोड देने से जो अक मिले उसे उसी छन्द की क्रम-सख्या के नीचे पाँचवीं पक्ति के कोठों में रखो इसी ढ ग से सब कोठे भरते जाओ। बस सर्व मात्राओं की सख्या ज्ञात होजायगी।

उदाहरण—६ मात्राओं के छन्द के सर्व रूपाक, सर्वलघु, सर्वगुरु, सर्व वर्ण और सर्व मात्राओं की सख्या बताओ ?

मात्राओं की क्रमसख्याएँ	१	२	३	४	५	६	पहली पक्ति
रूपाक	क १	ख २	ग ३	घ ५	ङ ८	च १३	दूसरी पक्ति
सर्व लघु तथा सर्व गुरु	छ १	ज २	झ ५	ञ १०	ट २०	ठ ३८	तीसरी पक्ति
सर्व वर्ण	१	३	७	१५	३०	५८	चौथी पक्ति
सर्व मात्राएँ	१	४	९	२०	४०	७८	पाँचवी पक्ति

हल—पाँच पक्तियों में से हर एक में छ छ कोठे बनाए और समझने की आसानी के लिए आवश्यकतानुसार दूसरी, तीसरी पक्ति के कोठों में 'क' 'ख' इत्यादि अक्षर भी रख लिये । अब पहली पक्ति के कोठों में क्रमश क्रमसख्या के १ २, ३, ४, ५, ६, अक रख लिये । दूसरी पक्ति के कोठों में क्रमश ६ मात्राओ के रूपों की १, २, ३, ५, ८ और १३ सख्याएँ रखलीं । तीसरी पक्ति के पहले कोठे में १, दूसरे मे २ का अक रख लिया । दूसरे कोठे में 'ज' के अक २ में उसके

ऊपर वाले 'ख' कोठे के रूपाक ३ को जोडो तो ४ हुए अब इस ४ के अ क में 'ज' के बाएँ कोठे 'छ' के अ क १ को जोडा तो योगफल ५ हुआ । इसे दाहिनी ओर के खाली कोठे 'झ' में रखा। इसी रीति से आगे 'ञ' 'ट' 'ठ' कोठों में क्रमश १० २० और ३८ अ क रखे । बस समझलो कि ६ मात्राओं के छद मे ३८ सर्व लघु हैं । इस सर्व लघु के बाई ओर के कोठे 'ट' में २० का अ क है । यह ६ मात्राओ के छद में सर्व गुरु २० हैं।

६ मात्राओं के छन्द में ३८ लघु और २० गुरु है। इनका जोड ५८ हुआ इस से सिद्ध है कि अभीष्ट छन्द मे कुल ५८ वर्ण हैं। और इस छन्द में २० गुरु हैं। इनके दूने करने पर ४० गुरु हुए। इनमें ३८ लघु जोड देने से कुल ७८ मात्राएँ हुई । यदि ६ मात्राओ को इनके रूपाक १३ से गुणा करलें तो भी ७८ मात्राएँ आगई ।

पाताल द्वारा ज्ञात होगया कि ६ मात्राओ के छन्द में रूपाक १३ ,सर्व लघु ३८, सर्व गुरु २०, सर्व वर्ण ५८ और सर्व मात्राएँ ७८ हैं। †

वर्णिक-पाताल की रीति

१ चार पंक्तियों में उतने कोठे बनाओ कि जितनी मात्राओं का छन्द हो।

† ६ मात्राओं के प्रस्तार को देखो।

२. पहली पक्ति के कोठों में दिये हुए छन्द की क्रमसख्याएँ रख दो।

३ दूसरी पक्ति के कोठों में दिये हुए छन्द के रूपांक क्रमश रख दो।

४ तीसरी पक्ति के कोठो में छन्द के रूपाकों के अर्द्धांक क्रमश रख दो।

ये अक लघ्वादि, लघ्वन्त, गुर्वादि और गुर्वन्त सख्या बतलाते हैं।

५ छन्द की क्रमसख्याओं में से प्रत्येक को उसी के नीचे वाले तीसरी पक्ति के अक से गुणा करके गुणनफल को क्रमश चौथी पक्ति के कोठो में रखते जाओ। ये अक गुरु तथा सर्व लघुओ की सख्या बतलाते हैं।

६ चौथी पक्ति के प्रत्येक कोठे के अक का दूना करते जाओ और उसीके नीचे पाँचवीं पक्ति के कोठों मे क्रमश रखते जाओ। बस सर्व वर्णों की संख्या ज्ञात हो जायगी।

७ चौथी पक्ति के प्रत्येक कोठे के अक का तिगुना करते जाओ और उसीके नीचे छठी पक्ति के कोठो मे क्रमश रखते जाओ। बस यही अक सर्वमात्राओं की संख्या बतलाते हैं।

उदाहरण—चार वर्णों के छन्द में कितने रूप, कितने लघ्वादि, कितने लघ्वन्त, कितने गुर्वादि, कितने गुर्वन्त, कितने गुरु, कितने लघु, कितने वर्ण और कितनी मात्राएँ होंगी ?

वर्ण क्रम-सख्या	१	२	३	४	पहली पक्ति
रूप सख्या	२	४	८	१६	दूसरी पक्ति
लघ्वादि लघ्वन्त गुर्वादि, गुर्वन्त	१	२	४	८	तीसरी पक्ति
सर्व गुरु, सर्व लघु.	१	४	१२	३२	चौथी पक्ति
सर्व वर्ण	२	८	२४	६४	पाँचवीं पक्ति
सर्व मात्रा	३	१२	३६	९६	छठी पक्ति

हल—पहली पक्ति में ४ वर्णों की क्रमसख्या १, २ ३, ४ रख ली।

दूसरी पक्ति में रूपसख्याएँ २, ४, ८, १६ रखलीं।

तीसरी पक्ति मे रूप सख्याओं के अर्द्धांक १, २, ४, ८ रख लिये। इन सख्याओं से ज्ञात हो गया कि ४ वर्णों

के वृत्त में ८ लघ्वादि, ८ लघ्वन्त, ८ गुर्वादि, और ८ गुर्वन्त हैं।

पहली पक्ति की क्रम सख्याओं को क्रमश तीसरी पक्ति के अकों से गुणा किया तो क्रमश १, ४, १२, ३२ अक मिले। इन्हें क्रमश चौथी पक्ति के कोठों में रख दिया। इन से स्पष्ट हो गया कि ४ वर्णों के छन्दों मे सर्व गुरु ३२ और सर्व लघु ३२ हैं।

चौथी पक्ति के प्रत्येक अक का दूना किया तो २, ८, २४, ६४ अक मिले। इन्हें क्रमश पाँचवी पक्ति के कोठों मे रख दिया। इससे ज्ञात हो गया कि ४ वर्ण के छन्दों में सर्व वर्ण ६४ हैं।

चौथी पक्ति के प्रत्येक अक का तिगुना किया वो ३, १२, ३६, ९६ अक मिले। इन्हे क्रमश छठी पक्ति के कोठों मे रख दिया तो ज्ञात हुआ कि ४ वर्णों के छन्नों में ९६ सर्व मात्राएँ होगी।

पाताल द्वारा ज्ञात हो गया कि ४ वर्णों के वृत्त में सर्व रूप १६, सर्व आदि लघु ८, सर्व अन्त लघु ८, सर्व आदि गुरु ८, सर्व अन्तगुरु ८, सर्व गुरु ३२, सर्व लघु ३२, सर्व वर्ण ६४ और सर्व मात्राएँ ६६ हैं। (४ वर्णों का प्रस्तार देखो)

७. मेरु

बिना प्रस्तार किये किसी छन्द की सख्या, उन रूपों के

सर्वलघु, एकगुरु, द्विगुरु आदि की सख्या जानने की रीति को 'मेरु' कहते हैं।*

मात्रिक-मेरु की रीति

१ पहले एक कोठा बनाओ। अब उसके नीचे दो दो कोठों की दोहरी इन दोहरे कोठों के नीचे तीन तीन कोठों की दोहरी, और आगे इसी क्रम से नीचे चार चार पाँच पाँच आदि कोठों की दोहरी पक्ति दी हुई मात्राओं तक बनाओ।

२ इन कोठों के भरने की रीति यह है कि पहले कोठे में १ का अक रखो। फिर दाहिने छोर के सब कोठो में नीचे तक एक ही अक रखो और बाएँ छोर के कोठों में अन्त तक क्रमश १, २, १, ३, १, ४ इत्यादि अन्त तक आवश्यकतानुसार अक रखो।

अब—जो कोठे खाली हैं उनके भरने की रीति यह है कि नकशे में दिशा जानने की जो रीति है उसी नियम से खाली

---

* छन्द के रूपों की सख्या रूपों के सर्वलघु, एकगुरु, द्विगुरु आदि की सख्याएँ एकावली और खडमेरु द्वारा भी जानी जा सकती हैं। विस्तारभय से हम यहाँ एकावली और खण्डमेरु की रीति नहीं लिख रहे हैं क्योंकि हमारा उद्देश्य मेरु से ही सिद्ध हो जाता है।

कोठे के ऊपर बाईं ओर वाले कोठे के अंक में उसी के नैऋत्य कोण वाले कोठे के अंक को जोडो और खाली कोठों में रखो। इस तरह खाली कोठे भर जावेंगे।

३ अब सब से नीचे कोठों के नीचे बाएँ छोर से क्रमश गुरु लघु चिन्ह इस प्रकार रखो कि बाएँ छोर वाले कोठे के नीचे दी हुई मात्राओं के बराबर सर्वगुरु चिन्ह रखो। और यदि मात्राओं की सख्या विषम हो तो जितने गुरु बन सकें, बनाकर रखो और इन गुरुओ के आगे एकलघु चिन्ह रख दो। अब इस कोठे के दाहिनी ओर के कोठों के नीचे जो चिन्ह, रखो उनमे क्रमश एक एक गुरु कम करते जाओ और दो दो लघु बढाते जाओ, यहाँ तक कि दाहिने छोर वाले कोठे के नीचे सर्वलघु रूप आ जायगा। अब प्रस्तार का जो रूप जिस कोठे के नीचे रखा है उस कोठे का अक यह बतलाता है कि सर्वलघु, एकगुरु, द्विगुरु आदि रूपो के इतने छन्द होंगे।

४ प्रत्येक पक्ति की बाईं ओर मात्राओं की क्रम सख्या रख लो। और अब प्रत्येक पक्ति के अकों में बाएँ से आरम्भ कर दाहिने छोर तक जोड कर उस पक्ति के सामने दाहिनी ओर रखते जाओ। ये जोड उतनी मात्राओं के छन्दो की रूप सख्या बतावेंगे जो अक क्रमसख्याओं के रूप में पक्तियों के बाएँ छोर पर रखे हैं।

और अब प्रत्येक पंक्ति के अंकों को बाएँ से आरंभ कर दाहिने ओर तक जोड़ कर उसी पंक्ति के सामने दाहिनी ओर रखते जाओ। ये जोड़ उतनी मात्राओं के छन्दों की रूप संख्या बतावेंगे जो अंक सम संख्याओं के रूप में पंक्तियों के बाएँ ओर भर रक्खे हैं।

उदाहरण—६ मात्राओं के छन्दों में रूप-संख्याएँ क्या होंगी? और इन रूपों में सर्वलघु, एक गुरु, द्विगुरु इत्यादि रूपों के छन्दों की संख्याएँ क्या होंगी।

६ मात्राओं का मेरु*

१ मात्रा का छन्द	१				१ रूप संख्या
२ मात्राओं के छन्द	क १	ख १			२ ,,
३ ,,	ग २	घ १			३ ,,
४ ,,	ङ १	छ ३	ज १		५ ,,
५ ,,	झ ३	ट ४	ठ १		८ ,,
६	ड १	ढ ६	त ५	थ १	१३ ,,
	SSS	SS।।	S।।।।	।।।।।।	

* पहले कोठे के नीचे वाले कोठे इस प्रकार बनाओ कि ऊपर के

हल—दिये हुए नियम के अनुसार ६ पंक्तियों में कोठे बना लिये। और समझने की आसानी के लिए कोठों में आवश्यकतानुसार 'क' 'ख' आदि वर्ण भी रख लिये।

अब सब से ऊपर वाले कोठे में १ का अक रखा। दाहिने ओर के सब कोठों में भी १ का ही अक रखा। और बाएँ ओर के कोठो में क्रमश १, २, १, ३, १ अक रखे।

कोठा 'छ' खाली है इस के ऊपर बाई ओर कोठा 'ग' है और इस 'ग' के नैऋत्य कोण मे कोठा 'ख' है। इन दोनों 'ग' और 'ख' कोठों के (२+१) अकों को जोड़ा और जोड के अक ३ को खाली कोठे 'छ' मे रख दिया। अब कोठा 'ट' खाली है। इस के ठीक † ऊपर कोठा 'छ' है। इस कोठे 'छ' के नैऋत्य मे कोठा 'घ' है। इन दोनों (छ+घ) के अकों के जोडने पर (३+१)=४ मिले। इसे कोठा 'ट' में रखा। अब कोठा 'ढ' खाली है। इसके ऊपर बाईं ओर कोठा 'झ' है और 'झ' के नैऋत्य मे कोठा 'छ' है। 'झ+छ' के जोडने पर (३+३)= ६ मिले। इस अक को कोठा 'ढ' में रखा। अब केवल कोठा

कोठों के दाहिने तथा बाएँ ओर की भुजाएँ नीचे के कोठों के बीच बीच में रहें।

† ध्यान रहे कि यदि खाली कोठे के सिर पर एक ही कोठा हो तो उसे ही सिर पर का कोठा मान लिया जायगा। खाली कोठे के बाएँ कोठे की जगह वही प्रयोग में लाया जायगा। जैसा कि ऊपर के मेरु में 'ट' के ऊपर 'छ' है।

'त' खाली है। इसके बाँई ओर ऊपर कोठा 'ट' है और 'ट' के नैऋत्य में कोठा 'ज' है। इन दोनों (ट+ज) के अकों (४+१) को जोड़ा तो ५ मिला। इसे कोठा 'त' में रख दिया।

अब सब से नीचे बाएँ छोर के १ अक वाले कोठे के नीचे ऽऽऽ रूप रखा। इस कोठे से दाहिनी ओर ६ अक वाले दूसरे कोठे के नीचे ऽऽ।। यह रूप रखा। इसी प्रकार ५ अक वाले तीसरे कोठे के नीचे ऽ।।।। और १ अक वाले दाहिनी छोर के चौथे कोठे के नीचे।।।।।। रूप रखा। इससे सिद्ध होगया कि ६ मात्राओं वाले छन्दो में एक छन्द सर्वलघु का होगा, ५ छन्द ऐसे होंगे जिनमें १ गुरु और ४ लघु रहेंगे, ६ छन्द ऐसे होंगे जिनमे २ गुरु २ लघु रहेंगे और एक छन्द ऐसा होगा जिसमें ३ गुरु रहेंगे।

पहली पक्ति में एक कोठा है जिसमें १ अक है इससे सिद्ध है कि १ मात्रा की रूप सख्या १ ही है। दूसरी पक्ति मे 'क, ख' कोठो के अकों का जोड (१+१)=२ है, इसी तरह तीसरी पक्ति के कोठों के अकों का जोड ३, चौथी पक्ति के कोठो के अकों का जोड ५, पाँचवीं पक्ति के कोठों के अकों का जोड ८ और छठी पक्ति के कोठो के अकों का जोड़ १३ है। अत सिद्ध होगया कि ६ मात्राओं के छन्दो की रूप सख्या १३ है।

दिये हुए प्रश्न का पूरा उत्तर इस प्रकार हुआ कि ६ मात्राओं के छन्दों मे रूप सख्या १३ होगी और इन रूपों मे

एक छन्द सर्वलघु का होगा, ५ छन्द ऐसे होंगे जिनमें १ गुरु ४ लघु रहेंगे, ६ छन्द ऐसे होंगे जिनमें २ गुरु २ लघु रहेंगे और एक छन्द ऐसा होगा जिसमें तीनों ही गुरु रहेंगे। +

वर्णिक मेरु की रीति

१ जितने वर्णों का मेरु बनाना हो उससे एक अधिक कोठों की पंक्ति बनाओ। ये सब से नीचे की पंक्ति होगी। अब इस पंक्ति के कोठों से एक कोठा कम करके इसके ऊपर एक पंक्ति और बनाओ। इसी प्रकार एक एक कोठा कम करते हुए क्रमशः पंक्तियाँ बनाते जाओ। जब दो कोठों की पंक्ति बने तब उसे ही ऊपर की पहली पंक्ति मान लो। ‡

२ इन कोठों में अंक भरने की रीति यह है कि पहली पंक्ति के दोनों कोठों में और शेष सब पंक्तियों के दाहिने और बाएँ छोर के कोठों में १ का अंक रखो। अब ऊपर से खाली कोठों को इस भाँति भरो कि प्रत्येक खाली कोठे के ऊपर के †

+ ६ मात्राओं का प्रस्तार देखो।

‡ ध्यान रहे कि दो दो कोठों पर ऊपर वाला कोठा इस भाँति बनाया कि उसकी दाहिनी और बाईं भुजाएँ नीचे वाले कोठों के बीच में रहें।

† मेरु को ध्यान से देखने से समझ में आजायगा कि हर नीचे के कोठे के ऊपर केवल ऐसे ही दो कोठे ही हैं जिनको इस कोठे की दोनों भुजाएँ स्पर्श करती हैं।

दोनो कोठो के अ'कों को जोड लो और इस खाली कोठे मे रख दो। इस रीति से सब खाली कोठे भर जावेंगे।

३ अब सबसे नीचे की पक्ति के कोठो के नीचे बाएँ छोर से क्रमश गुरु लघु चिन्ह इस प्रकार रखो कि बाईं ओर के छोर वाले कोठे के नीचे दिये हुए वर्णों के बराबर सर्वगुरु चिन्ह रखो, अब इस कोठें से दाहिनी ओर के कोठों के नीचे जो चिन्ह रखो उनमे क्रमश एक एक गुरु कम करते जाओ और एक-एक लघु बढाते जाओ । यहाँ तक कि दाहिने छोर वाले कोठे के नीचे सर्व लघु रूप आजायगा। अब इस प्रस्तार का जो रूप जिस कोठे के नीचे रखा है उस कोठे का अ क यह बतलाता है कि सर्वलघु, एक गुरु, द्विगुरु इत्यादि के रूपों के इतने छन्द होंगे।

४, प्रत्येक पक्ति की बाईं ओर वर्णों की क्रम-सख्याओं के अ क रख दो और बाएँ छोर के कोठे से लेकर दाहिने छोर के कोठे तक के अ कों को जोड कर दाहिनी ओर उसी पक्ति के सामने रखते जाओ यह रूप सख्या होगी।

उदाहरण—४ वर्णों के छन्दों मे रूपों की सख्या क्या होगी ? और इन रूपों में सर्वलघु, एक गुरु, द्विगुरु इत्यादि रूपों के छन्दों की सख्याएँ क्या होंगी ?

४ वर्ण का मेरु

क्रम-संख्याएँ						रूप संख्याएँ
१	क १	ख १				२
२	ग १	घ २	च १			४
३	छ १	ज ३	झ ३	ट १		८
४	ठ १	ड ४	ढ ६	त ४	थ १	१६
	SSSS	SSSI	SSII	SIII	IIII	

हल—दिये हुए नियम के अनुसार ४ पक्तियों के कोठे बना लिये । समझने की आसानी के लिए आवश्यकतानुसार इन पंक्तियों में 'क' 'ख' इत्यादि वर्ण भी रख लिये ।

अब पहली पक्ति के कोठों में १ का अक रख दिया । और शेप पक्तियों के दाहिने, बाँए छोर के कोठों में भी १ का ही अक रख दिया । अब सब से ऊपर 'घ' खाली कोठा है । इस के ऊपर 'क, ख' दो कोठे हैं इन के अकों (१+१) का जोड़ २ है । इसे 'घ' कोठे में रख दिया । इसी तरह 'ग घ' का जोड़ ३ 'ज' में 'घ, च' का जोड़ ३ 'झ' में 'छ, ज' का जोड़ ४ 'ड' में 'ज, झ' का जोड़ ६ 'ढ' में और 'झ, ट' का जोड़ ४ 'त' खाली कोठे में रखा ।

अब नीचे की पंक्ति के बाएँ ओर के १ अक वाले कोठे के नीचे ऽ ऽ ऽ ऽ रूप रखा । इस कोठे के दाहिनी ओर के कोठों के नीचे क्रमश ऽ ऽ ऽ ।, ऽ ऽ । ।, ऽ । । ।, । । । । रूप रखे । इस से सिद्ध हुआ कि ४ वर्णों के छन्द मे एक छन्द सर्वलघु का होगा, चार छन्द ऐसे होंगे जिन में १ गुरु ३ लघु होंगे, ६ छन्द ऐसे होंगे जिन में २ गुरु, २ लघु होंगे, ४ छन्द ऐसे होंगे जिन में ३ गुरु १ लघु होगा और एक छन्द ऐसा होगा जिस में चारों ही गुरु होंगे।

प्रत्येक पक्ति के अकों को जोड़ने से २, ४, ८, १६ अक मिले । इन्हें क्रमश इन पक्तियों के सामने दाहिनी ओर रख दिया। अत ४ वर्णों की रूप सख्या १६ हुई।

इस तरह मेरु द्वारा ज्ञात हो गया कि ४ वर्णों के छन्दों की रूप-सख्या १६ होगी । और इन १६ रूपों मे १ छन्द सर्व लघु का होगा, ४ छन्द ऐसे होंगे जिनमें १ गुरु ३ लघु होंगे, ६ छन्द ऐसे होंगे जिन में २ गुरु २ लघु होंगे, ४ छन्द ऐसे होंगे जिनमे ३ गुरु एक लघु होगा और एक छन्द ऐसा होगा जिसमें चारों ही गुरु होंगे।*

८. पताका

छन्दो में एक गुरु द्विगुरु आदि रूपों की सख्याएँ जो मेरु द्वारा प्रकट होती हैं । प्रस्तार श्रेणी में उन का स्थान बनाने की रीति को 'पताका' कहते हैं।

---

* ४ वर्ण का प्रस्तार देखो ।

मात्रिक पताका की रीति

१ दिये हुए छन्द की मात्राओं के बराबर खडी पंक्ति में कोठे[१] बनाओ। और इन कोठों मे नीचे की ओर से क्रमश सूची-अंक[२] रख दो। इस प्रकार ऊपर के कोठे में सूची का अन्तिम अंक (पूर्णांक) रहेगा। अब ऊपर के कोठे की बाईं ओर एक कोठा बनाओ और अब नीचे की ओर सूची-अंक वाले एक कोठे को छोड़ कर उस के नीचे वाले कोठे की बाईं ओर फिर एक कोठा बनाओ। इसी प्रकार नीचे की ओर क्रमश एक एक कोठा छोड़ते हुए ऊपर वाले कोठों की तरह बाईं ओर जितने कोठे बनसकें बनालो। परन्तु सूची-अंक वाले सब से नीचे के कोठे की बाईं ओर तो जरूर एक कोठा बनाना ही होगा। क्योंकि सर्वलघु की तरह गुरुओं का यह अन्तिम रूप होगा। इन कोठों में मेरु-अंक इस प्रकार रखो—ऊपर के कोठे में सर्वलघु रूपों का मेरु अंक रखो और अब नीचे की ओर क्रमश एक गुरु, द्विगुरु इत्यादि रूपों के मेरु-अंक रखो। और इसी क्रम से इन के गुरु लघु रूप भी इन कोठों की बाईं ओर रख दो।

---

१ यह पंक्ति पताका का दण्ड है।

२ छन्दों की रूप सख्या को सूची-अंक भी कहते हैं।

२ जिन कोठों में मेरु अंक रखे हुए हैं उन की दाहिनी[1] ओर आडी पंक्ति में मेरु-अंक की संख्या के बराबर कोठे[1] बनालो। इन कोठों में अंक इस प्रकार भरो कि जिस पंक्ति के कोठे भरने हैं उस के सूची अंक से लेकर नीचे तक के सब सूची अंक क्रमशः उस ऊपर वाले सूची-अंक में से घटाते जाओ कि जिस की बाईं ओर मेरु का अंक रखा हो। और शेषांकों को क्रमशः इन खाली कोठों में दाहिनी ओर रखते जाओ। और यदि कोठे भरने से बाकी रह जावें तो ऊपर वाली भरी गई पंक्ति के प्रत्येक कोठे के अंक में से उन्हीं सूची अंकों को—जो ऊपर के सूची अंक में से घटाये जा चुके हैं—फिर क्रमशः घटाते जाओ, और शेषांक आगे रखते जाओ। अन्त में सब खाली कोठे भर जावेंगे। परन्तु इस बात का ध्यान रहे कि जो अंक ऊपर के किसी कोठे में एक बार आ चुका है वह आगे के कोठों में न रखा जायगा। बस मेरु के अंकों की स्थानीय संख्याएँ ज्ञात हो जायँगी।

उदाहरण—६ मात्रा वाले १३ छन्दों में से एक छन्द सर्वलघु का, पाँच छन्द ऐसे जिनमें एक गुरु, छ छन्द ऐसे

---

१. सूची अंक वाला कोठा भी आड़ी पंक्ति वाले कोठों की गणना में शामिल है। इसीलिए ऊपर वाले कोठे के दाहिनी ओर कोठा नहीं खींचा गया क्योंकि प्रस्तार का अंतिम रूप सर्वलघु एक ही होता है। (देखो पताका)

जिनमें दो गुरु और एक छन्द ऐसा जिसमें त्रिगुरु रहेंगे। प्रस्तार में इन छन्दों के स्थान कहाँ होंगे ? अर्थात् इनको स्थानीय सख्याएँ क्या होंगी ?

।।।।।।	१ त	१३ क					
		८ ल					
S।।।।	५ थ	५ ख	८ च	१० छ	११ ज	१२ झ	
		३ म					
SS।।	६ द	२ ग	३ ट	४ ठ	६ ड	७ ढ	९ ण
SS	१ ध	१ घ					

गुरु इत्य॥५

इन के गुरु लघु-दिये हुए छन्दों की मात्राएँ ६ हैं। खड़ी पंक्ति में

लिखे। इन कोठों में नीचे की ओर से क्रमश

—गोठा 'थ' वनाया। इसी क्रम से कोठे 'म' को छोड़ 'ग' की बाई ओर कोठा 'द' वनाया अब सवसे नीचे के सूची अ क वाले कोठे 'घ' की वाई ओर भी एक कोठा 'ध बनाया।

ऊपर के कोठें 'त' में १, 'थ' मे ५, 'द' में ६, और 'ध' में १ का अ क रख दिया। ये सब मेरु-अ क हैं। 'त' कोठे वाला अ क सर्वलघु का सूचक है। आगे 'थ, द, ध' कोठों वाले अ क क्रमश एक गुरु, द्विगुरु, त्रिगुरु आदि के सूचक हैं जो इन कोठों के बाएँ रखे हुए रूपों से प्रकट हैं।

कोठे 'त' की दाहिनी ओर केवल एक ही कोठा वनाना चाहिए, क्योंकि सर्वलघु की मेरु-सख्या १ है। 'त' कोठे की दाहिनी ओर एक कोठा 'क' बना हुआ है इसलिए इससे आगे कोठा बनाने की जरूरत नहीं है। 'थ कोठे की दाहिनी ओर 'ख' समेत 'च, छ, ज, झ' पाँच कोठे बना लिये। इसी प्रकार कोठे 'द' की दाहिनी ओर 'ग' समेत 'ट, ठ, ड, ढ, ण' ये छ कोठे बना लिये। 'ध' × की दाहिनी ओर एक कोठा 'घ' बना हुआ ही है। बनाने की जरूरत नहीं है क्योंकि सर्व गुरु का भी तो एक ही रूप होगा।

मेरु अक वाले कोठे 'त' के आगे 'क' कोठे में १३ का अक रखा ही है, भरने की कोई जरूरत ही नहीं है। हाँ, 'थ' कोठे के आगे के 'च, छ, ज, झ' कोठे खाली हैं। उनमें सख्याएँ भरनी हैं। ∴ एक गुरु के मेरु अक वाले 'थ' कोठे के ऊपर सूची-अक १३ है। इसमें से क्रमश 'ख, म, ग, घ' कोठों के अक

५, ३, २, १ घटा लिये तो ८, १०, ११, १२ शेष बचे। इन्हें क्रमश बाईं ओर से खाली कोठों में रख दिया। इसी प्रकार द्विगुरु वाली पताका के कोठे 'ट' की दाहिनी ओर वाले 'ट, ठ ड, ढ, ण' खाली हैं। खाली कोठों के ऊपर के सूची अक 'ख' के ५ में से कोठे 'ग' के २ को तथा कोठे 'घ' के १ को घटाने से क्रमश ३ तथा ४ अक मिले। इन्हे क्रमश 'ट, ठ' कोठों मे क्रमश रख दिया। अभी कोठे 'ड, ढ, ण खाली हैं। १ गुरु वाली पताका के कोठे 'च' के ८ मे से कोठे 'ग' के २ को घटाया तो अक ६ मिला। इसे कोठा 'ड' में रखा। फिर कोठे 'च' के ८ मे से कोठे 'घ' के १ को घटाया तो ७ बचे इसे कोठे 'ढ' में रखा। अब कोठे 'छ के १० में से कोठे 'ग' के २ को घटाया तो ८ मिले। यह अक कोठा 'च' में आ चुका है इसलिए इसे छोड दिया। अब कोठे 'छ' के १० मे से कोठे 'घ' के १ को घटाया तो अक ९ मिला। इसे कोठे 'ण' मे रख दिया। अब तीसरी त्रिगुरु वाली पताका भरने के लिए कोठे 'ग' के २ में से कोठे 'घ' के १ के घटाने की जरूरत नहीं है क्यों कि सम संख्या वाले छन्दों में पहला रूप सर्वगुरु का होता ही है। जैसा कि 'घ' कोठे में रखा हुआ १ का अक प्रकट कर रहा है।

इस पताका से ज्ञात हो गया कि ६ मात्रा वाले १३ छन्दों में से तेरहवाँ रूप सर्वलघु का होगा। पाँचवाँ, आठवाँ,

दसवाँ, ग्यारहवाँ, तथा बारहवाँ रूप एक गुरु का, दूसरा, तीसरा, चौथा, छठा, सातवाँ, नवाँ, रूप द्विगुरु का और पहला रूप त्रिगुरु अर्थात् सर्वगुरु का होगा। *

वर्णिक पताका की रीति

१ जितने वर्णों की पताका बनानी हो उसके मेरु अंकों की मेरु-संख्या के बराबर खड़ी पंक्ति में कोठे बनाओ। अब इन कोठों में ऊपर की ओर से सर्वलघु, एक गुरु, द्विगुरु आदि की मेरु-संख्याएँ क्रमशः रख दो। और इन कोठों के बाहर बाईं ओर सर्वलघु, एक गुरु, द्विगुरु आदि शब्दों में भी लिख दो और उन के रूप भी रख दो। अब इन मेरु अंक वाले कोठों की दाहिनी ओर ऊपर से दूसरी खड़ी पंक्ति में उतने कोठे बनाओ जितने रूपांक इन वर्णों के हों। और इन कोठों में नीचे से ऊपर की ओर रूपांक क्रमशः रख दो। ध्यान रहे कि अन्तिम रूपांक सब से ऊपर के कोठे में रहेगा। जिन कोठों में मेरु अंक रखे हुए हैं उन की दाहिनी ओर पड़ी पंक्ति में मेरु अंकों की संख्या के बराबर कोठे बनाओ। †

* ६ मात्राओं का प्रस्तार देखो।

† सूची अंक वाला कोठा भी पड़ी पंक्ति वाले कोठों की गणना में शामिल है। इसीलिये ऊपर के मेरु-अंक वाले कोठे का दाहिनी ओर कोठा नहीं खींचा गया। क्योंकि प्रस्तार का अन्तिम रूप सर्वलघु एक ही होता है। ४ वर्ण का प्रस्तार देखो।

२ इन कोठो में अ क इस प्रकार भरो कि जिस पक्ति के कोठे भरने हैं उस के सूची-अ क को छोड़ कर नीचे के सब सूची-अ क क्रमश ऊपर वाले सूची-अ क में से घटाते जाओ। और शेषाकों को क्रमश इन खाली कोठों मे दाहिनी ओर रखते जाओ । और जो कोठे भरने से शेष रह जावें तो ऊपर वाली भरी गई पताका की पक्ति के प्रत्येक कोठे के अ क में से उन्हीं सूची अ कों को क्रमश घटाते जाओ जो ऊपर के सूची-अ क में से घटाये जा चुके हैं। और इस तरह जो शेषाक मिले उन्हें आगे के खाली कोठो में रखते जाओ । अन्त में सब खाली कोठे भर जावेंगे । परन्तु शेषाकों को खाली कोठो में रखते समय इस बात का ध्यान रखो कि जो अ क ऊपर के किसी कोठे में एक वार आ चुका है वह आगे के कोठों में न रखा जावे बस पताका बन जायगी।

उदाहरण—४ वर्णों के १६ छन्दों में से एक छन्द सर्व-लघु का, ४ छन्द ऐसे जिनमे एक गुरु, ६ छन्द ऐसे जिनमें दो गुरु, ४ छन्द ऐसे जिनमें तीन गुरु और एक छन्द ऐसा जिसमें चार गुरु (सर्वगुरु) रहेंगे । प्रस्तार मे इन छन्दों के स्थान कहाँ होंगे ? अर्थात् इनकी स्थानीय सख्याएँ क्या क्या होंगी ?

४ वर्ण की पताका

।।।। सर्वलघु	क १	च १६					
ऽ।।। एक गुरु	ख ४	ट ८	ठ १२	ड १४	ढ १५		
ऽऽ।। द्विगुरु	ग ६	त ४	थ ६	द ७	ध १०	न ११	ल १३
ऽऽऽ। त्रिगुरु	घ ४	प २	फ ३	ब ५	भ ६		
ऽऽऽऽ चतुर्गुरु	ङ १	य १					

क्रिया—४ वर्ण की मेरु सख्याएँ १, ४ ६, ४, १ हैं। इन्हें क्रमश क, ख ग, घ, ङ कोठों मे रख दिया और इन मेरु-सख्या वाले कोठों की बाईं ओर सर्वलघु, एक गुरु, द्विगुरु आदि रूप ऊपर की ओर से क्रमश रख दिये और शब्दों में भी लिख दिये। अब मेरु अक वाले कोठों की दाहिनी ओर नीचे से ४ कोठे खड़ी पक्ति मे बना दिये इनमें नीचे से ही क्रमश २, ४, ८, १६ रूपाक रख दिये। सबसे ऊपर वाले कोठे 'च' मे १६ रूपाक रखा गया।

अब कोठे 'क की दाहिनी ओर कोठा बनाने की जरूरत नहीं क्योंकि सर्वलघु का एक ही रूप होगा और दाहिनी ओर एक कोठा 'च' बना ही हुआ है। 'ख' कोठे की दाहिनी ओर 'ट' समेत 'ठ, ड, ढ' चार कोठे बना लिये। इसी प्रकार 'ग'

कोठे की दाहिनी ओर 'त' समेत 'थ, द, ध, न, ल' ये छ कोठे बना लिये। इसी प्रकार कोठे 'घ' की दाहिनी ओर 'प' समेत 'फ, ब, भ' चार कोठे बना लिये और 'ङ' की दाहिनी ओर एक कोठा 'य' बना लिया।

मेरु-अक वाले 'ख' कोठे की दाहिनी ओर 'ठ, ड, ढ' कोठे खाली हैं। 'ट' के ऊपर वाले सूची-अक 'च' १६ में से 'त, प, य' कोठों के अक घटाये तो क्रमश १०, १४, १५, अक मिले। इन्हें क्रमश 'ट, ड, ढ' कोठों में रख दिया।

मेरु-अंक वाले 'ग' कोठे को दाहिनी ओर 'थ, द, ध, न, ल' कोठे खाली हैं। 'त' के ऊपर 'ट' कोठा है इसके अंक ८ मे से 'म, य, के अंक २, १ को घटाया तो क्रमश ६ ७ अक मिले। इन्हें क्रमश 'थ द' में रखा। अब नियमानुसार 'ठ' के अक १२ मे से 'प, म' के २, १ को घटाया तो १०, ११ मिले। इन्हें 'ध, न' मे रखा। अब 'ड' के अंक १४ मे से 'प, य' के २, १ को घटाया तो १०, १३ मिले। १० अक 'ठ' कोठे में आ चुका है। इसे छोड दिया। अक १३ को 'ल' कोठे में रखा। यह पताका पूरी हो गई।

अब त्रिगुरु पताका के खाली कोठे भरने के लिए 'त' के ४ मे से 'म' के १ को घटाया तो ३ मिले। इस अक को 'फ' में रख दिया। अब 'थ' के ६ में से 'य' के १ को घटाया तो ५ मिले। इसको 'ब' में रखा। 'द के ७ में से 'य' के १ को घटाने पर ६ मिले। यह अक 'थ' मे आ चुका है।

इसे छोड़ दिया । 'ध' के १० में से 'य' के १ को घटाने पर ६ आया यह अंक 'भ' में रख दिया । यह पताका भी पूरी होगई ।

सर्व गुरु का एक ही रूप होता है इसलिए कोठे 'य' में १ अंक रख दिया । बस अब पताका पूरी हो गई ।

अब यह पताका बतला रही है कि ४ वर्णों के १६ छन्दों में से सोलहवाँ रूप सर्व लघु का होगा। आठवाँ, बारहवाँ, चौदहवाँ तथा पन्द्रहवाँ रूप १ गुरु का, चौथा, छठा, सातवाँ दसवाँ, ग्यारहवाँ तथा तेरहवाँ रूप द्विगुरु का, दूसरा, तीसरा, पाँचवाँ तथा नौवाँ रूप त्रिगुरु का और पहला रूप चतुर्गुरु (सर्वगुरु) का होगा । †

६ मर्कटी

जिस क्रिया द्वारा छन्द, मात्रा, वर्ण, लघु, गुरु तथा पिंड की समग्र संख्याएँ ज्ञात होती हैं उसे 'मर्कटी' कहते हैं ।

मात्रिक मर्कटी की रीति

१ जितनी मात्राओं की मर्कटी बनानी हो उतनी ही पंक्तियों में खड़े कोठे बनाओ । और इन कोठों को काटती हुई रेखाओं से सात पड़ी पंक्तियों में कोठे बनाओ । अब पड़ी पंक्तियों वाले कोठों की बाईं ओर पहली पंक्ति के सामने मात्रा

---

† ४ वर्णों का प्रस्तार देखो ।

की क्रम सख्या, दूसरी पक्ति के सामने भेदाक×, तीसरी पक्ति के सामने सर्वकला, चौथी के सामने गुरु, पाँचवीं के सामने लघु, छठी के सामने वर्ण तथा सातवीं के सामने 'पिण्ड' शब्द लिख दो।

२ अब पडे कोठे वाली पक्तियाँ इस प्रकार भरो कि पहली पक्ति के कोठो मे १, २, ३, ४ इत्यादि दिये हुए छन्द की क्रम सख्याएँ रखदो। दूसरी पक्ति के कोठों मे सूची के अक १, २, ३, ५ इत्यादि रख दो। तीसरी पक्ति के (सर्व कला वाले) कोठे इस प्रकार भरो कि पहली (क्रमाक) तथा दूसरी (भेदाक) पक्ति के ठीक ऊपर नीचे वाले कोठों के अकों के गुणनफलो को तीसरी पक्ति के (सर्वकला वाले) कोठों में रख दो। अब चौथी पक्ति के (गुरु वाले) कोठे इस प्रकार भरो कि बाईं छोर के कोठे मे शून्य और उससे आगे दाहिनी ओर वाले दूसरे कोठे में १ का अक रखो। अब आगे के कोठे इस प्रकार भरो कि खाली कोठे की बाई ओर वाले कोठे के अक का दूना करके इस अक को उसी कोठे के ऊपर वाले (सर्वकला वाले) कोठे के अक मे से घटावे। घटाने पर जो अंक मिले उसे खाली कोठे में रखदे। पाँचवीं पक्ति के (लघु वाले) कोठे इस प्रकार भरो कि चौथी पक्ति के (गुरु वाले) कोठों के अकों को दूना करलो और तीसरी पक्ति के (सर्वकला वाले) कोठों मे से

× इसे सूची अक भी कहते हैं।

इन्हे क्रमश घटादो, घटाने पर जो अक मिले उन्हे क्रमश पाँचवीं पक्ति के (लघु वाले) कोठों में रखदो । छठवीं पक्ति के (वर्ण वाले) कोठे इस प्रकार भरो कि चौथी (गुरु वाली) तथा पाँचवीं (लघु वाली) पक्ति के ऊपर नीचे वाले कोठों के अकों को जोड ले । और इन के जोड को छठी पक्ति के (वर्ण वाले) कोठों में क्रमश रखदो । अब सातवीं पक्ति के (पिण्ड वाले) कोठे इस प्रकार भरो कि तीसरी पक्ति के (सर्व कला वाले) कोठों के अर्द्धाङ्को को क्रमश सातवीं पक्ति के (पिण्ड वाले) कोठों मे रखदो । परन्तु ध्यान रहे कि इस पक्ति के बाएँ छोर वाले कोठे में शून्य ही रखा जायगा। बस 'मर्कटी' तैयार हो जायगी ।

उदाहरण—६ मात्राओ के छन्दों मे कुल कितने छन्द, कितनी मात्राएँ, कितने वर्ण, कितने गुरु, कितने लघु और कितने पिण्ड होंगे ?

६ मात्राओं की मर्कटी

१ मात्राओं की क्रमसंख्याएँ	१	२	३	४	५	६
२ भेदांक	१	२	३	५	८	१३
३ सर्वकला	क १	ख ४	ग ९	घ २०	ङ ४०	च ७८
४ गुरु	छ ०	ज १	झ २	ञ ५	ट १०	ठ २०
५ लघु	ड १	ढ २	ण ५	त १०	थ २०	द ३८
६ वर्ण	ध १	न ३	प ७	फ १५	व ३०	भ ५८
७ पिण्ड	म २	य २	र ४१	ल १०	व २०	स ३६

क्रिया—दिये हुए नियम के अनुसार कोठे बना लिये। अब पड़ी पंक्तियों वाले कोठों की बाईं ओर पहली पंक्ति के कोठों के सामने क्रमसंख्या, दूसरी के सामने भेदांक, तीसरी के सामने सर्वकला, चौथी के सामने गुरु, पाँचवीं के सामने लघु, छठी के सामने वर्ण तथा सातवीं के सामने 'पिण्ड' शब्द लिख दिये।

अब नियमानुसार पहली पडी पंक्ति वाले कोठों में बाईं ओर से १, २, ३, ४, ५, ६ क्रम संख्याएँ रख दी। और दूसरी पंक्ति के कोठों में १, २, ३, ५, ८, १३ भेदांक रख दिये।

अब तीसरी पंक्ति के कोठे इस प्रकार भरे कि पहली पंक्ति के १, २, ३, ४, ५, ६ इन क्रमांकों को दूसरी पंक्ति के १, २, ३, ५, ८, १३, भेदांकों से क्रमश गुणा किया तो १ × १, २ × २, ३ × ३, ४ × ५, ५ × ८, ६ × १३ = १, ४, ९, २०, ४०, ७८ अंक गुणन फल के मिले। इन मे से कोठे 'क' में १, 'ख' में ४ 'ग' में ९, 'घ' मे २० 'ङ' मे ४० और 'च' मे ७८ का अंक रखा। ये सवक्ला के रूप निकल आये।

अब चोथी पंक्ति के कोठे इस प्रकार भरे गये कि बाईं ओर से पहले कोठे 'छ' में ० तथा 'ज' में १ अंक रखा। अब खाली कोठे 'झ' के बाएँ कोठे 'ज' में अंक १ है इसका दूना किया तो १ × २ = २ अंक मिला। इस २ का शीर्षांक 'ख' कोठे में अंक ४ है ४ मे से अंक २ घटाया तो ४ - २ = २ शेष रहा। इसे 'झ' में रखा। इसी क्रिया के अनुसार 'झ' के २ को २ से गुणा कर अंक ४ प्राप्त किया इसे अपने शीर्षांक 'ग' के ९ में से घटाने पर ५ मिला इसे 'ञ' मे रखा। इसी तरह 'ञ' के ५ × २ 'घ' शीर्षांक २० में से घटाया तो २० - १० = १० शेष रहा इसे 'ट' में रखा। और 'ट' के १० × २ को शीर्षांक 'ङ' के ४०

मे से घटाया तो ४०–२० = २० शेप रहा इसे 'ठ' मे रखा। बस गुरुओं की सख्या ज्ञात हो गई।

पाँचवीं पक्ति के कोठे इस तरह भरे कि कि चौथी पक्ति के कोठो के अक ०, १, २, ५, १०, २० को दूना किया तो क्रमश ०, २, ४, १० २०, ४० अक मिले। इन्हें तीसरी पक्ति के अंक १, ४, ६, २०, ४०, ७८ मे से घटाया तो १, २, ५, १०, २०, ३८ अक शेप रहे। इन्हें क्रमश बाईं ओर से 'ड, ढ, ण, त, थ, द' कोठों मे रख दिया। इस तरह लघुओं की सख्या ज्ञात हो गई।

छठी पक्ति के कोठे इस तरह भरे गये कि चौथी पक्ति के ०, १, २, ५, १०, २० में पाँचवीं पक्ति के १, २, ५, १०, २०, ३८, अको को जोडा तो क्रमश १, ३, ७, १५, ३० और ५८ अंक मिले। इन्हे छठी पक्ति के ध, न, प, फ, ब, भ में बाईं ओर से क्रमश रख दिया। इस तरह वर्णों की सख्या ज्ञात हो गई।

अब सातवी पक्ति के कोठे भरने के लिए तीसरी पक्ति के १, ४, ९, २०, ४०, और ७८ अकों के आधे किये तो ½, २, ४½, १०, २०, और ३९ अक मिले। इनको बाई ओर क्रमश म, य, र, ल, व, और स कोठों में रख दिया। बस पिंड सख्या भी ज्ञात हो गई।

इस तरह इस मर्कटी से स्पष्ट हो गया कि ६ मात्राओं के कुल १३ छन्द होते हैं। इन छन्दों में कुल ७८ मात्राएँ होती है, इन मे २० गुरु, और ३८ लघु होते हैं, कुल ५८ वर्ण और ३९ पिण्ड होते हैं।*

वर्णिक मर्कटी की रीति

१ जितने वर्णों की मर्कटी बनानी हो उतनी ही खड़ी पंक्तियों में कोठे बनाओ। और इन कोठों को काटती हुई रेखाओं से सात पड़ी पंक्तियो में कोठे बनाओ। अब पड़ी पंक्तियो वाले कोठो की बाई ओर पहली पंक्ति के सामने वर्णों की क्रम-संख्या, दूसरी के सामने भेद-संख्या तीसरी के सामने सर्वकला, चौथी के सामने वर्ण, पाँचवीं के सामने गुरु, छठो के सामने लघु तथा सातवीं के सामने पिण्ड शब्द लिख दो।

२ अब पड़ी पंक्तियों वाले कोठे इस प्रकार भरो कि पहली पंक्ति के कोठों में बाई ओर से १, २, ३ इत्यादि दिये हुए वर्णों की क्रम संख्याएँ रख दो। दूसरी पंक्ति के कोठो मे सूची के अंक २, ४, ८, १६ इत्यादि रख दो। चौथी पंक्ति के कोठे इस तरह भरो कि पहली (क्रम संख्या वाली) तथा दूसरी

* ६ मात्राओं का प्रस्तार देखो।

(भेदाङ्क वाली) पङ्क्ति के तले-ऊपर वाले कोठों के अंकों के गुणन फलो को चौथी पक्ति के (वर्ण वाले) कोठो में बाईं ओर से क्रमश रखदो। पाँचवीं पक्ति के (गुरु वाले) कोठे इस प्रकार भरो कि चौथी पक्ति के (वर्ण वाले) कोठों के अंकों को आधा करके पाँचवीं पक्ति के (गुरु वाले कोठों में रखदो। छठी पक्ति के (लघु वाले) कोठों में क्रमश वे ही अंक रखलो जो (गुरु वाले) पाँचवीं पक्ति के कोठों में रखे हैं * सर्वकला वाले तीसरी पक्ति के कोठे इस तरह भरो कि पाँचवीं पक्ति के गुरुओ के अकों के दूने में छठी पक्ति के लघुओं को तले-ऊपर के क्रम से जोड लो, और इनके योगफल को बाईं ओर से क्रमश तीसरी पक्ति के कोठों में रख दो। सातवीं पक्ति के पिण्ड वाले कोठों के भरने के लिए तीसरी पक्ति के (सर्वकला वाले) कोठो के अंकों को आधा-आधा करके बाईं ओर से क्रमश सातवीं पक्ति के कोठों में रखदो। बस 'मर्कटी' तैयार हो जायगी।

उदाहरण—४ वर्णों के कुल कितने छन्द होंगे, कितनी मात्राएँ, कितने वर्ण, कितने गुरु, कितने लघु और कितने पिण्ड होंगे?

---

* वर्णिक छन्दों में प्रत्येक वर्ण के दो ही रूप होते हैं एक गुरु और दूसरा लघु रूप। इस से जो सख्या गुरुओं की होगी वही लघुओं की भी होगी।

४ वर्णों की मर्कटी

१ वर्णों की क्रम संख्याएँ	१	२	३	४
२ भेद-संख्याएँ	२	४	८	१६
३ सर्वकला,	क ३	ख १२	ग ३६	घ ९६
४ सर्ववर्ण	च २	छ ८	ज २४	झ ६४
५ गुरु	ट १	ठ ४	ड १२	ढ ३२
६ लघु	त १	थ ४	द १२	ध ३२
७ पिण्ड	प १३	फ ६	ब १८	भ ४८

क्रिया—नियमानुसार कोठे बनाकर पड़ी पंक्ति वाले कोठो की पहली पंक्ति की बाईं ओर वर्णों की क्रम संख्या, दूसरी की बाईं ओर भेदांक, तीसरी की बाईं ओर सर्वकला, चौथी की बाईं ओर वर्ण, पाँचवीं की बाईं ओर गुरु, छठी की बाईं ओर लघु तथा सातवीं की बाईं ओर 'पिण्ड' शब्द लिख दिये।

अब नियमानुसार पड़ी पक्ति वाले पहली पक्ति के कोठो में वर्णों की १, २, ३, ४ क्रम सख्याएँ लिख दीं। दूसरी पक्ति के कोठो में क्रमश २, ४, ८, १६ भेदाक रख दिये। अब चौथी पक्ति के कोठे इस प्रकार भरे कि पहली पक्ति के १, २, ३ ४ क्रमांकों को दूसरी पक्ति के २, ४, ८, १६ भेदाकों से क्रमश गुणा किया तो गुणनफल मे २, ८, २४, ६४ मिले। इन अकों को 'च, छ, ज, झ' कोठो मे बाई ओर से क्रमश रख दिया। अब पाँचवों पक्ति के (गुरु वाले) कोठे इस प्रकार भरे कि चौथी पक्ति वाले कोठों के २, ८, २४, ६४ अकों के आधे आधे किये तो क्रमश १, ४, १२, ३२ अक मिले। बाई ओर से क्रमश इन्हें 'ट, ठ, ड, ढ,' कोठों में रख दिया। यही सख्याएँ लघुओ की भी होंगी इसलिए छठी पक्ति के 'त, थ, द, ध' कोठों में भी ज्योकी त्यो यही सख्याएँ रखलीं।

अब पाँचवी पक्ति के गुरु अंकों के दूने† १×२, ४×२ १२×२, ३२×२ अर्थात् २, ८, २४, ६४ मे छठी पंक्ति के १, ४, १२, ३२ लघुओं को जोड़ कर योगफलो २+१, ८+४, २४+१२, ६४+३२ अर्थात् ३, १२, ३६, ९६ को तीसरी पक्ति के कोठों में बाई ओर से क्रमश रख दिया। इस तरह सर्व कलाएँ ज्ञात होगई।

---

† एक गुरु में दो लघु मात्राएँ होती है। इसी से गुरु अकों को दो से गुणा किया गया है।

वर्णिक:—

१ संस्कृत वृत्त

मन्दाक्रान्ता	
द्रुतविलम्बित	शृंगार, शान्त, करुण
शिखरिणी	
मालिनी	
भुजंग प्रयात	
वंशस्थ विलम	वीर, रौद्र, भयानक
शार्दूल विक्रीडित	

२ हिन्दी वर्णिक—

मिताक्षरी	वीर, करुण
सवैया	करुण, शृंगार, शान्त,
अनंग शेखर	शृंगार, करुण
करखा	वीर
कृपाण	वीर, भयानक, रौद्र
अरिल्ल	
चौपई	
चौपाई	सभी रसों में प्रयुक्त हो सकते हैं।
दोहा	
सोरठा	
घनाक्षरी	

[illegible] और रस

[illegible]

छन्द	रस
मात्रिक	
[illegible] ([illegible])	करुण रस
[illegible] ([illegible])	
[illegible]	
[illegible]	
[illegible]	
हरिगीतिका	
रूपमाला	शान्त रस
लावनी (राधिका)	शृंगार
तोमर	वीर रस
रोला	
चौबोला	
आल्हा	
आकुल ध्वनि	वीर, रौद्र
बरवै	शृंगार, करुण, शान्त

वर्णिक:—

१ संस्कृत वृत्त		
मन्दाक्रान्ता	}	शृंगार, शान्त, करुण
द्रुतविलम्बित		
शिखरिणी		
मालिनी		
भुजंग प्रयात	}	वीर, रौद्र, भयानक
वंशस्थ बिलम		
शार्दूल विक्रीडित		
२ हिन्दी वर्णिक—		वीर, करुण
मिताक्षरी		करुण, शृंगार, शान्त,
सवैया		शृंगार, करुण
अनंग शेखर		वीर
करखा		वीर, भयानक, रौद्र
कृपाण	}	सभी रसों में प्रयुक्त हो सकते हैं।
अरिल्ल		
चौपई		
चौपाई		
दोहा		
सोरठा		
घनाक्षरी		

समस्यापूर्त्ति और छन्द

पूर्त्तिकार सब से पहले देखे कि समस्या के शब्द—यद्यपि अब समस्याओं का युग गया फिर भी इस पर विचार कर लेना, अनुचित नहीं है—समस्यापूर्त्ति करते समय अथवा वर्ण किस छन्द में फिट बैठते हैं, छन्द के निर्णय में उनके तुकान्त विशेष सहायक होते हैं। छन्द चुन लेने के बाद तुकान्तो की खोज करें †। यह सब होने के बाद विषय और उसके अनुकूल रस पर दृष्टिपात करें।

जिस छन्द मे समस्यापूर्त्ति की जाती है उसके चौथे चरण में ही प्राय दी हुई समस्या के शब्द या वर्ण तुकान्त के रूप मे रखे जाते हैं। इसलिए सब से पहले हमें चौथा अथवा अन्तिम चरण ही रच लेना चाहिए। शेष चरणों की पूर्त्ति मे उसी विषय का प्रतिपादन करना चाहिए। ध्यान रहे कि समस्या-पूर्त्ति के चरणों मे ऐसा क्रम रखे कि चरणों में उत्तरोत्तर उत्कर्ष बढता जाय और अन्तिम चरण सब से जोरदार सिद्ध हो। साथ ही अन्तिम चरण में समस्या के शब्द अथवा वर्ण इस कौशल से बैठाने चाहिएँ कि सहज स्वाभाविकता का अभाव न जान पडे। वरन यही मालूम हो कि ये 'शब्द' अथवा वर्ण स्वभावत आगये हैं। इन्हें यहाँ लाने का कोई प्रयत्न नहीं किया गया है।

† अतुकान्त पदों में पूर्त्ति करने पर अन्त्यानुप्रास के तलाशने के झंझट में पड़ने की भी जरूरत नहीं है। विषयानुसार रचना के अन्तिम चरण के अन्त में समस्या के शब्द अथवा वर्ण आजाने ही काफी हैं।

उर्दू के छन्द

वास्तव में उर्दू कोई भिन्न भाषा नहीं है। हिन्दी की जिस शैली में अरबी, फ़ारसी के तत्सम शब्दों की भरमार रहती है आजकल उसे ही उर्दू कहते हैं। जो हो, हमारा अभीष्ट है हिन्दी छन्दों के साथ उर्दू बहरों की तुलना करना।

यदि हिन्दी के छन्द शास्त्रों की दृष्टि से उर्दू के छन्दों पर विचार किया जाय तो यह मान लेने में तनिक भी आपत्ति नहीं की जा सकती कि उर्दू की सारी बहरें हिन्दी के मात्रिक छन्दों के अन्तर्गत आजाती हैं। यही कारण है कि आचार्य भिखारीदास जी ने मात्रा मुक्तकों की कल्पना करके और नयेनये नाम देकर उर्दू के प्रसिद्ध छन्दों को उसमे रख लिया है। हमने भी मात्रा मुक्तकों में इनकी चरचा करदी है।

कुछ विद्वानों का मत है कि उर्दू बहरों की—जो वास्तव मे अरबी, फ़ारसी की बहरें हैं—हिन्दी के मात्रिक छन्दों में गणना करते हुए भी यह मानना ही पड़ता है कि अरबी, फ़ारसी की बहरों की अपनी शैली कुछ भिन्न अवश्य है। और वह उसी तरह जिस तरह कि सस्कृत वृत्तों की। उर्दू के छन्दों को मात्रिक तथा वर्णिक छन्दों मे स्थान देने के लिए हमारे पास इस के सिवाय और कोई चारा नहीं है कि गति के अनुसार निर्णय करें। महाकवि नाथूराम 'शकर' शर्मा ने उर्दू बहरों का नाम रखा है 'राजगीत', मात्रिक अथवा वर्णिक जिस छन्द से किसी राजगीत की गति मिलती है उसी के नाम के साथ

समस्यापूर्त्ति और छन्द

पूर्त्तिकार सब से पहले देखे कि समस्या के शब्द—यद्यपि अब समस्याओं का युग गया फिर भी इस पर विचार कर लेना, अनुचित नहीं है—समस्यापूर्त्ति करते समय अथवा वर्ण किस छन्द में फिट बैठते हैं, छन्द के निर्णय में उनके तुकान्त विशेष सहायक होते हैं। छन्द चुन लेने के बाद तुकान्तों की खोज करें †। यह सब होने के बाद विषय और उसके अनुकूल रस पर दृष्टिपात करें।

जिस छन्द में समस्यापूर्त्ति की जाती है उसके चौथे चरण में ही प्राय दी हुई समस्या के शब्द या वर्ण तुकान्त के रूप मे रखे जाते हैं। इसलिए सब से पहले हमे चौथा अथवा अन्तिम चरण ही रच लेना चाहिए। शेष चरणों की पूर्त्ति में उसी विषय का प्रतिपादन करना चाहिए। ध्यान रहे कि समस्या-पूर्त्ति के चरणों में ऐसा क्रम रखे कि चरणों में उत्तरोत्तर उत्कर्ष बढता जाय और अन्तिम चरण सब से जोरदार सिद्ध हो। साथ ही अन्तिम चरण मे समस्या के शब्द अथवा वर्ण इस कौशल से बैठाने चाहिएँ कि सहज स्वाभोविकता का अभाव न जान पडे। वरन यही मालूम हो कि ये 'शब्द' अथवा वर्ण स्वभावत आगये हैं। इन्हें यहाँ लाने का कोई प्रयत्न नहीं किया गया है।

† अतुकान्त पदों में पूर्त्ति करने पर अन्त्यानुप्रास के तलाशने के झंझट में पड़ने की भी जरूरत नहीं है। विषयानुसार रचना के अन्तिम चरण के अन्त में समस्या के शब्द अथवा वर्ण आजाने ही काफी हैं।

उर्दू के छन्द

वास्तव में उर्दू कोई भिन्न भाषा नहीं है। हिन्दी की जिस शैली में अरबी, फ़ारसी के तत्सम शब्दों की भरमार रहती है आजकल उसे ही उर्दू कहते हैं। जो हो, हमारा अभीष्ट है हिन्दी छन्दों के साथ उर्दू बहरों की तुलना करना।

यदि हिन्दी के छन्द शास्त्रों की दृष्टि से उर्दू के छन्दों पर विचार किया जाय तो यह मान लेने में तनिक भी आपत्ति नहीं की जा सकती कि उर्दू की सारी बहरें हिन्दी के मात्रिक छन्दों के अन्तर्गत आजाती हैं। यही कारण है कि आचार्य भिखारीदास जी ने मात्रा मुक्तकों की कल्पना करके और नये नये नाम देकर उर्दू के प्रसिद्ध छन्दों को उसमें रख लिया है। हमने भी मात्रा मुक्तकों में इनकी चरचा करदी है।

कुछ विद्वानों का मत है कि उर्दू बहरों की—जो वास्तव में अरबी, फ़ारसी की बहरें हैं—हिन्दी के मात्रिक छन्दों में गणना करते हुए भी यह मानना ही पड़ता है कि अरबी, फ़ारसी की बहरों की अपनी शैली कुछ भिन्न अवश्य है। और वह उसी तरह जिस तरह कि संस्कृत वृत्तों की। उर्दू के छन्दों को मात्रिक तथा वर्णिक छन्दों में स्थान देने के लिए हमारे पास इस के सिवाय और कोई चारा नहीं है कि गति के अनुसार निर्णय करें। महाकवि नाथूराम 'शंकर' शर्मा ने उर्दू बहरों का नाम रखा है 'राजगीत', मात्रिक अथवा वर्णिक जिस छन्द से किसी राजगीत की गति मिलती है उसी के नाम के साथ

' राजगीत ' शब्द जोड कर उन्होंने उर्दू बहरों के नाम रखे हैं, जैसे, 'शुद्धगा राजगीत' 'सम्मिश्रणात्मक राजगीत' इत्यादि।

अब यहाँ हम उर्दू छन्दशास्त्र की मोटी मोटी बातें 'सक्षेप में' दिखा कर आगे उन छन्दों के नाम दिये देते हैं, जिनकी गति हिन्दी के छन्दों से मिलती जुलती है ।

छन्दों के नियमो को उर्दू में ' इल्मेउरूज ' कहते हैं। चरणों की सख्या के विचार से एक चरण वाले छन्द को ''मिसरा' दो वाले को ' शेर या बेत ', तीन वाले को ' मुसल्लिस ', चार वाले को ' मुरब्बा ', पाँच वाले को ' मुखम्मस ', छ वाले को ' मुसद्दस ', सात वाले को ' मुसब्बा ', आठ वाले को ' मुसम्मन ', नौ वाले को ' मुतस्सा ', और दस वाले को ' मुअश्शर ', कहते हैं।

छन्द के आरम्भ के 'शेर' को 'मतला' और अन्तिम शेर को 'मकता' कहते हैं।

छन्द के चरणों की जाँचने की रीति को 'तकतीअ' कहते हैं।

रदीफ और काफिया

चरणान्त मे निरन्तर आने वाले शब्द को 'रदीफ' कहते हैं। इसका अर्थ भी सदा एक ही रहता है। रदीफ प्राय मतला के दोनो ही चरणों में आता है, और आगे चलकर प्रत्येक शेर के दूसरे मिशरे मे आता है। यह एक वर्ण मे लेकर कितने ही वर्णों तक का हो सकता है।

रदीफ से पहले आने वाले 'सानुप्रास' शब्द को 'क़ाफ़िया' कहते हैं। यह विषम चरणों में संयोग से परन्तु सम चरणों में तो ज़रूर आया करता है। मतले के दोनों चरणों में ही गाय क़ाफ़िया आता है। यह सदा बदलता रहता है और इसका अर्थ भी बदलता रहता है। रदीफ और क़ाफ़िया समझने के लिए यहाँ एक दो उदाहरण दे दिये जाते हैं —

(१)

बरसों से हो रहा है बरहम "समाँ" "हमारा"।
दुनिया मे मिट रहा है नामो"निशाँ" "हमारा' ॥ १ ॥
कुछ कम नहीं अजल से ख्वाबे"गराँ' "हमारा"।
इक लाश बे कफ़न है 'हिन्दोस्ताँ' 'हमारा" ॥ २ ॥
इल्मो कमाल ईमाँ बरबाद "हो' "रहे हैं"।
ऐशोतरन के बन्दे गफ़लत में "सो" "रहे हैं" ॥ ३ ॥
ऐ सूर हुब्बे क़ौमी इस ख्वाब से 'जगा" "दे"।
भूला हुआ फ़िसाना कानों को फिर सुना" "दे" ॥ ४ ॥
मुर्दा तबीयतों की अफ़सुर्दगी "मिटा" "दे"।
उठतेहुए शरारे इस राख से "दिखा" "दे" ॥ ५ ॥

—चकबस्त

(२)

कह रहा है आसमाँ यह सब 'समाँ" "कुछ भी नहीं'।
पीस दूँगा एक गर्दिश में "जहाँ" "कुछ भी नहीं" ॥
रोती है शबनम कि नैरगे "जहाँ" 'कुछ भी नहीं"।
चीरज़ती हैं बुलबुलें गुल का 'निशाँ" "कुछ भी नहीं" ॥

सख्तवालों का पता देते हैं तख्ते गोर के।
खोज मिलता है यहाँ तक याद "अज़ाँ" "कुछ भी नहीं" ॥
जिनकी नौबत की सदा से गूँजते थे "आसमाँ"।
दम बखुद हैं मक़बरों में "हूँ न हाँ" "कुछ भी नहीं" ॥
जिनके महलों में हज़ारों रंग के फानूस थे।
झाड उनकी क़ब्र पर हैं और "निशाँ" "कुछ भी नहीं" ॥
—अज्ञात

आयो मन हाथ तब आयबो रह्यो न कछू,
भायो गुरु ज्ञान फेरि "भायबो" "कहा रह्यो"।
कहै 'पद्माकर' सुगध की तरंग जैसे,
पायो सतसंग फेरि "पायबो" "कहा रह्यो" ॥
दान बलवान बल विविध वितान बल,
छायो जस पुंज फेरि "छायबो" "कहा रह्यो"।
ध्यायो राम रूप तब ध्यायबो रह्यो न कछू,
गायो राम नाम तब "गायबो" "कहा रह्यो" ॥
—पद्माकर

टिप्पणी—यहाँ पहले छन्द के पहले दूसरे शेरों में 'समाँ', 'निशाँ', 'गराँ', 'हिन्दोस्ताँ', तीसरे मे 'हो', 'सो', चौथे मे 'जगा', 'सुना', और पाँचवें में 'मिटा', 'दिखा'[1] रदीफ़ हैं जो बराबर बदल

[1] जगा, सुना, मिटा, दिखा, आदि मे अकार स्वर होने से ये शब्द रदीफ माने जावेंगे क्योंकि स्वर-साम्य होना भी अनुप्रास के अन्तर्गत है।

रहे हैं और इनके अर्थ भी बदले हुए हैं। और क्रमश 'हमारा 'रहे हैं','दे', क़ाफिया हैं जिनके एक ही अर्थ हैं और जो बराबर चली आ रहे हैं।

इसी तरह दूसरे छन्द में 'समाँ', 'जहाँ', 'निशाँ', 'अजाँ, 'हूँ न हाँ' रदीफ और 'कुछ भी नहीं' काफिया है।

तीसरा छन्द हिन्दी का मनहरण छन्द है। इस में 'भायवो', 'पायवो','छायवो,'गायवो', रदीफ और 'कहा रह्यो' क़ाफिया है।

छन्द में जब अकार के बाद कोई अन्य स्वर आ जाता है तो कभी कभी आवश्यकतानुसार इस अकार का लोप कर देते हैं, और अकार वाले व्यजन में आगे का स्वर मिल जाता है यह 'अलिफे वस्ल का विकार' कहलाता है, जैसे —'उठालूँ सख्तियाँ लाखों कडी 'बात' उठ नहीं सकती।' —बेताब

इस मिसरे में 'बात' के अकार का लोप किया तो 'त' रूप रह गया। इसमें आगे का 'उ मिलाया तो यह रूप हुआ— 'कडी बातुठ नहीं सकती' इसी तरह इसकी 'तक़तीअ' भी की जायगी। ध्यान रहे कि 'ऐन' का उच्चारण भी 'अलिफ' (अ) वत् होता है पर वह लोप नहीं होता।

गण को उर्दू में रुक्न और गणों को अरकान कहते हैं। ये मुतहर्रिक और साकिन इन दो तरह के वर्णों से बनते हैं। जिन वर्णों पर ज़बर (अ), ज़ेर (इ) और पेश (उ) रहते हैं वे वर्ण मुतहर्रिक कहलाते हैं और शब्द के अन्त में रहने वाले स्वर रहित (हलन्त) व्यजन को साकिन कहते हैं। परन्तु निस्बत (सम्बन्ध वाची) वाले प्रयोगों मे पहले शब्द का साकिन वर्ण

भी जेर (इ) लगने के कारण मुतहर्रिक हो जाता है, जैसे — 'गुल्' मे 'गु' मुतहर्रिक और 'ल्' साकिन है परन्तु जब 'गुल-नरगिस—गुले नरगिस पढा जायगा तब 'गुल' का 'ल' भी मुतहर्रिक ही माना जायगा।

जिस प्रकार हिन्दी के छन्दशास्त्र का सारा दारोमदार गुरु-लघु पर है। इसी तरह उर्दू मे साकिन और मुतहर्रिक पर है। जिस तरह लघु गुरु के उलटफेर से हिन्दी मे लघु गुरु और आठ गण मिलकर पिंगल के ये दशाक्षर सारे छन्दशास्त्र के मूल मे व्याप्त रहते हैं। ठीक उसी तरह साकिन और मुतहर्रिकों के हेर-फेर से उर्दू में भी दस अरकान बन जाते हैं, यथा '—

हिन्दी गण	रूप	उर्दू नाम	उदाहरण
मगण	ऽ ऽ ऽ	मफऊलुन	पैमाना
यगण	। ऽ ऽ	फऊलुन	हमेशा, करम कर †
रगण	ऽ । ऽ	फायलुन्	श्याम का, कर करम
सगण	। । ऽ	फयलुन्	जगना, जगकर
तगण	ऽ ऽ ।	मफऊल	बाजार
जगण	। ऽ ।	फऊल	कमाल
भगण	ऽ । ।	फा (फे) लुन	बाहर, बेहतर
नगण	। । ।	फअल	महल, नफर
लघु	।	फ	अ
गुरु	ऽ	फे	आ

† 'करम्', के 'म' का हलवत उच्चारण होने से 'र' गुरु हो जायगा और 'कर' में 'र' का हलवत उच्चारण होने से 'क' का गुरुवत् उच्चारण हो जायगा। इस तरह 'करम कर' का 'करम् कर' होने से 'यगण' का रूप बन जायगा।

किसी 'गुरु' वर्ण के स्थान पर उर्दू में दो लघु वर्ण कर लेने का क़ायदा है, परन्तु इसके साथ ही यह क़ैद भी है कि दो लघु वर्णों के पहले लघु में कोई भी ह्रस्व स्वर रह सकता है, परन्तु दूसरे मे 'इ, उ, ऋ' नहीं रह सकते। केवल अकार (अ) ही रह सकता है। वह भी ऐसा हो कि जिसे हलवत् पढ सकें, जैसे —हम, तुम मे 'म' हलवत 'म्' पढा जा सकता है।

हम पहले बतला आये हैं कि उर्दू के जिस छन्द की गति हिन्दी के किसी मात्रिक छन्द से मिलती हो तो उसे मात्रिक छन्द में मानलो और जिसकी गति वर्णिक छन्द से मिलती हो उसे वर्णिक छन्दों में मानलो। जैसा कि महाकवि नाथूराम शंकर शर्मा ने किया है। हम उदाहरणार्थ यहाँ कुछ ऐसे ही थोडे से छन्दों के उदाहरण दिये देते हैं* —

(१)

१ मफाईलुन मफाईलुन फ़ऊलुन्
ISSS ISSS ISS

कहाँ हो ऐ हमारे राम प्यारे।
मुझे तुम छोडकर बनको सिधारे॥

—भारतेन्दु

टिप्पणी—इसका हिन्दी नाम—'सुमेरु' है।

२ फायलातुन फायलातुन फायलातुन फायलुन
SISS SISS SISS SIS

* उर्दू के छन्द-शास्त्र का पूरा अध्ययन किसी बड़ी पुस्तक से करना चाहिए।

दिल इबादत से चुराना और जन्नत की तलब।
कामचोर इस काम पर किस मुँह से उजरत की तलब॥

टिप्पणी—हिन्दी में इसे 'गीतिका' कहते हैं।

३. मफाईलुन, मफाईलुन, मफाईलुन, मफाईलुन,
ISSS, ISSS, ISSS, ISSS,
अबस अहले-वतन उनसे वतन इम्दाद करते हैं।
जो आधी उम्र तक यूरुप की हिस्ट्री याद करते हैं॥
—बेढब बनारसी

टिप्पणी—यह हिन्दी में 'विधाता' कहलाता है।

४ मफऊल, फायलातुन, मफऊल, फायलातुन।
SSI, SISS, SSI, SISIS
वह पास ही खड़ा है, पर दूर मानता है।
किस भूल में पड़ा है, कुछ भी न जानता है॥
—नाथूराम शंकर शर्मा

टिप्पणी—यह दिग्पाल छन्द है। शंकरजी ने इसका नाम 'सुन्दरात्मक राजगीत' रक्खा है।

५ मुस्तफ्इलुन्, मुस्तफ्इलुन्, मुस्तफ्इलुन्, मुस्तफ्इलुन्।
SSIS SSIS SSIS SSIS
मैं समझता था कहीं भी, कुछ पता तेरा नहीं।
आज 'शंकर' तू मिला तो, कुछ पता मेरा नहीं॥
—'शंकर'

टिप्पणी—हिन्दी में इसे 'हरिगीतिका' कहते हैं। प० नाथूराम शंकर शर्मा ने इस का 'मित्र मिलाप साखी' नाम रक्खा है।

६ मफऊल, मफाईल, मफाईल फऊलुन्
SSI, ISSI, ISSI, ISS

जिसको तेरी आँखों से सरोकार रहेगा।
निलफ़र्ज़ जिया भी तो वो बीमार रहेगा॥

टिप्पणी—हिन्दी में ये 'बिहारी' छन्द कहलाता है।

७ फ़ाइलातुन, फ़ाइलातुन, फ़ायलुन
SISS, SISS, SIS
सुबह गुजरी शाम होने आई 'मीर'।
तू न चेता और बहुत दिन कम रहा॥

—मीर

टिप्पणी—इसे हिन्दी में 'पीयूषवर्ष' कहते हैं।

८ फ़ऊलुन्, फ़ऊलुन्, फ़ऊलुन, फ़ऊलुन्
ISS, ISS, ISS, ISS
समाया है जब से तू आँखों में मेरी।
जिधर देखता हूँ उधर तू ही तू है॥

टिप्पणी—हिन्दी में इसे 'भुजगप्रयात' कहते हैं।

९ फ़ऊलुन्, फ़ऊलुन्, फ़ऊलुन्, फ़अल्।
ISS, ISS, ISS, IS
महादेव को भूल जाना नहीं।
किसी और से लौ लगाना नहीं॥
बनो ब्रह्मचारी पढ़ो वेद को।
द्विजाभास कोरे कहाना नहीं॥

—नाथूराम शंकर शर्मा

टिप्पणी—हिन्दी में इसे 'भुजगी' कहते हैं। 'शंकर' जी ने इसका नाम 'भुजगात्मक राजगीत' रखा है।

१० फ़ऊल, फेलुन् फ़ऊल, फ़ेलुन्,

। ऽ । ऽ ऽ । ऽ । ऽ ऽ

फ़ऊल, फ़ेलुन्, फ़ऊल, फेलुन्

। ऽ । ऽ ऽ । ऽ । ऽ ऽ

कहाँ हैं हम में अब ऐसे सालिक,
कि राह ढूँढी क़लम उठाया।
जो हैं तो ऐसे ही रह गये हैं,
किताब देखी क़लम उठाया ॥

—कविता कौमुदी

टिप्पणी—हिन्दी मे इसे 'यशोदा' कहते हैं।

विषय वर्णन के विचार से उर्दू छन्दों के कुछ नाम

गजल— गजल उन शेरो को कहते हैं, जिन में प्रेम विषयक वर्णन रहते हैं। इन शेरों म प्रेम के विभिन्न भागो पर प्रकाश डाला जाता है। आजकल सौंदर्य, प्रकृति वर्णन, शान्तरस और देश-भक्ति के वर्णन भी गजलों मे किए जाने लगे है।

गजलों की चरण सख्या विषम होती है। साधरणतया पाँच से लेकर ग्यारह चरण तक लिखने की चाल है। पर ग्यारह से अधिक शेर रहने मे भी कोई दोष नहीं है।

क़सीदा—क़सीदा वे शेर हैं जिनमे किसी व्यक्तिविशेष वस्तु या विषय विशेष की स्तुति या निन्दा की जाती है। क़सीदे लिखने वाला अच्छा अनुभवी होना चाहिए।

मसनवी—किसी व्यक्ति विशेष की जीवनी अथवा काल्पनिक कथा को पद्य बद्ध करना ही मसनवी कहलाता है।

मरसिया—जो करुणाजनक (शोकपूर्ण) वर्णन शेरों में लिखे जाते हैं उन्हें मरसिया कहते हैं।

रुबाई—रुबाई चार चरण वाला छन्द विशेष होता है, जिस तरह दोहों में प्राय नीति और उपदेशपूर्ण विषय लिखे जाते हैं ठीक उसी तरह उर्दू में रुबाई भी नीति और उपदेश की बातें लिखने में काम आती है।

रेखता—बोलचाल की भाषा में लिखी जाने वाली कविता को रेखता कहते हैं।

छन्द और अनुप्रास

छन्दो के लक्षणो मे प्राय तुकान्त की बार बार चरचा आई है। और तुकान्त एक प्रकार का अनुप्रास ही है। साथ ही मनहरण आदि छन्द ऐसे हैं जो अनुप्रासों से ही रुचिकर जँचते हैं। इसीलिए अलकार का विषय होते हुए भी इनकी यहाँ सक्षेप मे चरचा कर देना असगत नही जान पडता। अस्तु --

अनुप्रास

केवल वर्ण अथवा स्वर-सहित वर्ण समता को अनुप्रास कहते हैं।

छेक, वृत्ति, लाट, श्रुति और अन्त्य अनुप्रास के भेद हैं। कोई यमक को अलग से शब्दालकार का भेद मानते हैं और कोई इसे भी अनुप्रास ही के अन्तर्गत। जो हो हमारा तात्पर्य यहाँ इन मुख्य शब्दालकारों की चरचा करना है।

१. छेक

जहाँ एक या अनेक वर्णों की स्वर सहित अथवा केवल वर्ण मात्र की समता हो वहाँ छेकानुप्रास होता है, —

'राम राज्य अभिषेक सुनि, हिय हरषे नरनारि।'

टिप्पणी—यहाँ 'राम' और 'राज्य' के 'रा' मे 'आ' स्वर सहित 'र' की और 'हिय' 'हरषे' में केवल 'ह' वर्ण की तथा 'नर नारि' मे 'र' वर्ण की समता है।

२. वृत्ति

जहाँ वृत्तियो के नियमित वर्णानुसार एक या अनेक वर्णों का स्वर सहित या केवल वर्ण का कई बार सादृश्य होता है वहाँ वृत्त्यनुप्रास होता है।

इसके तीन भेद हैं --उपनागरिका परुषा' और कोमला।

अ. उपनागरिका—जिसमे टवर्ग को छोडकर कवर्ग से पवर्ग तक अथवा इन्ही वर्णों के पचम वर्णयुक्त जो वर्ण हो वह माधुर्यगुण प्रकाशक कहलाते है। इनमे से कई वर्णों का कई बार सादृश्य हो वहाँ उपनागरिका वृत्ति होती है —

चातक चलि कोकिल ललित, बोलत मधुरे बोल।
कूकि कूकि केकी कलित, कुजन करत कलोल॥

—अलकार प्रबोध

टिप्पणी—इसमें 'क' की आवृत्ति से 'उपनागरिका वृत्ति' है।

आ. परुषा—ट वर्ग के सब वर्ण तथा 'श,ष'और कवर्गादि के पहले, तीसरे और दूसरे चौथे वर्णों के सयोग ओज प्रकाशक वर्ण कहलाते हैं। ओज प्रकाशक वर्णों की कई बार सादृश्यता मे परुषा-वृत्ति होती है --

जहाँ रुण्डन पै रुण्ड मुण्ड झुण्डनि के झुण्ड कटै
कोटिन वितुण्ड जनु रेन्धुकी समान।
तहाँ सेवक दिसान सीम रुद्र के समान,
हरि शंकर सुजान झुकि झारी किरवान॥

--अलकार प्रबोध

टिप्पणी—इस छन्द में 'ड' की आवृत्ति से 'परुपा-वृत्ति' है।

३. कोमला—ओज और माधुर्य प्रकाशक वर्णों के अतिरिक्त जहाँ अन्य वर्णों की आवृत्ति हो उसे कोमला-वृत्ति कहते हैं —

इहि असार ससार में, सार चार कह ब्यास।
गग-सलिल सत सग सिव-सेवन कासी बास॥
—भारती भूपण

टिप्पणी—इसमे 'स' कार की अनेक आवृत्तियाँ हैं। जो माधुर्य और ओज गुण से रहित हैं।

२ लाट

एक से पद वा पद समूह वा वाक्य एक ही अर्थ में अन्वय की पृथकता से दो या कई बार आवें अर्थात् शब्द और अर्थ में भेद न हो केवल तात्पर्य में भेद हो, उसे लाटानुप्रास कहते हैं —

वाक्यावृत्ति—पूत कपूत तो क्यों धन संचय।
पूत सपूत तो क्यों धन सचय॥
—अलकार-प्रबोध

टिप्पणी—यहाँ शब्द और अर्थ में भेद नहीं है। केवल पूर्वार्द्ध के (कपूत) 'क' और उत्तरार्द्ध के (सपूत) 'स' के साथ अन्वय करने से तात्पर्यों में भिन्नता हुई। यह वाक्य-वृत्ति है।

शब्दावृत्ति—कीन्हहु "कृपा कृपायतन' दीन्हहु दुर्लभ देह।
अब अधमन-सिरमौर लखि, तोरन लगे सनेह॥
—भारती भूषण

टिप्पणी—इस दोहे मे 'कृपा शब्द का लाट है। पहला 'कृपा' समास रहित और दूसरा समास सहित है। पहले का 'कीन्हहु' शब्द से और दूसरे का 'आयतन' से अन्वय होने के कारण तात्पर्य मे अन्तर हुआ है।

४ श्रुति

जहाँ तालु कण्ठ इत्यादि से उच्चरित होने वाले व्यजनो अर्थात् एक स्थानोत्पन्न वर्णों की समता पाई जावे उसे श्रुत्यनुप्रास कहते है —

'जयति द्वारिकाधीस जय, जय सन्तन सताप हर।'

इसमे 'द, स, न, त' आदि दन्त्य अक्षर हैं अत इस पद मे श्रुत्यनुप्रास हुआ।

५ अन्त्यानुप्रास

प्रत्येक छन्द के चरणों के अन्त्याक्षर को तुकान्त कहते हैं। इसी अन्त्याक्षर का नाम अन्त्यानुप्रास है। भाषा में इस तुकान्त के वरण भेद मे छ भेद किये गये हैं। तुक प्रकरण में ४२ वें पृष्ठ पर देखो।

६ यमक

भिन्न भिन्न अर्थ वाले अथवा बिना अर्थ वाले सुनने मे एक से पद-खण्ड, पद वा पद समूह दो वा कई वार आवें तो यमकालकार होता है .—

भजन कह्यो तासों भज्यो, भज्यो न एको वार।
दूर भजन जा मों कह्यो, सो तें भज्यो गँवार॥

—विहारी

यहाँ भजन और 'भज्यो' शब्दों मे यमक है। पहले 'भजन' का अर्थ 'स्मरण करना' और दूसरे का भागना है। इसी तरह पहले 'भज्यो' का अर्थ 'भागने' का है। दूसरे, तीसरे भज्यो शब्द का अर्थ 'स्मरण' भजन है।

छन्द और मुक्तकाव्य

आज कल खडी बोली की कविता का प्रवाह मुक्तकाव्य की ओर है। इसलिए उसकी सक्षेप मे चरचा कर देना असगत नहीं होगा। छन्दशास्त्र की दृष्टि से आजकल के विद्वान् काव्य के मुख्य दो भेद करते हैं—बद्धकाव्य और मुक्तकाव्य। जो काव्य आदि मे अन्त तक विशेष छन्दों की गति से बँधा रहता है उसे बद्धकाव्य कहते हैं फिर चाहे वह तुकान्त हो अथवा अतुकान्त। 'मुक्त' शब्द का अर्थ है 'स्वतन्त्र'। इसलिए मुक्तकाव्य का सीधा सादा यही लक्षण हो सकता है कि 'जो काव्य छन्दों की जकड बदी से मुक्त होता है वही मुक्तकाव्य है। अर्थात् मुक्तकाव्य में न तो अनुप्रासों का बन्धन होता है और न उसे किसी विशेष छन्द की गति मे ही चलना पडता है। इच्छानुसार पक्ति पक्ति में यति गति और मात्राओं का हेरफेर किया जा सकता है, वर्णों की न्यूनाधिकता की जा सकती है। बस यह समझ लेना चाहिए कि मुक्तकाव्य और गद्य मे इतना ही अन्तर रहता है कि मुक्तकाव्य मे एक प्रकार की लय रहती है और गद्य मे नहीं रहती। अधिक स्पष्टता के लिए यहाँ तीनों ही के उदाहरण दे दिये जाते हैं —

१ गद्य

'लक्ष्य सिद्धि के लिए कठिन साधनाओं को आलिङ्गन करना पडता है। वह साधक क्या, जिसने अपने को साधनामय नहीं बना लिया।'

टिप्पणी—यह वाक्य गतिहीन है।

२ गतिमय

हम में बल था, मगर सगठन नहीं था। इसीलिए हम-दबे, और गिर भी गये। बस यही एक अभिशाप हमें ले डूबा।

इस गद्य की गति इस प्रकार है—

हम में बल था मगर सगठन नहीं था,
इसीलिए हम दबे और गिर भी गये।
बस यही एक अपराध हमें ले डूबा।

कविता—

जहाँ रस मे असीम उल्लास,
सुरभि में है मतवाला पन,
भ्रमर के गु जन में सगीत
मलय के झोकों मे कम्पन,
सुधामय वसुधा के भाण्डार
यहाँ हँसते शत शत मधुवन।

—भगवती चरण वर्म्मा

मुक्तकाव्य—

कहाँ ?
मेरा अधिवास कहाँ ?
क्या कहा ?—रुकती है गति जहाँ ?
भला इस गति का शेष—
सम्भव क्या है—
करुण स्वर का जब तक मुझ में रहता आवेश ?

म ने 'मैं' शैली अपनाई
देखा दुखी एक निज भाई,
दुख की छाया पड़ी हृदय में मेरे
झट उमड़ वेदना आई ।

—अनामिका

इन उदाहरणों में गद्य, पद्य और मुक्तकाव्य का अन्तर भलीभाँति स्पष्ट हो गया होगा ।

हम ऊपर बतला आये हैं कि 'ध्वनि या लयप्रधान पद छन्दहीन तथा अन्त्यानुप्रासहीन काव्य को मुक्तकाव्य कहते हैं।' अब केवल यह बताना शेष है कि इसकी रचना के कौन कौन ढग हैं। मुक्तकाव्य मात्रिक तथा वर्णिक दोनो ही प्रकार के लिखे जाते हैं। वर्णिकों मे वगला अमित्राक्षरपन रहता है और मात्रिको मे मात्रिक छन्दो का हिन्दीपन। मात्रिक मुक्तकों में एक प्रकार का राग रहता है। अमित्राक्षरों मे इसका लाना कठिन होता है। यहाँ दोनों का एक एक उदाहरण देकर यह विषय समाप्त किया जाता है—

वर्णिक (अमित्राक्षर)

जयसिंह !
अगर हो शानदार,
जानदार है यदि अश्व वेगवान,
बाहुओं में बहता है

एक बात और ध्यान देने की है कि खड़ी बोली की कविताओं में क्रियाओं और विशेषत संयुक्त-क्रियाओं का प्रयोग कुशलता पूर्वक करना चाहिए, नहीं तो कविता का स्वर शिथिल पड़ जाता है। साथ ही समासों का भी बहुत ही कम प्रयोग करना चाहिए ।

॥ इति ॥

वैतालीय छन्द

जिस प्रकार सस्कृत मे आर्या छन्द अपना स्वतत्र अस्तित्व रखते हैं, उसी तरह वैतालीय छन्द भी अपना अलग स्थान रखते हैं। हिन्दी काव्य म जिस प्रकार अब चुने हुए आर्य्या छन्दो का व्यवहार होन लगा है, आशा है, वैतालीय छन्दों का भी होन लगेगा। अत यहाँ उनकी चर्चा कर दी जाती है।

वैताली †

इसके प्रत्येक दल में चौदह और सोलह के विराम स तीस मात्राएँ होता ह और यह दोहे की तरह दो दलो में लिखा जाता है। विषम चरणों मे छ मात्राओ के बाद गुरु लघु क्रमश और चरणान्त म गुरु रहता है। इसी तरह सम चरणो मे आठ मात्राओं क बाद गुरु लघु का क्रम और चरणान्त में गुरु रखने का नियम है —

---

† वैतालीय छ दों में यह बात विशेष ध्यान देने की है कि इसके विषम चरणों में दूसरी मात्रा तीसरी से और चौथी पाँचवीं से न मिले। अर्थात् पहली मात्रा क बाद तथा तीसरी मात्रा के बाद गुरु वर्ण नहीं पड़ने चाहिएँ। इसे यों भी कह सकते हैं कि विषम चरणों के आदि म सगण नहीं पड़ना चाहिए। इसी तरह सम चरणों में छठी मात्रा सातवीं से न मिले अर्थात् पाँचवीं मात्रा के बाद का वर्ण गुरु न होना चाहिए और सम चरणों के आदि में क्रमश दो जगण भी न पड़ें।

ससार असार स्वप्न सा, कहते त्यागी सत्य है यही।
जग प्यारा नित्य मत्य है, रागी कहते मत्य है यही * ॥
—मान

उदीच्यवृत्ति ×

वैताली छन्द के विषम चरणों के आदि मे दूसरी तीसरी मात्रा मिलाकर गुरु कर देने से अर्थात आदि मे त्रिकल का ध्वजा (I S) रूप रखने से 'उदीच्यवृत्ति' छन्द हो जाता है —

रखो न ऐसी लगी-लगा, बन जाये वैरी अहो सगा।
सखे! मन रखो दया पगा, मत दो अपनों को कभी दगा।
—मान

प्राच्यवृत्ति

वैताली छन्द के सम चरणों के आदि में चौथी पाँचवीं मात्राओं के मिल जाने से अर्थात् आदि में पचकल के इन्द्रासन (I S S), शूर (S I S) और चाप (I I I S) इन रूपों में से किसी को भी रख देने से 'प्राच्यवृत्ति' छन्द बन जाता है —

---

* वैताली के अंत में एक गुरु अधिक कर देने से 'औपच्छन्दसिकम्' छन्द बन जाता है —

ससार असार स्वप्न-सा कहते त्यागी सत्य है यही तो।
जग प्यारा नित्य सत्य है, रागी कहते सत्य है यही तो।
—मान

× वैताली के सम-विषम चरणों में एकाध मात्रा के गुरु-लघु-क्रम के हेर-फेर से इसके उदीच्यवृत्ति, प्राच्यवृत्ति, आपातलिका, प्रवत्तक, अपरान्तिका और चारुहासिनी ये छ भेद हो जाते हैं।

हरि हर भज त्याग राग रे ! गुरु पदों बीच जी रहे लगा।
विषयों से दूर भाग रे ! पूर्ण साधना योग या जगा !

—मान

आपातलिका

वैताली के विषम चरणों में छः मात्राओं के बाद तथा सम चरणों में आठ के बाद एक भगण और दो गुरु रखने से 'आपातलिका' छन्द हो जाता है —

क्यों सच समझा सपने को ? क्यों माया के हाथ बिकाना !
भूला है क्यों अपने को ? जब है जीवन का न ठिकाना !

—मान

प्रवर्त्तक

वैताली के विषम चरणों में उदीच्यवृत्ति के विषम चरण और सम चरणों में प्राच्यवृत्ति के सम चरण रखने से 'प्रवर्त्तक' छन्द बन जाता है —

मलीन हौं हौं अहो हरी ! कहीं कौन विधि पार ह्वै सकौं।
तुम्हीं उधारौ कला धरी, दीन-बन्धु तजि कौन को तकौं ॥

—गदाधर

अपरान्तिका

जिस वैताली में चारों चरण प्राच्यवृत्ति के सम (दूसरे चौथे) चरणों के रहते हैं उसे 'अपरान्तिका' छन्द कहते हैं —

राम नाम जप ले सुधार कै, काम त्याग पहले बिचार कै।
सोक छाँड़ रट ले हँकार कै, राम राम कहले पुकार क ॥

—गदाधर

चारुहासिनी

जिस वैताली में चारों चरण उदीच्यवृत्ति के विषम चरणों के रहते हैं उसे 'चारुहासिनी' छन्द कहते हैं —

(१)

भिड़ें समाजी-सनातनी ! भला ! भली ये तनातनी !
भला करो तो भला भरो, लगा लगी में जला करो ॥

—मान

(२)

खिली हृदय की कली नहीं, सदा कलपता रहा यहाँ !
कभी कामना फली नहीं, सदा जलपता रहा यहाँ !

—मान

वैदिक छंद

छन्द दो प्रकार के कहे गये हैं—लौकिक और वैदिक। सभी मात्रिक छन्द लौकिक कहलाते हैं। वर्णिक छन्दो के दो भेद हैं—एक से लेकर छब्बीस वर्ण तक के वे छन्द जिन के चरणो की व्यवस्था वैदिक नियमो पर की गई है वे वैदिक कहलाते हैं, और जिनके चरणों की व्यवस्था लौकिक नियमों पर की गई है, वे लौकिक छन्द कहलाते है। वैदिक और लौकिक वर्णिको म केवल मुख्य अन्तर यह है कि लौकिक छन्दो म चार चरणो की सख्या का विचार रखा गया है, परन्तु वैदिक छन्दो मे चरण सख्या का कोई नियम नहीं है। वहाँ केवल उस छन्द के वर्णों की पूर्ण सख्या का विचार रखा गया है। फिर एक वर्ण से लेकर कितने ही वर्णों के छन्द हों, परन्तु उनम स्वर होते हैं।

हाँ, गायत्री उष्णिक, अनुष्टुप्, बृहती, पक्ति, त्रिष्टुप्, और जगती नाम के वैदिक छन्दों को आर्प † भी माना गया है। जिनकी चर्चा लौकिक वर्णिको में हो चुकी है।

यद्यपि हिन्दी मे वैदिक छन्दो का चलन नहा है फिर भी छन्दशास्त्र की पोथी में वैदिक छन्दों की थाडी सी चर्चा कर देना अप्रासगिक नहीं होगा।

गायत्री, उष्णिक्, अनुष्टुप्, बृहती, पक्ति, त्रिष्टुप् और जगती ❀ इन सात प्रकार के छन्दो म प्रत्येक की आर्पा, दैवी,

---

† ऋषि प्रणीत।

❀ क्रम ६ गायत्री, ७ उष्णिक्, ८ अनुष्टुप, ९ बृहती, १० पक्ति, ११ त्रिष्टुप् और १२ जगती छन्द के बोधक हैं।

चारुहासिनी

जिस वैताली में चारों चरण उदीच्यवृत्ति के विषम चरणों के रहते है उसे 'चारुहासिनी' छन्द कहते हैं —

(१)

भिड़े समाजी-सनातनी ! भला ! भली ये तनातनी !
भला करो तो भला भरो, लगा-लगी में जला करो !!

—मान

(२)

खिली हृदय की कली नहीं, सदा कलपता रहा यहाँ !
कभी कामना फली नहीं, सदा अलपता रहा यहाँ !

—मान

वैदिक छंद

छन्द दो प्रकार के कहे गये हैं—लौकिक और वैदिक। सर्व मात्रिक छन्द लौकिक कहलाते हैं। वर्णिक छन्दों के दो भेद हैं—एक से लेकर छब्बीस वर्ण तक के वे छन्द जिन के चरणों की व्यवस्था वैदिक नियमों पर की गई है वे वैदिक कहलाते हैं, और जिनके चरणों की व्यवस्था लौकिक नियमों पर की गई है, वे लौकिक छन्द कहलाते हैं। वैदिक और लौकिक वर्णिकों में केवल मुख्य अन्तर यह है कि लौकिक छन्दों में चार चरणों की संख्या का विचार रखा गया है, परन्तु वैदिक छन्दों में चरण संख्या का कोई नियम नहीं है। वहाँ केवल उस छन्द के वर्णों की पूर्ण संख्या का विचार रखा गया है। फिर एक वर्ण से लेकर कितने ही वर्णों के छन्द हों, परन्तु उनमें चरण होते हैं।

हाँ, गायत्री, उष्णिक्, अनुष्टुप, बृहती, पंक्ति, त्रिष्टुप्, और जगती नाम के वैदिक छन्दों को आर्ष † भी माना गया है। जिनकी चर्चा लौकिक वर्णिकों में हो चुकी है।

यद्यपि हिन्दी में वैदिक छन्दों का चलन नहीं है फिर भी छन्दशास्त्र की पोथी में वैदिक छन्दों की थोड़ी सी चर्चा कर देना अप्रासंगिक नहीं होगा।

गायत्री, उष्णिक, अनुष्टुप्, बृहती, पंक्ति, त्रिष्टुप् और जगती * इन सात प्रकार के छन्दों में प्रत्येक की आर्षी, दैवी,

† ऋषि प्रणीत।

* क्रमशः ६ गायत्री, ७ उष्णिक्, ८ अनुष्टुप, ९ बृहती, १० पंक्ति, ११ त्रिष्टुप् और १२ जगती छन्द के थे

आसुरी, प्राजापत्य, याजुषी, साम्नी, आर्ची और ब्राह्मी ये आठ संज्ञाएँ है। इन मे कौन, किस तरह कितने वर्णों के अन्तर्गत है और किसका कौन गोत्र, वर्ण, स्वर और देवता † है, इन सब बातों का एक चक्र द्वारा बहुत ही सक्षेप मे दिग्दर्शनमात्र करा दिया जाता है।

चक्र के कोठे किस तरह बनाने और भरने चाहिएँ पहले इसकी चर्चा करदी जाती है—

एक वर्गाकार कोठा बनाओ। खडी रेखाओ द्वारा उसके आठ बराबर भाग कर डालो। इस तरह आठ खडे कोठे बन जायँगे। अब इन खडे कोठो के भी पडी रेखाओ द्वारा इस तरह विभाग करो कि प्रत्येक खडे कोठे के आठ-आठ बराबर भाग हो जायँ, इस तरह कुल चौसठ कोठे बन जायँगे।

अब इन कोठो के ऊपर खडी रेखाओं द्वारा आठ और खडे कोठे बनाओ और इन खडे कोठों के भी पडी रेखाओं द्वारा इस तरह विभाग करो कि प्रत्येक खडे कोठे के पाँच-पाँच बराबर भाग हो जायँ इस तरह ये भी कुल चालीस कोठे बन जायँगे।

जब इस तरह कोठे बन जावें तब नीचे के चौसठ कोठो वाले चक्र के ऊपर के चालीस कोठों वाले चक्र मे बाई ओर से ऊपर को पहले कोठे में छन्द, दूसरे मे गोत्र, तीसरे में वर्ण, चौथे मे स्वर और पाँचवे में देवता शब्द लिख लो।

---

† वैदिक छन्दों में प्राय सदिग्ध स्थलों पर देवतादि से ही छन्द-निर्णय करना पडता है। अत इनका जानना भी आवश्यक है।

अब 'छन्द' वाले कोठे के सामने दाहिनी ओर को क्रमश गायत्री, उष्णिक्, अनुष्टुप्, बृहती, पंक्ति, त्रिष्टुप् और जगती शब्द लिख लो। और इन नामों के ऊपर क्रमश ६, ७, ८, ९, १०, ११ और १२ अंक लिख लो।

छन्द वाले के ऊपर के गोत्र वाले कोठे के आगे दाहिनी ओर क्रमश अग्नि, वैश्य, काश्यप, गौतम, आंगिरस, भार्गव, कौशिक और वाशिष्ठ लिख लो। इसी तरह वर्ण वाले कोठे के आगे क्रमश सित, सारंग, पिशङ्ग, कृष्ण, नील लोहित और गौर लिखो। स्वर वाले कोठे के आगे क्रमश षड्ज, ऋषभ, गांधार, मध्यम, पंचम, धैवत और निषाद लिखो। देवता वाले कोठे के आगे भी क्रमश अग्नि, सविता, सोम, बृहस्पति, वरुण, इन्द्र और विश्वे देवा लिख लो। इस तरह ऊपर के चालीसों कोठे भर गये। अब इस तरह हर छन्द का गोत्र, वर्ण, स्वर, और देवता मालूम हो जायगा।

अब चौंसठ कोठे वाले चक्र को इस प्रकार भरो कि इस चक्र के अन्त के बायीं ओर वाले सबसे ऊपर के कोठे में आर्षी, उसके नीचे क्रमश दैवी, आसुरी, प्राजापत्या, याजुषी, साम्नी, आर्ची और ब्राह्मी संज्ञाएँ लिखलो।

अब हर संज्ञा के आगे के कोठे इस प्रकार भरे जायँगे—

पहले गायत्री छन्द वाले नीचे के कोठों में से दूसरे में १, तीसरे में १५, चौथे में ८, पाँचवें में ६, छठे में १२, सातवें में १८ का अंक रख दो। गायत्री छन्द का पहला कोठा भरने के लिए

दूसरे, तीसरे, चौथे कोठो के अकों को जोडो। जोड १ + १५ + ८ = २४ होगा। इसे पहले कोठे मे रख दो। अब गायत्री छन्द के सबसे नीचे का आठवाँ कोठा भरना है इसे यों भरो कि गायत्री छन्द के नीचे के पाँचवें, छठे और सातवे कोठों के अकों को जोड लो, इस जोड को आठवें कोठे मे रख दो। इस तरह ६ + १२ + १८ = ३६ होगा इसे आठवे कोठे मे रख दिया।

इस तरह सिद्ध हो गया कि गायत्री छन्द के २४ वर्ण सख्या वाले छन्द को आर्षी, १ वाले की दैवी, १५ वाले की आसुरी, ८ वाले की प्राजापत्य ६ वाले की याजुषी, १२ वाले की साम्नी, १८ वाले की आर्ची और ३६ वाले की ब्राह्मी गायत्री सज्ञा है।

आर्षी, उष्णिक्, अनुष्टुप् आदि के कोठे इस तरह भरो कि खाली कोठे वाले के बाये कोठे के अक मे क्रमश ४ जोडते जाओ तो जगती तक के कोठों मे क्रमश २८, ३२, ३६, ४०, ४४, ४८ अक भर जायँगे। इसी तरह दैवी के कोठों के भरने के लिए अक वाले कोठो मे क्रमश १ जोडते जाओ और दाहिनी ओर के खाली कोठो में क्रमश रखते जाओ इस तरह इसके आगे कोठो में क्रमश २, ३, ४, ५, ६, ७ अक भर जायँगे। आसुरी के खाली कोठो के भरने के लिए भरे हुए कोठे के अन्त में एक घटाते जाओ और आगे के खाली कोठे को भरते जाओ इस तरह इसके आगे के खाली कोठो मे १४, १३, १२, ११, १०, ६ अक आ जायँगे। प्राजापत्य के कोठे भरने के लिए भरे हुए कोठे के अक में क्रमश ४ जोडते जाते हैं। इस तरह इसके कोठों में क्रमश १२, १६, २०, २४, २८, ३२, अक भर जायँगे।

याजुषी के कोठे भरने मे भरे हुए कोठे के अक मे क्रमश १ जोडते जाते हैं। इस तरह इसके आगे के कोठों में क्रमश ७, ८, ६, १०, ११, १२, अक भर जाते हैं। साम्नी के कोठो के भरने में भरे हुए कोठे के अक में दो जोडते हुए आगे के कोठे भरने जाते हैं। इस तरह इसके शेप कोठो म १४, १६, १८, २०, २२, २४ अक भर जाते हैं। आर्ची के कोठों के भरने मे भरे हुए कोठे के अक मे क्रमश ३ जोडते हुए खाली कोठे भरते जाइए, इस तरह इसके कोठो में क्रमश आगे २१, २४, २७, ३०, ३३, ३६ अक भर जायँगे। इसी तरह ब्राह्मी के कोठो के भरने के लिए भरे हुए कोठे के अक मे क्रमश ६ जोडते हुए कोठे भरते जाइए। इस तरह इसके शेप कोठों मे क्रमश ४२, ४८, ५४, ६०, ६६ और ७२ अक भर जायँगे। इस तरह यह ६४ कोठा वाला चक्र पूरा हो जायगा।

अब इस चक्र को ध्यान से देखने मे स्पष्ट हो जाता है कि गायत्री छन्द की सज्ञाओं की भाँति २८ वर्ण सख्या वाले को आर्षी उष्णिक, २ वाले को दैवी, १४ वाले को आसुरी, १२ वाले को प्राजापत्य, ७ वाले को याजुषी, १४ वाले को साम्नी, २१ वाले को आर्ची और ४२ वाले को ब्राह्मी उष्णिक छन्द कहते हैं। इसी तरह अनुष्टुप् बृहती आदि सभी छन्दों की आठ आठ सज्ञाएँ हो जाती हैं। हर सज्ञा की वर्ण सख्या उसके आगे लिखी है।

इस तरह इस सम्पूर्ण चक्र से सहज मे ही ज्ञात हो जाता है कि किस छन्द की कौन सज्ञा, गोत्र, वर्ण, स्वर, देवता आदि हैं।

दूसरे, तीसरे, चौथे कोठों के अकों को जोडो। जोड १ + १५ + ८ = २४ होगा। इसे पहले कोठे मे रख दो। अब गायत्री छन्द के सबमे नीचे का आठवाँ कोठा भरना है इसे यो भरो कि गायत्री छन्द के नीचे के पाँचवें, छठे और सातवें कोठो के अकों को जोड लो, इस जोड़ को आठवें कोठे मे रख दो। इस तरह ६ + १२ + १८ = ३६ होगा इसे आठवें कोठे में रख दिया।

इस तरह सिद्ध हो गया कि गायत्री छन्द के २४ वर्ण संख्या वाले छन्द को आर्षी, १ वाले की दैवी, १५ वाले की आसुरी, ८ वाले की प्राजापत्य ६ वाले की याजुषी, १२ वाले की साम्नी, १८ वाले की आर्ची और ३६ वाले की ब्राह्मी गायत्री सज्ञा है।

आर्षी, उष्णिक्, अनुष्टुप् आदि के कोठे इस तरह भरो कि खाली कोठे वाले के बाये कोठे के अक मे क्रमश ४ जोडते जाओ तो जगती तक के कोठों मे क्रमश २८, ३२, ३६, ४०, ४४, ४८ अक भर जायँगे। इसी तरह दैवी के कोठो के भरने के लिए अक वाले कोठो मे क्रमश १ जोडते जाओ और दाहिनी ओर के खाली कोठो मे क्रमश रखते जाओ इस तरह इसके आगे कोठो मे क्रमश २, ३, ४, ५, ६, ७ अक भर जायँगे। आसुरी के खाली कोठो के भरने के लिए भरे हुए कोठे के अन्त में एक घटाते जाओ और आगे के खाली कोठे को भरते जाओ इस तरह इसके आगे के खाली कोठो मे १४, १३, १२ ११, १०, ९ अक आ जायँगे। प्राजापत्य के कोठे भरने के लिए भरे हुए कोठे के अक में क्रमश ४ जोडते जाते हैं। इस तरह इसके कोठों मे क्रमश १२, १६, २०, २४, २८, ३२, अक भर जायँगे।

गायत्री के २४ वर्ण के छन्द की आर्षी गायत्री सज्ञा, वर्ण मित, स्वर षडज्, गोत्र अग्निवेश्य और देवता अग्नि है। इसी प्रकार अन्य सभी छन्दो के सम्बन्ध मे जाना जा सकता है।

गायत्री, उष्णिक् आदि इन वैदिक छन्दो के, आगे चलकर बहुत भेद-प्रभेद हैं। जैसे गायत्री छन्द के पहले, दूसरे, तीसरे चरणों मे से हर एक ६ वर्ण का और चौथा ७ वर्ण का हो तो उसे, 'आर्षी गायत्री, कहते हैं, और जिसमे तीन ही चरण हो और हर एक मे सात सात वर्ण हो तो उसे 'पादनिचृत गायत्री' कहते हैं। आदि।

प्रतिपादित विषय को और अच्छी तरह हृदयगम कराने के लिए यहाँ कुछ उदाहरण दे दिये जाते हैं।

प्राजापत्या गायत्री—एक पद

(८ वर्ण)

"अग्निर्ज्योति ज्योतिरग्निः"

-वेद

विराट गायत्री– दो पद

(जगती १२ वर्ण + गायत्री ८ वर्ण)

'नृभिर्येमानो हर्यतो विचक्षणो (१)

राजादेवः समुद्रियः" (२)

—ऋग्वेद

वैदिक छन्द-चक्र

५	देवता		अग्नि	सविता	सोम	बृहस्पति	वरुण	इन्द्र	विश्वेदेवा
४	स्वर		षड्ज्	ऋषभ	गान्धार	मध्यम	पञ्चम	धैवत	निषाद
३	वर्ण		सित	सारङ्ग	पिशङ्ग	कृष्ण	नील	लोहित	गौर
२	गोत्र		अग्निवेश्य	काश्यप	गौतम	आङ्गिरस	भार्गव	कौशिक	वाशिष्ठ
१	संज्ञा	छन्द	६ गायत्री	७ उष्णिक्	८ अनुष्टुप्	९ बृहती	१० पङ्क्ति	११ त्रिष्टुप्	१२ जगती
१	आर्षी		२४	२८	३२	३६	४०	४४	४८
२	दैवी		१	२	३	४	५	६	७
३	आसुरी		१५	१४	१३	१२	११	१०	९
४	प्राजापत्या		८	१२	१६	२०	२४	२८	३२
५	याजुषी		६	७	८	९	१०	११	१२
६	साम्नी		१२	१४	१६	१८	२०	२२	२४
७	आर्ची		१८	२१	२४	२७	३०	३३	३६
८	ब्राह्मी		३६	४२	४८	५४	६०	६६	७२

गायत्री के २४ वर्ण के छन्द की आर्षी गायत्री संज्ञा, वर्ण मित, स्वर षड्ज, गोत्र अग्निवेश्य और देवता अग्नि है। इसी प्रकार अन्य सभी छन्दों के सम्बन्ध में जाना जा सकता है।

गायत्री, उष्णिक् आदि इन वैदिक छन्दों के, आगे चलकर बहुत भेद-प्रभेद हैं। जैसे गायत्री छन्द के पहले, दूसरे, तीसरे चरणों में से हर एक ६ वर्ण का और चौथा ७ वर्ण का हो तो उसे, 'आर्षी गायत्री, कहते हैं, और जिसमें तीन ही चरण हों और हर एक में सात सात वर्ण हो तो उसे 'पादनिचृत गायत्री' कहते हैं। आदि।

प्रतिपादित विषय को और अच्छी तरह हृदयगम कराने के लिए यहाँ कुछ उदाहरण दे दिये जाते हैं।

प्राजापत्या गायत्री—एक पद

(८ वर्ण)

"अग्निर्ज्योति ज्योतिरग्निः"

-वेद

विराट गायत्री—दो पद

(जगती १२ वर्ण + गायत्री ८ वर्ण)

'नृभिर्येमानो हर्यतो विचक्षणो (१)
राजादेवः समुद्रियः" (२)

—ऋग्वेद

परोष्णिक्— तीन पद

(पहला पद ८ वर्ण + दूसरा पद ८ वर्ण + तीसरा पद १२ वर्ण

"अग्ने वाजस्य गोमत (१)
ईशानः सहसो यहो (२)
अस्य धेहि जातवेदो महि श्रवः" (३)

—ऋग्वेद

अनुष्टुप्—चार पद

(अनुष्टुप् ८+८+८+८ वर्ण)

"सहस्रशीर्षा पुरुषः (१)
सहस्राक्षः सहस्रपात् (२)
स भूमिं सर्वतः स्पृत्वो (३)
अत्यतिष्ठद्दशाङ्गुलम्" (४)

—यजुर्वेद

पंक्ति—पाँच पद

(पहला पद ४ वर्ण + दूसरा पद ५ वर्ण + तीसरा पद ५ वर्ण + चौथा पद ५ वर्ण + पाँचवाँ पद ६ वर्ण)

अधाह्यग्ने (१)
क्रतोर्भद्रस्य (२)
दक्षस्य साधोः (३)

परिशिष्ट भाग

कुछ और छन्द

मात्रिक

(सम)

मधुरगति

हरिगीतिका और सुगति के मेल से इसका प्रत्येक चरण पैंतीस मात्राओं का रहता है।

वीणे विपची ! मधुर पीडा क्या इसी का नाम है,
टुक बोल दे।
हे पजरित तन्वी ! सुकठी, मौन का क्या काम है,
मुँह खोल दे।
मेरी उँगलियाँ मीड लेते यत्रणा से मर रहीं,
आ कट रहीं।
फिर भी तुझे क्यों छेडने का कष्ट ये हैं कर रहीं,
हट सट रहीं॥

—राय कृष्णदास

प्रसाद-द्वादशपदी

देश का वीज, शक्ति का धाम,
पडा है यहाँ लगाये आस।

सरस हृदयो के मावी वीर,
सींचकर उसका करो विकाम ।
यातनाओं का तर्जन घोर,
विपद्-मेघों का रव गम्भीर ।
करेगा लीन देश की शुद्ध—
धूल मे उसका विमल शरीर ।
गलेगा बीज उगेगा पेड,
बढेगा नव भारत-उद्यान ।
रहेगा प्रति पत्ते पर लेख,
"देश-सम्मान" "आत्म-बलिदान" ।

ठाकुरप्रसाद शर्मा, एम० ए०

नवपदी

'उ जगत में है उसके प्रति न्याय,
जो कि सम ठीक खडा हो जाय ।
पा नहीं तो ले-ले ऊर्ध्व श्वास,
जलाना है जीवन भर गात,
ल पूछता क्या कोई कुछ बात ?
भले ही कर ले अपना नाश ।
भ' मुफ्त मे दे-दे अपनी जान !
किसी को कुछ उसकी परवा न !
मेरी आशा ! मेरे अभिमान !*

—श्रीकृष्ण पाण्डेय

चतुर्दशपदी

(१)

'आ बनी हुई हो एक कुटी सुरसरि के तट पर
लता, द्रुमों की मृदु छाया हो नेह भरी-सी,
कां श्रान्त पथिक आश्रय पा सके वहाँ पर आकर,
सेवा-प्रेम भावनाओं की हो जाग्रत श्री,
क्षा' नित आ उषा कुटिया में मुसक्या भर दे बस,
नित प्रभात का सूर्य ज्योति से पावन कर दे,
त्रिविध समीर बहे नित लाकर अपना सर्वस,
कलिकाओं का खिल खिलकर हँसना मन भरदे,
चरखा चले नित्य ही, भगवत चर्चा हो नित,
दीनों, दुखियों, पतितों के प्रति स्वजन-भाव हो,
उनके दुख से दुखी रहे मेरा दुखिया चित,
आत्म-त्याग से भरा रहूँ ऐसा स्वभाव हो,
प्रभु ! वर दो सहृदयता ही मेरा प्रिय धन हो।
उसकी सतत वृद्धि में ही जीवन-यापन हो॥ †

ब्रजमोहन तिवारी एम० ए०

---

*† आजकल हिन्दी में भी अँग्रेजी के "सॉनेट्स" के ढंग की रचनाएँ लिखी जाने लगी हैं। सॉनेट्स में तुकान्त आदि के मुख्य नियम रहते हैं। उपर्युक्त 'नवपदी' प० श्रीकृष्ण पाण्डेय ने 'प्रमाद' छन्द में और 'चतुर्दशपदी' प० ब्रजमोहन तिवारी एम० ए० ने 'रोला' छन्द में लिखी है।

(२)

'प्रे जग-जीवन की अमर व्याप्ति प्रिय प्रकृति नृत्य हे !
मनुष्यत्व की चिर-जागृति, करुणा-अभिलाषा,
म' सब धर्मों के प्रिय स्फूर्ति तुम पुण्य कृत्य हे !
आत्म-त्याग के चरम विजय की हो परिभाषा,
तुम ईसा की सहनशीलता के सर्वस हो,
गाधी के हो सत्य बुद्ध की दया प्रभामय,
गीता की समबुद्धि ज्ञान के सुयश सरस हो,
तुम ही हो सौन्दर्य्य-तृप्ति, तुम शान्ति सुधा-मय,
दीनो दुखियो को तुम ही तो हृदय लगाते,
'तत्वमसि' का तुमने ही सदेश सुनाया,
राम कृष्ण बन तुम ही जीवन-ज्योति जगाते,
तुम ने ही बन आदिस्रोत सब को अपनाया,
सावित्री के हो सतीत्व, सीता के बल हो,
दमयन्ती के नल हो, आशा के अचल हो।

—प० ब्रजमोहन तिवारी एम्० ए०

अर्द्ध सम

दोहात्मक माणिक †

इसका पूर्वार्द्ध तेरह मात्रा के चण्डिका छन्द का और उत्तरार्द्ध

---

† इस रचना में यह चमत्कार है कि 'चण्डिका' में क्वारे का महत्व, 'आभीर' में व्याहे की क्वारी और 'दोहात्मक माणिक' में व्याह का महत्व दिखलाया गया है। शब्द-योजना कवि की प्रतिभा की द्योतक है।

ग्यारह मात्रा के आभीर छन्द का है। इसको एक प्रकार का दोहा ही कहना चाहिए।

मेरे मन यह भावना, पत्नी करना यार।
उमर अकेले काटना, होना सचमुच ख्वार॥
बड़ा हर्ष यह रात दिन, निज नारी का ध्यान।
जग में रहना नारि बिन, महा कष्ट करि जान॥
भामिन चिन्ता चित्त को, है अति ही सुखदाय।
पावै कभी न मित्र! सो, जो कारा रहि जाय॥
ब्रह्मचर्य जो साधता, बहुत बुरा दरसाय।
मेरे मन को भावता, ब्याहा जो बन जाय॥

—महेन्दु लाल गर्ग

संकर चौपदा

कबीरात्मक चौपदा

इसके पहले, दूसरे चरण सरसी (कबीर) के तीसरा गोपी छन्द का और चौथा चरण ग्यारह मात्रा के 'महेश' छन्द का रहता है।

(१)

चाल ढाल अपनी सब छोड़ी ठटे साहबी ठाट,
गिटपिट बाबू देहातिन में समझें खुद को लाट।
रंग लाई अँगरेजी है,
देखते चले चलो!

(२)

भारतीयता में क्या रक्खा, निरी 'ढोल मे पोल',
दिल दिमाग पच्छाही कर लो, चमडे का क्या मोल!
कहाँ जाती आजादी है!
मत्र यह पढे चलो!

—मान

संकर पंचपदी

रायसेन

इसके पहले-तीसरे-पाँचवें चरण चौपई के, दूसरे-चौथे चरण दोहे के उत्तरार्द्ध चरण होते हैं और अत में एक दोहा रहता है। इस छन्द मे दो दल ऊपर, दो नीचे और बीच में एक चरण चौपई का, इस तरह पाँच पद रहते हैं—

रुकुमिनि रमन श्यामघन कृष्ण, अमल कमल-दल नयन।
दीनबन्धु दामोदर विष्णु, केशव करुना-अयन॥
रिपीकेस ब्रजनाथ गोविन्द
राधावर बाधा हरन, असरन सरन गोपाल।
जय जय जादव स्यामघन, दाता दीनदयाल॥

—भिखारी लाल

संकर मिलिन्दपाद

मत्तमिलिन्दपाद ✓

इसके आदि के दो चरण चौपई के, बीच के दो चौबोले या ताटक के और अत के दो चौपाई के होते हैं—

निकल रही है उर से आह,
ताक रहे सब तेरी राह।
चातक खड़ा चोंच खोले है, सम्पुट खोले सीप खड़ी,
मैं अपना घट लिये खड़ा हूँ, अपनी अपनी हमें पड़ी।
सब को है जीवन की चाह,
ताक रहे सब तेरी राह।

—मैथिलीशरण गुप्त

मात्रा-मुक्तक

संकर मिलिन्दपाद

चौबोलात्मक मिलिन्द पाद

ऐसे मिलिन्दपादों में आदि अन्त में २७ से लेकर ३२ मात्राओं तक के जात चौबोले रहते हैं, मध्य में चौपई या चौपाई, उज्ज्वला जैसे दो चरण रख लेते हैं—

(१)

अब वे नहीं वीर पुंगव हैं जिन के कीर्ति कलाप।
सुन-सुन कर विदेशियों ने भी किये विविध आलाप॥
रे अभाग्य तुझको क्या कहूँ?
मैं अब सिर धुनते ही रहूँ।
भारत था उद्यान, गुणी गण विशद वृक्ष सुखमूल।
काल ग्रीष्म! तू ने क्यों उनको लिया उखाड़ समूल?

टिप्पणी—आद्यन्त सरसी के चरण और मध्य में उज्ज्वला के दो चरण।

(२)

भीष्म-पितामह महावीर-वर सत्य धार्मिक धीर।
जिसने किया महाभारत मे युद्ध परम गभीर॥
नहीं रहा अर्जुन-सा वीर।
कहीं नहीं अब वैसे तीर।
उसने ही अपने बाणों की शय्या बिशद बनायी थी।
जिस पर लेट भीष्म ने रण मे वेला बहुत बितायी थी।

टिप्पणी—आदि के दो चरण सरसी के, मध्य के दो चरण चौपाई के और अंत के दो चरण ताटक के हैं।

(३)

हे प्रताप! अब तव प्रताप के डके कहाँ निशक?
जिन के घोर नाद से होते थे तव शत्रु सशक।
योगी वन तुम वन मे रहे।
घास-पात खाकर दुख सहे॥
प्रण-रक्षा-निमित्त अकबर से तुमने युद्ध मचाया था।
चौबिस वर्ष निरतर लडकर देश अत में पाया था॥
—उमाशकर द्विवेदी

टिप्पणी—आदि के दो चरण सरसी के बीच के दो उज्ज्वला के और अत के दो ताटक के हैं।

वर्णिक

सम

उपजाति वृत्त

मोदक दोधक

इसके आदि के दो चरण मोदक (भ ४) के और अंत के दो दोधक (भ ३+ग २) के हैं। केशव ने इसे 'सुन्दरी' लिखा है —

आउ विभीषण तू रण दूषण।
एक तुही कुल को निज भूषण॥
जूझ जुरे जो भगे भय जी के।
शत्रुहि आनि मिले तुम नीके॥

—केशव

तोटक-मनोरमा*

इस के आदि के दो चरण तोटक (स ४) के और अंत के दो चरण मनोरमा (४ स+ २ ल) के हैं। केशव ने इसे केवल उपजाति लिखा है —

---

* जिस वर्णवृत्त में दो चरण लगातार एक छन्द के और दो दूसरे छन्द के हों तो उसे दोनों छन्दों के नाम से उपजाति कहना चाहिए। उपजाति छन्दों में प्रायः मिलते जुलते ही गण होते हैं। एक-दो वर्णों का ही हेरफेर रहता है।

सिगरे रणमंडल मौंझ गये।
अवलोकत ही अति भीत भये॥
दुहुँ बालन को अति अद्भुत विक्रम।
अवलोकि भयो मुनि के मन सभ्रम॥

—केशव

मालती-अभिराम

इस के आदि के दो चरण मालती (न ज ज र) के और अंत के दो अभिराम (न ज र ल ग) छन्द के हैं—

विपिन विराध बलिष्ट देखियो।
नृप-तनया भय-भीत लेखियो॥
तब रघुनाथ बाण कै हयो।
निज निरवाण पथ को ठयो॥

—केशव

॥ इति ॥

उदाहृत-पद्य-कवि-सूची

शुद्धाशुद्ध-पत्र

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२१	१३	लघु	'ल'
५५	११	इह	हहँ
६६	११	धूम	धूप
७१	३	सफल	सकल
८६	४	लँगड़ी	खड़ी
११०	१७	कम होने से	घट-बढ़ जाने से
१२४	१४	नाना गणनायक	गणनायक वर
१२४	१५	सब जब	सब जग
१२५	१३	लहरों	पहरो
१३२	१	प्रसाद मिलिन्दपाद (उदाहरण ७)	आनन्द 'शंकर मिलिन्दपाद (पृष्ठ १०७)
१३५	५	S S | S | मैं कूद मग ५ + ६	S S | S | मैं कू द मग्न ५ + ६
१३५	७	| S | S S | बड़े बड़े अधु ८ + ५ ६	| S | S S | बड़े च डे अ शु ४ + ८ + ६
१३६	१०	व[१]	व[२]
१३६	१६	म	प
१३६	१८	तीसरी	पहली
१३७	५	सघन-कानन गो	सघन-गहन कानन भी

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१३८	५	दल में मात्राओं के	दल में बीस-बीस मात्राओं के
१४५	१३	×	(भ ग ग)
१५३	१४	की	को
१५४	२०	रदत्त	बद्‌वत
१६१	२०	पारि जगत	पारी जग
१६२	२	(त ज ज ल ग)	(न ज ज ल ग)
१६८	२२	मारि	नारि
१७६	५	हम	हय
१७७	५	मुक्ति	युक्ति
१७७	१५	मालिती	मालिनी
१७६	४	मुख	मुखै
१८२	११	धारज	धीरज
१८६	३	श्रोध	श्रोघ
१८६	६	कहौ गहौ	गहौ गहौ
१८६	६	(त न स स ग)	(न न स स ग)
१८६	१२	खएदा	खएडी
१६१	६	शुभ-रानी	शम्भु-रानी
१६२	१०	माहन	मोहन
१६७	१७	अथ	अब
१६७	१८	यहि	महि
२०७	१३	ज्यों	त्यों
२०६	१२	आज लौ लगीं हैं	आज लौं लौं लगी हैं।
२१०	१८	बिलम	विमल
२१३	५	सुधी न पर्गी	सुधीनि इकी
२१३	१८	मुर्खा	मुर्खा

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२१९	६	नचैं ग्वालिनी	नचैं ग्वालिनि
२२०	१०	त ग	ल ग
२२२	६	भज नद	भजे नँद
२२४	१४	धनि धनि धनि	धनि,धनि धनि धनि
२२७	४	रहित	रहति
२२७	१२	हन	हनैं
२२६	१	आलसा	अलसा
२२६	३	पठाय पठाय कैं	पठान पठाय कै
२३०	१२	रसियों की	रसिकों की
२३०	१६	या	पा
२३४	१४	उ इ इ उ (इमी)	उइउइ (इमी)
२३५	७	गुण श्रेयन्ति	गुणा श्रयन्ति
२३६	१७	सर्वगुण	सर्वे गुणा
२३७	१६	इमको	इम को
		जो निमित्त	जो नीतिमत्त
२३६	१०		
२३६	११	धर्मात्मा है सुधी जो उदार	धर्मात्मा, त्यागी, सुधी जो उदार,
२४०	५	दया³	दया²
२४३	३	चण्ड वृद्धि प्रयात	चण्ड वृष्टि प्रपात
२४५	११	सु आनैन	सु आनैं न
२४५	२०	हों मिले	हौं, मिलै
२४५	२१	कर्त्तन	क्वीतन
२४६	४	सुसदा	अपने
२४६	१४	अरहि अरहि अरि अमित	धरहि धरइ धरि अमित
		कलनि करि	कलनि करि
२४७	२१	का कर	का करँ

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२४७	२३	अशोक मंजरी	अशोकपुष्प मंजरी
२४८	१	का कर	का करै
२४८	१०	जनी भरी	भली भरी
२४८	११	जान	जाल
२४८	१७	पिये	दिये
२४६	१६	टकी लगी निहारियें	टकी लगी तिहारियें
२५१	५	भगण	यगण
२५१	१३	समपद	शब्द पद
२५३	२०	अक्षर	अक्षरों
२५४	१	अमद हँकारे देत	अगद हकारे देत
२५४	४	नन भर के	नैन भर के
२५४	८	मुँदै नन	मुँदै नेन
२५४	१७	जगण (ऽ।ऽ)	जगण (।ऽ।)
२५६	४	दिव्य दह	दिव्य देह
२५६	१२	निकसि जति	निकसि जाति
२५६	१४	प्यारो	प्यारी
२५७	१०	गुरु लघु अथवा लघु रहता है	गुरु लघु रहता है
२५७	१७	भूमि	झूमि
२५७	२१	फुटनोट 'रूप घनाक्षरी' पृष्ठ २५७	फुट नोट 'जलहरण' पृष्ठ २५६
२५७	२२	पद्माकर के उदाहरण में दिये हुए तीसरे छन्द	उदाहरण में दिये हुए पद्माकर के छन्द
२५८	३	आकुल है	आकुल ह्वै
२५८	१०	(३) उदाहरण रूप घनाक्षरीका ३ पृष्ठ २५८	(२) उदाहरण 'जलहरण' का २ पृष्ठ २५६
२५१	१२	दो लघु	दो लघु* (नीचे २५७ पृष्ठ वाला फुटनोट)

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२६०	८	है के	है कि
२६१	१६	मचाय	मचावैं
२६२	१	अनुप्टुप	अनुष्टुप
२६३	४	। और सातवाँ वर्ण सदा लघु रहता है।	। और यदि सातवाँ वर्ण भी गुरु हो तो अच्छा होता है। इसी तरह दूसरे और चौथे चरणका सातवाँ वर्ण सदा लघु रहता है।
२६४	११	गति	यति
२६५	१३	शब्दों	छन्दों
२६६	१	परेउ	परयो
२७०	१०	घर वा	पर वा
२७२	१७	मञ्जुमाधवी को	मञ्जुमाधवी नाम से
२७७	६	उसकी	उनकी
२७६	२१	दिखाते हैं —	दिखाओ।
२६६	१६	चार पंक्तियों में उतने कोठे	छ पंक्तियों में उतने कोठे
३०४	१६	अंकों में	अंकों को
३०६	१	और अब ... पर रखे हैं।	× †
३०८	२०	कोठे	खाली कोठे
३१३	२	आड़ी पंक्ति	पड़ी पंक्ति
३२०	११	म, य	प य
३२०	१३	प म के	प य के
३२०	१६	म के	य के
३२३	६	परन्तु ध्यान रहे कि ... शून्य ही रखा जायगा।	×

† जहाँ × यह चिन्ह है वहाँ समझो कि कुछ नहीं लिखा है।

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
३२५	१८	'अ' में रखा	'ज' में रखा
३२५	१८	'अ' के ५ × २	'ज' के ५ × २
३३२	१२	रूपमाला	सार
३३४	१	पूर्तिकार सबसे पहले देखे कि समस्या के शब्द—यद्यपि अब समस्याओं समय अथवा वर्ण	पूर्तिकार सब से पहले देखे कि समस्या के शब्द अथवा वर्ण
३३५	६	छन्द शास्त्रों	छन्द शास्त्र
३३८	७	और	औ
३३८	१०	पद्माकर	पद्‌माकर
३४६	२१	'र' वर्ण की	'न र' वर्णों की
३५२	७	अपराध	अभिशाप

